In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

LIMITED, NEW DELHI

290

.... 20.......

DEBIT

Vr. No.	PARTICULARS	G. L. Folio	S. L. Folio	CASH Rs.	CASH P.	TOTAL Rs.	TOTAL P.

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

श्री काशी संस्कृत ग्रन्थमाला १६१

॥ श्रीः ॥

वनौषधि-चन्द्रोदय

(AN ENCYCLOPAEDIA OF INDIAN BOTANYS & HERBS)

(सातवाँ भाग)

लेखक—
श्री चन्द्रराज भण्डारी 'विशारद'

चौखम्भा विश्वभारती
चौक (चित्रा सिनेमा के सामने)
वाराणसी-२२१००१

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी-१

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन
श्री शंकर दाजी शास्त्री पदे स्मारक पुस्तकालय
धन्वन्तरी-भवन, नई दिल्ली-२६

१. क्रमांक
२. ग्रन्थनाम वनौषधि - चन्द्रोदय (सातवां भाग)
३. लेखक/सम्पादक श्री चन्द्रराज भण्डारी
४. प्रकाशक चौखम्बा संस्कृत सीरीज, वाराणसी।
५. क्रय तिथि
६. मूल्य

& HERBS)

(सातवां भाग)

[संशोधित व परिवर्द्धित संस्करण]

लेखक—

श्री चन्द्रराज भण्डारी 'विशारद'

चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी-१

१९६६

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

प्रकाशक : चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी
मुद्रक : विद्याविलास प्रेस, वाराणसी
संस्करण : चतुर्थ, वि० सं० २०२५
मूल्य : सम्पूर्ण १–१० भाग रु० ४०–००
प्रत्येक भाग रु० ५–००

© The Chowkhamba Sanskrit Series Office
P. O. Chowkhamba, Post Box 8
Varanasi–1 (INDIA)
1969
Phone : 3145

LX
N69.7

000005

प्रधान शाखा
चौखम्बा विद्याभवन
चौक, पो० बा० ६९, वाराणसी–१
फोन : ३०७६

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

विषय सूची (१)

(हिन्दी और यूनानी नाम)

नाम	पृष्ठ
बदाम	१
बदाम कड़वी	२
बनलौंग	३
बदाम बर्बटी	४
बगुआ	,,
बनमेथी	४, १०
बनचालीता	४
बनखारा	,,
बनकुट्टी	,,
बनमूँग	,,
बननीबू	५, ११
ब्रह्ममंडूकी	५
ब्रह्मदण्डी	८
बन कपास	,,
बसन्ती	,,
बशाम	९
बतम	,,
बरियारा	१०
बदजरीधामन	११
बड़ी कातुस	,,
बरासलपान	,,
बरहंता	१२
बरिंगू	,,
बरोला	,,
बरू	१३
बस्ट्रा	,,
बथुआ	,,
बथुआ बिलायती	१५
बटसिंजल	,,
बट्ठल	,,
बटुला	१६
बटवासी	,,
बरुन	,,
बलाया	१७
बसन्त	१७
बचेटा	१८
बनकोष्ट	,,
बहुफली	१९
बाखिया मेला	२०
बनापू	,,
बगाफटकल	,,
बनकुन्दरौ	,,
बादवर्द	२१
बनमल्लिका	,,
बरारा	२२
बधारा	,,
बनोगाल	,,
बन्दाल	२३
बलूत	,,
बजरठ	२४
बहन	,,
बन अजवान	,,
बकपुष्पी	२५
बसक	,,
बज्र	२६
बड़हल	२९
बरबेल	३०
बगन	,,
बस्तेयाज	,,
बकमून	३१
बलूती	,,
बनसटकी	,,
बलसी	,,
बरनोफ	३२
बरहानी	,,
बरियामिश्री	,,
बरमून	,,
ब्रह्मराक्षस	३३
बरसियान	,,
बरफ	,,
बच्छनाग काला	३४
बच्छनाग दूधिया	३७
बखूर-इमरियम	३८
बरञ्जसफा	३९
बसंता	४०
बलरूल कराद	,,
बखुल ऊल सूदान	,,
बशना	४१
बसलसूरना	,,
बक्षू फरसन	,,
बकला अलबरार	,,
बकाल यहूदिया	४२
बलसू	,,
बल तुल अरज	,,
बलबूस	,,
बंशलोचन	४३
बराँगोम	४४
बाबची	४५
ब्राह्मी	४९
बाँस	५२
बाँस छोटा	५४
बायबिडंग	५५
बायबिडंग (२)	५७
बाबूना	,,
बाबूनागाव	५९
बाकला	,,
बाजरा	६०
बादियान खताई	६१
बातरंग	,,
बातरंग (२)	६२
बागनेला	६३
बाघचूटा	६३
बाराही कन्द	६४
बालू रेत	,,
बारीलूमाए	,,
बाघनख	,,
बाँक	६५
बायकुम्भा	,,
बालपीम	,,
बालखता	,,
बाल	६६
बाकेरीमूल	,,
बालुंज	६७
बारककाँटा	,,
बालू का शाग	,,
बालसन	६८
बालरक्षा	,,
बाइस गूगल	,,
बायलो	,,
बादशाहसालप	,,
बादरंज बोया	७२
बारीक भवरी	६९
बिखमा	,,
बिसफेज	७०
बिल्ली लोटन	,,
बिदारीकन्द	७२
बिदारीकन्द (२)	,,
बिधायरा	७४
बिजिंदक	,,
बिलिंबी	७५
बिंजाई	,,
बिशोनी	,,
बिरमोव	,,
बिना	७६
बिन्दा	,,

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

नाम	पृष्ठ	नाम	पृष्ठ	नाम	पृष्ठ	नाम	पृष्ठ
बिही	७७	बुलु	८२	बेदाना	९४	भारंगी (२)	१०६
बिच्छू	७८	बुन्दार	८३	बेलीपाता	"	भारंगी (३)	१०७
बिंगली	७९	बुयोनून	"	बेंदरली	"	भारंगी (४)	"
बिन्दीमुट्ठी	"	बुरांस	"	बेतिर	९५	भाट	"
बिष्णुकन्द	"	बूरक	"	बेलेडोना	"	भांवर	१०८
बिल्लौर	"	बूमालसी	८४	बेर	९७	भिलावा	"
बिजीमुण्डू	"	बूजिन्दाम	"	बेंत	९९	भिंडी	११६
बिर्मकंवल	८०	बूश	"	बोकड़ी	"	भिल्लर	११७
बिकला	"	बेकरियो	"	बौरीफल	"	भींतगलोड़ी	"
बीबीबूँटी	"	बेलांतर	८५	भंडा	"	भुंईगली	"
बुब्बुरबूँटी	८१	बेल	"	भद्रक	"	भुंई आँवला	११८
बुन्दुक	"	बेलि	९१	भद्रदन्ती	१००	भुंई आँवला लाल	११९
बुहरना	"	बेफोल	"	भसमकन्द	"	भुँई आँवला बड़ा	१२०
बुई	"	बेकरा	"	भद्रवल्ली	"	भुँइचम्पा	"
बुशान	८२	बेदीना	"	भटवासू	"	भुँइकन्द	१२१
बुराचूचा	"	बेरबंज	९२	भाँगरा	१०१	भ्रमरछल्ली	११६
बुकी	"	बेदमुश्क	"	भाँगरा सफेद	१०४		
बुई छोटी	"	बेंगन	९३	भारंगी	१०५		

विषय सूची (२)

(संस्कृत नाम)

नाम	पृष्ठ	नाम	पृष्ठ	नाम	पृष्ठ	नाम	पृष्ठ
अङ्गारवल्लरी	१०५	बनकार्पासी	३	बालुका	६४	भूकूष्माण्ड	७२
अञ्जन	६८	बनभेंडा	१८	बासुका	११७	भूमिकुष्माण्ड	"
अजंत्री	७४	बनमल्लिका	२१	बिडंग	५५	भूमि जम्बुक	१०७
अजांत्री	९९	बर्जरी	६०	बिल्व	८५	भूम्यामली	११८
अमृत फल	७७	बंश	५४	बिष	३४	भूचम्पक	१२०
कंथालू	७५	बंशलोचन	४३	बिष्णु कन्द	७९	भृङ्गराज	१०१
कर्कटी वृक्ष	"	बरुण	१६	बेल्लतरु	३०	भेदनी	१९
कासघ्नी	१२	बरुणा	६७	बेंगना	९३	भद्रदन्ती	१००
कुब्रक	७६	बहुफला	८०	बेला	९४	भद्रवल्ली	"
गन्धमादनी	२३	बदरी	९७	ब्रह्मदण्डी	८	मण्डूकपर्णिका	५
गोपामुद्रा	२२	बलाया	१७	ब्राह्मी	४९	मुद्गपर्णी	४
घृतकरंज	६६	वज्र	२६	भल्लातक	१०८	राजवला	१०
दीर्घमूल	८५	वत्सनाभ	३७	भ्रमरछल्लिका	११६	राजशिम्बी	१००
पीठिका	९२	वाताद	१	भिका	"	लकुच	२९
प्राणनाशक	९५	वास्तुक	१३	भीरुपत्रिका	१८	सोमराजी	४५
बनमेथिका	३	वाराहीकन्द	६४	भूलवंग	३	श्रीवती	९१
		बालू	६७				

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

विषय सूची (३)

(बंगाली नाम)

नाम	पृष्ठ	नाम	पृष्ठ	नाम	पृष्ठ	नाम	पृष्ठ
आशा शौरा	५	बथुवा साग	१३	बामनहाटी	१०५	बोइशकी	६७
उमुल कुची	६६	बरुण	१६	बिलायती बदाम	१	भाइ बिरंग	५५
कलमूचा	१३	बन पाट	१८	बिचाटी	१२	भूरञ्जी	१०७
कुरेल	५४	वत्सनाभ विष	३४	बिलाई कन्द	७२	भुंइ आँवला	११८
केशराज	१०१	बंशलोचन	४३	बिलम्बी	७५	भुंइ चम्पा	१२०
गरीकुलाई	१०७	ब्रह्म मण्डूकी	५	विधादका	७४	भुइनाम	१०७
छागलडण्डी	८	ब्रह्मी साक	४९	बिना	७६	भेटारसू	१००
छागल बेटें	९९	बांस	५२	बुब्बुरबूँटी	८१	भेला	१०८
दाह्न	२९	बाबची	४५	बुरा चूचा	८२	मुगानी	४
परगाच्छा	२३	बालतंग	६१	बेगरी	९७	मेंसाडरी	१३
बनलुंग	३	बाघचूटा	६३	बेनो चेदा	१८	येवरुज	९५
बनमेथी	३, १०	बारककाँटा	६७	बेचिगाछ	८०	रामतोरई	११६
बन चालीता	४	बालुक	,,	बेल	८५	रांग	२६
बरासलपान	११	बाबनोकी	७८	बेगुन	९३	शिमिय	७२
बरोला	१२	बामनोटी	१०६	बोला	९४	सुफेदी खस	१२१
						हापरमली	१००

विषय सूची (४)

(मराठी नाम)

नाम	पृष्ठ	नाम	पृष्ठ	नाम	पृष्ठ	नाम	पृष्ठ
कथील	२६	बदाम	१	ब्राह्मी	४९	भद्रक	९९
कालाबल	७०	बन्दीगरजन	४	वावडिंग	५५	भुंइकोला	७२
कावट	९१	ब्रह्मदण्डी	८	वरधारा	७४	भुंइगली	११७
किरमिरा	५	ब्राह्मी	५	बालुंज	६७	भुइचंपा	१२०
कुसर	२१	वनभेंडा	१८	बारीकभंवरी	६९	भूतकेश	९१
गांठभारंगी	१०७	बघार	२९	वाघरा	७२	भांवर छाल	११६
चाकवत	१३	बच्छनाग	३४	बाल	१००	भारंगी	१०५
डुक्करकन्द	६४	बहुफली	१९	वालू	६४	भेंडा	,,
तुबकड़ी	१०	बांगी	९३	बिरमोव	७५	माका	१०१
थोर आगिया	१२	बांदा	२३	बिब्रू	७८	मुद्रबिम्बो	१३
दोदोला	११	बाजरी	६०	बिब्बा	१०८	मोटी भुंइआँवली	१२०
पानलवंग	३	बायवरना	१६	वेल्लतुर	३०, ८५	लहान शिवण	१२
पुंगड़ी	९९	बाबची	४५	वेफल	८०	लाल मुंडज आवली	११९
वंशलोचन	४३			बेल	९१	हिरनखुरा	१८
बकपुष्पी	२५			बेर	९७		

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

विषय सूची (५)

(गुजराती नाम)

नाम	पृष्ठ	नाम	पृष्ठ	नाम	पृष्ठ	नाम	पृष्ठ
अड़बाऊमंगी	४	पुंगल वेल	९९	बाविडंग	५५	भिलामू	१०८
ओलिया	१००	बदाम	१	बावूना	५७	भिण्डा	११६
कलई	२६	बहुफली	१९	बायबरनो	१६	भींत गलोड़ी	११७
खरसट, भुँइ आँवली	११९	बच्छनाग	३४	बाराही कन्द	६४	भुइचाम्पा	१२०
खड़ ब्राह्मी	५	बरधारो	७४	बाकेरी नु भातु	६६	भोंथ गड़ी	११७
गुलाबी गरियों	६९	ब्रह्मदण्डी	८	बिदारी कन्द	७२	भोय आँवड़ी	११८
घोतेली	१०७	बांदो	२३	बिलंबू	७५	मोटी भुईआंवली	१२०
चील	१३	बांस	५२	बिली	८५	मोटी खाजवणी	१२
छुछड़ी	१८	बांस कपूर	४३	बेकरियो	८४	रींगणा	९३
जंगली मेथी	१०	बाकलो	८०	बोरडी	९७	रेती	६४
नरबांस	५४	बाबची	४५	भांगरो	१०१	लटकेसर नु झाड़	२२
परदेसी भांगरो	४४	ब्राह्मी	४९	भारूंगी	१०७	लकुच	२९

विषय सूची (६)

(रोगानुक्रम से)

नोट—विशेष प्रभावशाली औषधियों के आगे * ऐसे फूल लगा दिये गये हैं।

नाम	पृष्ठ	नाम	पृष्ठ	नाम	पृष्ठ	नाम	पृष्ठ
ज्वर		भुंइ आंवला	११८	बिजी मुंड	७९	ब्रह्ममंडूकी*	५
बनमल्लिका		भ्रमर छल्ली	११६	बीकला	८०	ब्रह्मदण्डी	८
[निमोनिया]	"	**उदर रोग**		बेल*	८५	बाबची*	४५
बन्दाल	२३	बरियारा	१०	भांगरा*	१०१	बांस*	५२
बसक*	२५	बन नींबू	५	**चर्मरोग और रक्तरोग**		बायबिडंग	५५
बच्छनाग*	३४	बसल सूरना	४१	बदाम कड़वी	२	बारतंग	६१
बादवर्द	२१	बाकला (दस्त)	५९	बनचालीता	४	बाइसगूगल	६८
बादरंज बोया	७२	बादियान खताई	६१	बशाम	९	बिसफेज	७०
बायबिडंग	५५	बायबिडंग	५५	बरहंता	१२	बिल्ली लोटन	"
बारतंग २	६२	बारतंग	"	बनमल्लिका	२१	बेदीना	९१
बिल्ली लोटन	७०	बिखमा	६९	बन अजवान*	२४	बेलेडोना*	९५
बिना*	७६	बिदारीकन्द	७२	बरसियान	३३	बेर	९७
बेल	८५	बिग्गली	७९	बरफ*	"	भद्रदन्ती	१००
बेदमुश्क	९२	बिर्जिदक	७४	बच्छनाग	३४	भद्रवल्ली	"
भारङ्गी	१०६	बिदी मुट्ठी	७९	बलबूम	४२	भाँगरा	१०१

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

नाम पृष्ठ

भिलामा १०८

पुरुषजनजननेन्द्रिय सम्बन्धी रोग

बदाम १
बंशलोचन ४३
बरुन (पथरी) १६
बहुफली* १९
वलूती ३१
बकुपुष्पी २५
बङ्ग* २६
वरियामिश्री ३२
बच्छनाग* ३३
वरज्जसफा ३९
वलसू ४२
बादवर्द २१
बाबूनागाव ५९
वालपीम ६५
वाकेरीमूल ६६
बिदारीकन्द* ७२
बिही ७७
वेकरियो ८४
वेल* ८५
बोकड़ी ९९
भिलावा १०८
भिण्डी ११६
भींतगलोड़ी ११७
भुँईगली "
भुँईआँवला ११८

स्त्रीरोग

बाँस ५२
बालपीम ६५
बायलो ६८

बालरोग

बकुपुष्पी २५
बनमल्लिका २१
बरनोफ ३२
वायबिडंग ५५
वायकुम्भा ६५
भाँगरा* १०१

खाँसी

बंशलोचन ४३
बदाम १
बन अजवान २४
बङ्ग २६
ब्रह्मराक्षस ३३
वारतंग ६२
विही ७७
वेलेडोना ९५

दमा

बंशलोचन ४३
बन अजवान २५
बङ्ग २६
बरज्जसफा ३९
वेलेडोना ९५

बवासीर

बगन ३०
बलूती ३१
वरियामिश्री ३२
बायविडंग* ५५
बाराही कन्द ६४
बाकेरी मूल ६६
बिलिंवी ७५
बीकला ८०
भिलावा* १०८

हैजा

भिलावा* १०८

मस्तिष्क रोग

वायविडंग ५५
बाबूनागाव ५९
विल्लीलोटन ७०
ब्राह्मी ४९
बिन्दा ७६
वेल ८५
वेलि ९१
वेलेडोना ९५

वातव्याधियाँ

बधारा २२
बच्छनाग* ३३
वखरुलकाराद ४०
बखुर-ऊल सूदान ४०
बायबिडंग ५५
बाबूना ५७
बाबूना गाव ५९
विसफेज ७०
बिधायरा ७४
वेल ८५
भिलावा* १०८

नेत्ररोग

बाबूना ५७
बारतंग (२) ६२
बिझोर ७९
बीकला ८०
वेरबंज ९२
वेदमुश्क "
भद्रक ९९
भाँगरा १०१

कर्णरोग

वराँगोम ४४
बाबूना ५७
वारतंग ६१
वेल ८५
वेलीपाता ९४

विषविकार

वरमून ३२
बांरीकभँवरी ६९
बारकक्काँटा ६७
बिच्छू ७८
वेलि ९१
वेरबंज ९२
भाँगरा १०१
भिलावा १०८

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

INDEX (7)

(Latin Names)

Aconitum ferox 34
Aconitum napellus 37
Aconitum palmatum 69
Aegle marmelos 85
Allium macleani 68
Artocarpus lagoocha 29
Atropa belladonna 95
Aveceunia officinalis 76
Averrhoa Bilimbi 75
Balsamodendron opobalsamum 68
Balsamodendron pubescens 68
Bambuna Arundinacea 43
Berberis petiolaris B. vulgaris 94
Bischofia javanica 117
Cadaba trifoliata 17
Caesalpinia digyna 66
Caesalpinia jayabo 81
Callicarpa lanata 13
Caltha palustris 12
Canarium commune 3
Carduus nutas 21
Celtis australis 79
Chenopodium album 13
Chenopodium ambrosioides 15
Clerodandron serratum 105
Clerodendron sifhonanthus 106
Colebrookea oppositifolia 76
Convolvulus argentens 99
Corchorus acutagularis 19
Corchorus fascicularis 18
Cotula anthemoides 59
Crataeva religiosa 16
Crotolaria albide 10
Cydonia vulgaris 77
Cyperus iria 82
Dalbergia velubiilis 4
Dendrocalamus strictus 54
Desmodium polycarum 91
Desmonthus synerius 30
Dichroa febrifuga 25
Dolichos lablab 100
Dysoxylum hamiltonii guarea alliaria 99
Echites Dichotoma 100
Eclipta prostrata 101
Embelia ribes 55
Embelia Robusta 57
Equisetum debile 82
Eriolaena quinquelocularis 11
Eupatorium cannabinum 83
Fagopyrum cymosum 22
Fambusa arundinacea 52
Fimbristylis junciformis 79
Flemingia congesta 11
Flemingia tuberosa 75
Garcinia dulcis 79
Geranium nepalense 99
Gisekia pharnacoides 67
Glossogyne pinnatifida 44
Glycine soja, G. hispida 107
Glycosmis cochinehinensis 5
Gmelina asiatica 22
Gouania leptostachya 16
Guaphalium luteoalbum 68
Gyclamen percicum 38
Gymnosporia montana 80
Heliotropium strigosum 104
Herpetis monniera 49
Hibiscus esculentus 116
Hibiscus Tiliaceus 94
Holigarana longifolia 12
Hydrocotyle asiatica 5
Hymenodictyon excelsum 116
Hypericum perforatum 17
Illicium anisatum 61
Indigofera enneaphylla 117
Indigofera glandulosa 84
Ipomaea digitata 72
Ipomoea hispida 108
Ipomoea murieata 69
Jasminum angustifolium 21
Jatropha multifida 100
Juniperus recurva 95
Jussieua suffruticosa 3
Kaempferia rotunda 120
Kochia indica 82
Launaea nudicaulis 15
Leea crispa 4
Lepidium draba 74
Limonia Crenulata 91
Linaria ramosissima 117
Lycopodium clavatum 94
Mangifera caesia 75
Matricaria chamomilla 57
Melilotus indica 3
Melothria perpusilla 20
Mortinia annua 78

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

Mussaenda frondasa 91
Nepeta ruderalis 72
Olea Cuspidata 92
Osbackia nepalensis 20
Otostegia limbata 81
Paramignya longispina 11
Penisetum spicatum 60
Pericampylus incanus 67
Periploca aphylla 22
Phaseolus lunatus 81
Phaseolus trilobus 4
Phaseolus vulgaris 59
Phyllanthus niruri 118
Phyllanthus simplex 120
Phyllanthus urinaria 119
Picrasma quassioides 107
Piscnia aculeata 63
Plantago lanccolata 61
Plantago major 62
Polypodium vulgare 70
Populus euphratica 24
Premna herbacea 107
Prinsepia utilis 91
Prunus Amygdalus 1
Psoralea corylifolia 45
Pterospermun heyneanum 68
Pueraria tuberosa 72
Pulicaria crispa 81
Pycnocycla aucheriana 80
Quercus incana 23
Quercus lamellosa 24
Quercus Pachphylla 11
Rhamnus Purpureus 15
Rhododendron arboreum 83
Rhododendron cinnabarium 82
Rhus semialata 20
Rourea santaloides 74
Salix alba 82
Salix caprea 92
Salix tetoasperma 67
Sauromatum guttatum 100
Saussurea candicans 16
Saussurea obvallata 80
Scaevola frutescens 99
Scilla indica 121
Semicarpus Anacardium 108
Sida carpinifolia 10
Silica 64
Solanum melongena 93
Solanum Spirale 3
Sorghum Halepence 13
Stallum 26
Tacca aspera 64
Tephrosia petrosa 75
Terminalia coriacea 20
Thesparia lampas 8
Tnymus serphyllum 24
Tradescantia axillaris 63
Tragia involucrata 12
Tricholepsis clabcrrima 8
Urena lobata 18
Valeriana officinalis 70
Viscum articulatnm 23
Yandellia erecte 25
Zeneria hookeriana 4
Zizyphus jujuba 97

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

॥ श्रीः ॥

बनौषधि-चन्द्रोदय

(सातवां भाग)

बादाम

नाम—संस्कृत—वाताद, बादाम, नेत्रोपमफल, सुफल, वातवैरी। हिन्दी—बदाम। गुजराती—बदाम। मराठी—वदाम। बंगाल—विलायती वदाम। कोकण—एमंड, एमंडी। उर्दू—बदाम शीरी। अंग्रेजी—Almond Tree। लेटिन—Prunus Amygdalus (प्रूनस एमिगडेल।)। Amygdalus Communis (एमिगडेलस कम्यूनिस)।

वर्णन—बादाम के वृक्ष भारतवर्ष में पैदा नहीं होते। यह यूरोप और तुर्की से यहां आती है। भारतवर्ष में काश्मीर और पंजाब के अन्दर इसकी खेती की जाती है। मगर यहां की बादाम विदेशी बादाम के बराबर उत्तम नहीं होती। इसका वृक्ष मध्यम कद का होता है। इसके पत्ते कुछ भूरे और फूल सफेद होते हैं। इसके फल को सब कोई जानते हैं। इसकी दो जातियां होती हैं। एक मीठी और दूसरी कड़वी।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से बादाम का फल गरम, तेल युक्त, पचने में भारी, कामोद्दीपक, मृदु विरेचक, वात और पित्त को नष्ट करने वाला और गलित कुष्ठ में लाभदायक है। इसका तेल मृदु विरेचक, कामोद्दीपक, मस्तकशूल को दूर करने वाला, पित्त और वात में लाभदायक, शरीर की अन्तरङ्ग जलन को शांत करने वाला और धातु पतन को रोकने वाला होता है।

निघंटु रत्नाकर के मतानुसार बादाम सारक, गरम, भारी, कफकारक, स्निग्ध, सुस्वादु, कसेली, शुक्रजनक, वातनाशक, और उष्णवीर्य होती है। कच्ची बादाम सारक, भारी, पित्तजनक तथा कफ, वात और पित्त के कोप को नष्ट करती है। पकी बादाम मधुर, स्निग्ध, पौष्टिक, शुक्रल, कफकारक, तथा रक्तपित्तआर वातपित्त को नष्ट करती है। सूखी बादाम मधुर, धातुवर्धक, स्निग्ध, बलकारक, पौष्टिक, कफ कारक और वात पित्त को दूर करती है।

विलायती बादाम हिन्दुस्तान में होने वाली बादाम की अपेक्षा अधिक पौष्टिक और तेल पूर्ण होती है। इसकी पेज बनाकर मधुमेह रोग में दी जाती है। इसकी पेज बनाने के पूर्व इसको रात भर गरम पानी में भिगो रखना चाहिये। ऐसा करने से इसमें एक नवीन जाति का सत्व उत्पन्न होता है। यह सत्व पाचन क्रिया के लिए उत्तेजक और सहायक होता है। बादाम की पेज को अधिक नहीं औटाना चाहिये। क्योंकि अधिक औटाने से इसके पाचक द्रव्य का नाश हो जाता है। श्वासेन्द्रिय के रोग तथा जननेन्द्रिय के रोगों में दूसरी औषधियों के साथ बादाम को पीसकर देते हैं। भीगे हुए बादाम, असगंध और पीपर इन तीनों औषधियों की घी, दूध और शक्कर के साथ मिलाकर तैयार की हुई पेज एक उत्तम रसायन है। इस पेज को फीके रङ्ग की स्त्रियों के कमर के दर्द में देने से अच्छा लाभ होता है। इस पेज से स्त्रियों का दूध बढ़ता है तथा श्वेत प्रदर में लाभ होता है। इस पेज की मात्रा २ से ४ तोले तक की है।

बादाम भीतरी और बाहरी दोनों प्रयोगों में कई मतलब से उपयोग में आती है। सिरके के साथ इसको पीसकर उसका प्लास्टर बनाकर स्नायु शूल को दूर करने के लिए लगाया जाता है। इसका अंजन बनाकर नेत्रों की दृष्टि को बढ़ाने के लिये उपयोग में लिया जाता है। बादाम को पीसकर उसका द्रव बनाकर पीपरमेंट के साथ, कफ और खांसी को दूर करने के लिये दिया जाता है। यह मूत्रल और पथरी को गलाने वाला भी माना जाता है और यह यकृत और तिल्ली की बाधाओं को दूर करने के लिए भी उपयोग में लिया जाता है। सिर के अन्दर की जुओं

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

को मारने के लिये यह लगाया जाता है। इसकी बत्ती बना के गर्भाशय में रखने से कष्टप्रद मासिक धर्म और उससे होने वाली वेदना दूर होती है। इसका पुल्टिस दुस्साध्य फोड़े और चर्म रोगों के ऊपर एक बहुमूल्य लेप का काम देता है।

इस पौधे की जड़ धातु परिवर्तक मानी जाती है और यह भीतरी और बाहरी दोनों प्रयोगों के काम में आती है।

बादाम का रस शक्कर के साथ मिला कर कफ और खांसी को दूर कर सकने के लिये दिया जाता है। बादाम को अंजीर के साथ मिला कर मृदु विरेचक और आंतों के दर्द को दूर करने वाले पदार्थ की बतौर दिया जाता है।

यूनानी मत—मीठी बादाम आंतों, मस्तिष्क और सारे शरीर के लिए पौष्टिक वस्तु है। छाती और यकृत की शिकायतें, खांसी और आंतों के शूल के लिये भी यह उपयोगी है। कामोद्दीपक है। इसका जला हुआ छिलका दांतों को मजबूत करता है। इसका तेल मीठा, मृदु विरेचक, मस्तिष्क के लिये पौष्टिक, मूर्छा और यकृत की शिकायतों के लिये लाभदायक, सूखी खांसी को दूर करने वाला, गले को साफ करने वाला और कॉलिक शूल को दूर करने वाला होता है।

कड़वी बादाम की मगज खराब स्वाद वाली, सूजन के लिये लाभदायक, जलोदर, मस्तकशूल और आंखों की कमजोरी में मुफीद होती है। यह ब्रोंकाइटीज, पुराने व्रण, गीली खुजली और पागल कुत्ते के विष पर भी उपयोगी मानी जाती है। कड़वी बादाम का तेल मृदु विरेचक, कृमिनाशक और घाव को अच्छा करने वाला होता है। यह गुदा, यकृत और तिल्ली की वेदना को दूर करता है। पुरातन प्रमेह, कर्णशूल, गले की वेदना और चर्म रोगों में यह उपयोगी होता है।

बादाम गरमी और सरदी में समशीतोष्ण होती है। यह शरीर के लिये एक बहुत अच्छी गिजा है। यह नया खून पैदा करती है और पुराने खून को शुद्ध और साफ करती है। इसका शीत निर्यास शक्कर के साथ सूखी खांसी को आराम करती है। इसको देने से कफ के साथ आने वाला खून बन्द हो जाता है। दमा और निमोनियां में भी यह मुफीद है। मूत्र नाली की सूजन और सुजाक में भी इसे देते हैं। अंजीर के साथ इसको देने से यह कब्जियत को दूर करती है।

मस्तिष्क, कामशक्ति और नेत्रों की दृष्टि को यह ताकत देती है। बादाम की मगज ६ तोले भर मिश्री के साथ रात को सोते वक्त देने से दिमाग को कमजोरी मिट जाती है। आंतों और मसाने के जखम में भी यह लाभदायक है। आमाशय में चिकने दोषों के इकट्ठे होने से जो पेचिश हो जाती है उसमें यह लाभदायक है। इसके सेवन से नया वीर्य पैदा होता है और पुराने वीर्य की गरमी और दोष दूर होते हैं। इसका मुरब्बा खून पैदा करता है और शरीर को मोटा करता है। गुर्दे के लिये यह एक पौष्टिक वस्तु है। बादाम को भून कर खाने से भेदे की सुस्ती और ढीलापन मिटता है।

मीठे बादाम का तेल हलका होता है और दिमाग में बहुत तरी पैदा करता है। सिर दर्द को मिटाता है। सन्निपात और निमोनियां में लाभदायक है। कब्ज को दूर करता है। जुलाब की औषधियों में इसको शामिल करने से उनका प्रतिक्रियात्मक दोष दूर हो जाता है। इसके निरन्तर उपयोग से हिस्टीरिया की बीमारी में बहुत लाभ होता है। गर्भवती स्त्री नौवां महीना लगते ही मीठे बादाम के ताजा तेल को प्रति दिन सबेरे १ तोले की मात्रा में में दूध के साथ या और किसी प्रकार ले लिया करें तो बच्चा बहुत आसानी से पैदा हो जाता है।

बादाम कड़वी

यह तीसरे दर्जे में गर्म और खुश्क होती है। इसको पीसकर सिरके में मिलाकर लगाने से छाजन और खुजली दूर हो जाती है और शरीर के काले दाग निकल जाते हैं। पुराने जख्मों पर इसको लगाने से वे अच्छे हो जाते हैं। दाद, खुजली और पित्ती पर भी इससे लाभ होता है। पथरी में भी यह मुफीद है। इसकी बत्ती को योनि में रखने से मासिक धर्म जारी हो जाता है। पागल कुत्ते के विष में भी इसको ४॥ माशे की मात्रा में देने से लाभ होता ह। इसका लेप भी इसमें फायदा करता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

कड़वे बादाम का तेल सूजन को उतारता है, खुश्की पैदा करता है, आमाशय के दोषों को दूर करता है, दमे में मुफीद है, तिल्ली की सूजन, गुर्दे का दर्द और रुक २ कर पेशाब आने की बीमारी में लाभदायक है। गर्भाशय की सूजन और हिस्टीरिया में भी यह दिया जाता है। पैरों में फटने वाली बिवाई पर भी इसको लगाने से लाभ होता है।

बादाम की गोंद—मीठे बादाम का गोंद गरम, तर, काबिज और गले के दर्द, पुरानी खांसी तथा राजयक्ष्मा में मुफीद है। यह शरीर को मोटा करता है और कफ में खून आने को रोकता है। पथरी में यह मुफीद है।

बनलौंग

नाम—संस्कृत—भूलवंग, जललवंग। हिन्दी—वनलोंग। बंगाल—बनलुङ्ग, लालबनलुङ्ग। मराठी—पानलवंग। तामील—नीलकिराग्रु। अंग्रेजी—Primrose Willow। लेटिन—Jussieua Suffruticosa (जूसिया सफ्रूटीकोसा)।

वर्णन—यह एकवर्षजीवी वनस्पति होती है। इसके क्षुप ४ से ६ फुट तक ऊँचे और खड़े होते हैं। इसमें बहुत डालियाँ होती हैं। यह पानी के किनारे की जमीन पर विशेष पैदा होती है। इसके पत्ते ३ इंच लम्बे, नोक वाले और रुएँदार होते हैं, फूल पीले लोंग के फूलों की तरह दीखते हैं। इसकी फली १ से २ इंच तक लम्बी और रुएँदार होती है। यह वनस्पति सारे भारतवर्ष में तर जमीनों में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—वनलौंग संकोचक, वातनाशक और रक्त संग्राहक होते हैं। बड़ी मात्रा में ये मूत्रल और आनुलोमिक होते हैं। इसके पौधे को कुचलकर मट्ठे में मिलाकर देने से रक्त मिश्रित आँव, रक्तातिसार और किसी भी अंग से होने वाले रक्तस्राव में लाभ होता है। ज्वर में इसकी जड़ का क्वाथ बनाकर पिलाया जाता है, इसका काढ़ा कृमिनाशक और विरेचक भी माना जाता है।

बादाम बर्बटी

नाम—हिन्दी—यूनानी—बादाम बर्बटी, जंगली बादाम। अंग्रेजी—Jawa Almond। लेटिन—Canarium Commune (केनेरियम कोम्यून)

वर्णन—यह भी एक जाति का बादाम का वृक्ष होता है। इसके वृक्ष बंगाल में उगाए जाते हैं। इस बादाम के मगज को यन्त्र में दबा कर एक प्रकार का तेल निकाला जाता है जो आधा जमा हुआ होता है और नारियल के तेल की तरह दीखता है। यह खाने में स्वादिष्ट होता है।

इसकी छाल में से भी एक प्रकार का निर्मल तेल निकाला जाता है। इस तेल में चरपरी गंध आती है और यह जम कर मक्खन के समान हो जाता है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसके गोंद का लेप बनाकर शिथिल घावों पर लगाया जाता है। इसका फल मृदु विरेचक होता है।

कंबोडिया में इसकी जड़ का कंद उत्तेजक, पसीना लाने वाला और रक्तस्राव को बन्द करने वाला माना जाता है। यह प्राचीन ब्रोंकाइटीज, यकृत की तकलीफ, पीलिया, मस्तक शूल और मूत्राशय की सूजन में अन्तः प्रयोग की तरह दिया जाता है। बाहरी प्रयोग में इसका उपयोग राई की पुल्टिस के साथ यकृत की शिकायतों, स्नायु शूल, और संधिवात पर किया जाता है।

बगुआ (मुंगस काजुर)

नाम—सिलहट—बगुआ। पटना—मुगस काजुर। लेटिन—Solanum Spirale (सोलेनग स्पाइरेल)।

वर्णन—यह हमेशा हरी रहने वाली बहुशाखी झाड़ी होती है। इसके फूल सफेद और छोटे होते हैं। यह वनस्पति आसाम, खासिया हिल और पूर्वी बंगाल में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—पटना में इसकी जड़ नशीली और मूत्रल वस्तु की तरह दी जाती है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

वनमेथी

नाम—संस्कृत—वनमेथिका। हिन्दी—वनमेथी। बंगाल—वनमेथी। पंजाब—सिंजी। अंग्रेजी—Small melilot। लेटिन—Melilotus Indica (मेलिलोटस इंडिका)। M. Parviflora (मे० परवी फ्लोरा)।

वर्णन—यह एक छोटी जाति की वर्षजीवी वनस्पति होती है। इसका पौधा मेथी की तरह होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—इस वनस्पति के गुण दोष और इसमें पाये जाने वाले तत्व मेथी के समान ही होते हैं।

मुरे के मतानुसार इसके बीज आंतों के रोग और बच्चों के अतिसार में उपयोगी होते हैं। इसके पौधे का पुल्टिस बनाकर सूजन के ऊपर बांधा जाता है।

बनचालिता

नाम—बङ्गाल—बन चालिता, बनचेल्ट। मलयालम—नेलुगु, नेल्लू। लेटिन—Leea Crispa (लीआ क्रिस्पा)।

वर्णन—यह एक क्षुप जाति की वनस्पति होती है। इसके फूल कुछ हरापन लिये हुए सफेद, फल बेर के समान, काले और मांसल होते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—बंगाल में इसकी जड़ को नारू को अच्छा करने के लिये उपयोग में लिया जाता है। पत्तों को कुचल कर जखम के ऊपर लेप किया जाता है।

बनखारा

नाम—हिन्दी—वनखारा, भाटिया। मराठी—अलई, बंदीगरजन। कुमाऊ—भाटिया। तामील-पुनाली। लेटिन—Dalbergia Velubiilis (डलबेरगिया व्हेल्यूबिलिस)।

वर्णन—यह एक बड़ी जाति की झाड़ी होती है। इसके पत्ते १० से लेकर १५ सेंटीमीटर तक लम्बे और बहुत चमकदार होते हैं। यह वनस्पति कोकण में बहुत पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—यह वनस्पति शीतल, स्नेहन, व्रणशोधक और व्रणरोपक होती है। जीभ के छाले और फोले, गले के फोड़े और मसूड़ों की सूजन में इसके रस से कुल्ले कराये जाते हैं अथवा इसकी छाल को चबाया जाता है। नवीन सुजाक में इसकी जड़ का २ तोला रस जीरे और मिश्री के साथ दिया जाता है। इसके पत्तों का रस मुखक्षत पर लगाया जाता है।

बन कुद्री

नाम—मध्यभारत—बनकुद्री। लेटिन—Zeneria Hookeriana (झेनेरिया हुकरियाना)

गुण, दोष और प्रभाव—कर्नल चोपरा के मतानुसार यह वनस्पति ज्वर और अतिसार में उपयोगी है।

बनमूंग

नाम—संस्कृत—मुद्गपर्णी, काकमुद्गा, शिम्बिपर्णिका, शिम्बिपर्णी, मार्जारगंधिका, वनमुद्गा, वन्या, कुञ्जिका। हिन्दी—बनमूङ्ग, मुगवन, मुंगनी। बंगाल—मुगानि। बम्बई—अर्कमुत, मुकुया। गुजराती—अड़बाऊमंगी, अड़वाड़ा, मगवेल। काठियावाड़—मगमाठी। तामील—नारीपायार, पानी पायार। लेटिन—Phaseolus Trilobus (फेसेओलस ट्रिलोबस)।

वर्णन—यह एक मूङ्ग की जंगली जाति होती है। इसका पौधा मूँग की तरह होता है। इसकी ऊँचाई १ फुट से २ फुट तक होती है। एक फुट की ऊँचाई होने के बाद इसमें लता की तरह तंतु फूटते हैं। इसके पत्ते तीन २ के जोड़े में लगते हैं। इसके फूल पीले रंग के और फलियों की तरह ही होती हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत-आयुर्वेद के मत से बनमूँग शीतल, रूक्ष, कड़वा तथा खाँसी, वातरक्त और ज्वर का नाश करने वाला होता है। यह स्वादिष्ट, हलका, त्रिदोष नाशक तथा संग्रहणी, कृमि, अतिसार, कफ, बवासीर और पित्त को दूर करता है। यह रक्त स्तम्भक भी होता है। इसका काढ़ा जीर्णज्वर में पौष्टिक और नींद लाने वाली वस्तु की तरह दिया जाता है। इसके पत्तों को कुचल कर पुल्टिस की तरह कमजोर आंखों पर बांधते हैं।

चरक और सुश्रुत के मतानुसार इसके बीज सर्प और बिच्छू के विष में उपयोगी होते हैं।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बन नींबू

नाम—हिन्दी—बननीबू, गिरगिट्टी, पोटाली। बंगाल—आशशौरा। बम्बई—किरमिरा। मराठी—किरमिरा। तामील—अनास, कोंजि। तेलगू—गोलुगू, गुञ्जि। लेटिन—Glycosmis Cochinchinensis। (ग्लिकोस्मिस कोचीनचायनेन्सिस)।

वर्णन—यह एक सीधी झाड़ी होती है। इसके पत्ते एक के बाद एक लगते हैं। ये ७.५ से लेकर १८ सेंटिमीटर तक लम्बे और ३.८ से लेकर ६ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं। इसके फूल कुछ पीलापन लिये हुए होते हैं। इसके फल झड़बेर के समान छोटे, अंडाकृति, कुछ लम्बे और पीले तथा नारंगी रंग के होते हैं। यह वनस्पति सारे भारतवर्ष में तथा सीलोन और मलाया में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसकी जड़ का चूर्ण करके शक्कर के साथ देने से मन्द या हलके ज्वर में लाभ होता है। इसकी लकड़ी को कुचल कर पानी के साथ मिलाकर सर्प के विष के दर्प को नष्ट करने के लिये पिलाया जाता है।

टुकिंग में इसके पत्तों का निर्यास बना कर एक पौष्टिक वस्तु की तरह स्त्रियों को डिलीवरी के बाद पिलाया जाता है।

ब्रह्ममण्डूकी

नाम—संस्कृत—मंडूकपर्णिका, ब्रह्ममण्डूकी, भेकपर्णी, दिव्या, मण्डूकी, सुप्रिया, इत्यादि। हिन्दी—ब्रह्ममंडूकी, मंडूकपर्णी, खुलखुड़ी। गुजराती—खड़ ब्राह्मी। बंगाल—ब्रह्ममंडूकी, थोलकुरी। बम्बई—कारिवाना, कारिंगा। दक्षिण—वेजारि। मराठी—ब्रह्मी। तामील—बबासा, वेलारि। तेलगू—बबासा। उर्दू—ब्राह्मी। फारसी—सरदेतुरकस्तान। अरबी—झारनिबा, आरेनियाहिन्दी। इङ्गलिश—Thick leaved Pennywort। लेटिन—Hydrocotyle Asiatica (हायड्रोकाटिल एसियाटिका)।

वर्णन—यह ब्राह्मी से बिलकुल मिलती हुई एक बेल होती है। वर्षा ऋतु में यह सर्वत्र पैदा होती है और जहां पानी मिलता रहता है वहां वर्ष भर तक रहती है। इसकी पतली २ डालियाँ जमीन पर फैलती हैं और डालियों में हर एक जोड़ के स्थान से जड़ें निकल कर जमीन में घुस जाती हैं। इसकी डाली के हर एक जोड़ पर पत्ते, फूल और फल आते हैं। इसके पत्ते अखण्ड, मूत्रपिंड की आकृति के, कंगूरेदार और १ इञ्च से १॥ इञ्च तक लम्बे होते हैं। ये बिलकुल ब्राह्मी के पत्तों की तरह होते हैं मगर उनसे कुछ मोटे होते हैं। फूल छोटे २ और गुलाबी रंग के होते हैं। इन वनस्पति के पत्तों को मसलने से तीव्र गंध आती है। इसका स्वाद कड़वा और तेज होता है, इसके पत्तों के सूखने पर इसकी गंध और स्वाद चला जाता है। औषधि में इसका जड़ समेत पौधा काम में लिया जाता है।

ब्रह्ममंडूकी की बेल ब्राह्मी के समान ही दीखती है। मगर इन दोनों के वर्ग और धर्म बिलकुल अलग २ होते हैं। इसलिये इनको एक दूसरे के बदले में कभी नहीं लेना चाहिये। ब्राह्मी की क्रिया प्रधान रूप से मज्जा-तंतुओं पर होती है और ब्रह्ममंडूकी की क्रिया त्वचा के ऊपर होती है। ब्राह्मी के पत्ते चिकने और पतले, हर एक डाली के जोड़ पर एक से अधिक आते हैं। ब्रह्ममंडूकी के पत्ते खरदरे, कुछ छोटे और एक डाली के जोड़ पर एक एक पत्ता आता है।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत से इसका पौधा कड़वा, मीठा, चरपरा, जल्दी हजम होने वाला, मृदु विरेचक, शीतल, पौष्टिक, धातु परिवर्तक और ज्वर नाशक होता है। यह भूख, कण्ठस्वर और स्मरणशक्ति को बढ़ाता है। श्वेत कुष्ठ, पांडु रोग, अनैच्छिक वीर्यस्राव, रक्तरोग, ब्रोंकाइटीज, सूजन, ज्वर, कफ, पित्त, तिल्ली की वृद्धि, चेचक, दमा और उन्माद में यह लाभदायक है।

ब्रह्ममंडूकी में कुष्ठ नाशक, व्रणशोधक, व्रणरोपक, मूत्रल, दुग्धशोधक, संकोचक, बलवर्धक और रसायन इतने धर्म रहते हैं। त्वचा के ऊपर इसकी प्रधान क्रिया होती है। इसमें रहने वाला तेल त्वचा के मार्ग से बाहर निकलता है। जिससे त्वचा के अन्दर गर्मी पैदा होती है और खुजली चलती है। शुरू २ में इसकी जलन हाथों और पावों में होती है। इसके पश्चात् सारे शरीर भर में ऐसी गरमी मालूम होती है कि कभी २ वह असह्य हो जाती है। इससे

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

त्वचा के अन्दर रहने वाली रक्तवाहनियों का विकास होता है और उनके अन्दर रक्त का प्रवाह जल्दी जल्दी होने लगता है, जिससे त्वचा लाल हो जाती है और बहुत खुजली छूटती है। करीब १ सप्ताह के पश्चात् भूख बढ़ने लगती है। इसके तेल का कुछ अंश मूत्रपिण्ड के मार्ग से भी बाहर निकलता है और उसी समय यह मूत्र के परिमाण को बढ़ा देता हैं।

त्वचा के रोगों में ब्रह्ममंडूकी गुणकारी वस्तु है। उपदंश की द्वितीयावस्था में जब कि रोग का जोर त्वचा पर फूट निकलता है तब इसका प्रयोग बहुत लाभदायक होता है। एक सप्ताह में इसके प्रयोग से त्वचा का मोटापन निकल कर वह मुलायम हो जाती है और उसके ऊपर का विकार सूख कर गिरने लगता है। गंडमाला में इसका लाभ प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होता है। सब प्रकार के प्राचीन चर्म रोग, क्षय के जंतुओं की वजह से पैदा हुए व्रण, श्लीपद इत्यादि रोगों में यह बहुत सफल सिद्ध हो चुकी है। ऐसे सब रोगों में इसका भीतरी और बाहरी दोनों प्रकार का उपचार किया जाता है, कुछ दिनों तक लगातार लेते रहने के पश्चात् इससे सारे शरीर में खुजली छूटने लगती है और चमड़ी लाल हो जाती है ऐसे समय में इसको लेना बन्द कर देना चाहिये और कोई विरेचक वस्तु लेना चाहिये।

ब्रह्ममंडूकी के सेवन से मूत्र की मात्रा बढ़ती है। मगर फिर भी एक मूत्रल औषधि की तरह स्वतंत्र रूप से इसका प्रयोग नहीं करना चाहिये। क्योंकि इससे मूत्रपिण्ड में त्रास और हानि भी पहुँच सकती है। जावा में इसका रस मुलेठी के चूर्ण के साथ मूत्र नलिका के रोगों में दिया जाता है।

कोमान के मतानुसार इसके पत्ते मूत्र और त्वचा सम्बन्धी रोगों में और खास कर गलित कुष्ठ में दिये जाते हैं। गलित कुष्ठ में ये चूर्ण, काढ़ा और शरबत के रूप में दिये जाते हैं। इन पत्तों का शरबत प्राचीन चर्म रोगों के दो बीमारों को दिया गया और थोड़े दिनों के सेवन के पश्चात् उनको कुछ लाभ मालूम हुआ।

बम्बई के अन्दर बच्चों को होने वाली रक्तमिश्रित दस्तों में और पेशाब की जलन में इसके २-४ पत्तों का रस जीरा और मिश्री मिला कर दिया जाता है और इसके पत्तों को पीस कर उनका लेप पेट पर किया जाता है।

मालाबार में इसका पौधा गलित कुष्ठ और उपदंश जनित चर्म रोगों की एक औषधि माना जाता है। ए० हंटर ने मद्रास के गलित कुष्ठ के अस्पताल में गलित कुष्ठ के रोगियों पर इसका प्रयोग किया और इस नतीजे पर पहुँचे कि गलित कुष्ठ के रोग पर यद्यपि इस औषधि का विशेष अधिकार नहीं है मगर इस रोग के लक्षणों को उपशम करने में और रोगी के जनरल स्वास्थ्य को बढ़ाने में यह बहुत अधिक उपयोगी है।

कर्नल चोपरा के मतानुसार ब्रह्ममण्डूकी भारतीय चिकित्सकों के द्वारा भिन्न-भिन्न प्रकार के चर्म रोगों पर बहुत प्राचीन काल से उपयोग में ली जा रही है। यद्यपि इण्डियन फरमाकोपिया में सिर्फ इसके पत्तों का ही सम्मत माना गया है लेकिन अनेकों अन्वेषकों ने इसकी जड़, शाखा, पत्ते और बीजों का औषधि की तरह उपयोग में लिया। क्योंकि इन सभी अंगों में इसका प्रधान और उपयोगी तत्व व्हेलेरिन पाया जाता है। इसके पत्तों की छांह में सुखा लेने से यह तत्व नष्ट नहीं होता। इन पत्तों के चूर्ण का स्टापर्ड बोटल में भर कर रखना चाहिये। यह चूर्ण एक्झिमा, गलित कुष्ठ, उपदंश की द्वितीय अवस्था के व्रण और दूसरे चर्म रोगों पर वेसलाइन में मिलाकर मरहम के रूप में लगाया जाता है और भीतरी प्रयोग में यह एक धातुपरिवर्तक और पौष्टिक वस्तु की तरह ५ से १० ग्रेन-तक की मात्रा में दिन में ३ बार दिया जा सकता है। इसका काढा १ औंस पौधे को १ पिण्ट पानी में १५ मिनट तक उबाल कर तैयार किया जाता है। यह काढ़ा १ से २ औंस तक की मात्रा में दिया जाता है।

यूनानी मत—यूनानी मत से ब्रह्ममण्डूकी का पौधा कड़वा, खराब स्वाद वाला, ज्ञान तंतुओं के लिये उपशामक, निद्राजनक, पौष्टिक, हृदय को बल देने वाला, अग्निवर्धक, शान्तिदायक, मूत्रल तथा स्वर और मस्तिष्क को सुधारने वाला होता है। यह हिचकी, दमा, ब्रोंकाइटीज, पेशाब की जलन और मस्तक शूल को दूर करता है। यह भूख को बढ़ाता है।

ब्रह्ममण्डूकी और वात रक्त—वात रक्त नामक कुष्ठ रोग पर यह वनस्पति किस प्रकार अपनी क्रिया करती है इसके डाक्टर वाइलू ने स्वयं अपने शरीरपर प्रयोग किया है। इस वनस्पति की क्रियाओं का उल्लेख करते हुए उक्त डाक्टर लिखते हैं :—

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

'ब्रह्ममंडूकी को लेनेसे प्रारम्भ में वातरक्त के रोगियों के हाथ-पैर और चमड़ी के ऊपर गर्मी लगने लगती है और खुजली चलती है। थोड़े दिनों के पश्चात् शरीर में इतनी गर्मी बढ़ती है कि सारे शरीर में खुजली चल कर चमड़ी लाल हो जाती है रक्त बहुत तीव्र गति से दौड़ने लगता है और नाड़ी बहुत मजबूत और भरी हुई चलने लगती है। इसके पश्चात् भूख बढ़ती है और पाचन-क्रिया का काम व्यवस्थित रूप से होने लगता है और अधिक समय होने पर उपत्वचा के रोग ग्रसित अंग गिरने लगते हैं और चमड़ी मुलायम तथा एक सरीखी हो जाती है। चमड़ी में से पसीना आने लगता है और उसकी कई दिनों की खोई हुई चेतनाशक्ति फिर जाग्रत हो जाती है। अगर तन्दुरुस्त आदमी को यह वनस्पति दी जाय तो कुछ ही समय में उसका मूत्रल असर होता है, रुधिराभिसरण की गति बढ़ जाती है और अन्त में खुजली पैदा होती है। इस औषधि को ३० रत्ती से अधिक मात्रा में लेने से तंद्रा उत्पन्न होती है और सिर में चस्के चलने लगते हैं। उसके पश्चात् इसको बंद करने पर भी ये उपद्रव कई दिनों तक चलते रहते हैं। मैं क्रमशः इस दवा की मात्रा बढ़ाता गया जिसके परिणाम स्वरूप दो मास के पश्चात् मुझे यह अनुभव हुआ कि बहुत दिनों तक शरीर में एकत्रित होकर एक साथ उपद्रव करने वाला यह एक सख्त विष है।

इस सब अनुभव से मैं इस तथ्य पर पहुँचा हूँ कि ब्रह्ममंडूकी को अगर उचित मात्रा में दिया जाय तो वह रक्ताभिसरण की क्रिया को बहुत उत्तेजित करती है और विशेष रूप से चर्म रोगों पर लाभ पहुँचाती है। पर यदि बड़ी मात्रा में इसको ली जाय तो यह बेहोशी और मूर्च्छा पैदा करती है। इसलिये इसका प्रयोग इस प्रकार करना चाहिये।

ब्रह्ममंडूकी के सारे पौधे को जड़ के साथ उखाड़ कर उसकी जड़ों के लगे हुए कचरे को पानी से धोकर सारे पौधे के छोटे २ टुकड़े करके छाया में सुखा लेना चाहिये। कई वैद्य सिर्फ इसके पत्तों को ही उपयोग में लेते हैं, मगर यह उनकी भूल है। क्योंकि इस वनस्पति में वेलेरिन नामक जो प्रधान तत्व पाया जाता है उसका प्रधान भाग तो इसकी जड़ ही में रहता है। इसलिये इसके सारे पौधे का ही उपयोग करना चाहिये।

वातरक्त के २० से लेकर ४० वर्ष तक की उम्र के रोगियों को प्रथम दो सप्ताह तक इस वनस्पति का चूर्ण प्रति दिन २० ग्रेन की मात्रा में देना चाहिये। उसके पश्चात् हर सप्ताह पांच २ ग्रेन की मात्रा बढ़ाते हुए दसवें सप्ताह में उसको ६० ग्रेन तक पहुँचा देना चाहिये। फिर प्रति सप्ताह पांच २ ग्रेन कम करते हुए १० ग्रेन तक ले आना चाहिये। फिर १ महीने तक इस औषधि को लेना बन्द कर देना चाहिये। जिससे उसका उत्तेजक और ६० ग्रेन तक बढ़ाना होने न पावे। उसके पश्चात् फिर १० ग्रेन से प्रारंभ करके प्रति सप्ताह पाँच २ ग्रेन बढ़ाते हुए जहरीला असर चाहिये और फिर उसी प्रकार कम करना चाहिये।

शुरू २ यह चूर्ण रात्रि को सोते समय गरम पानी के साथ लेना चाहिये। मगर जब इसकी मात्रा ३० ग्रेन तक पहुँच जाय तब सब चूर्ण एक साथ न लेकर उसके दो भाग करके १ भाग सबेरे और एक भाग शाम को लेना चाहिये।

रुधिराभिसरण की गति को तेज करने की अद्भुत शक्ति होने की वजह से यह वनस्पति वात रक्त तथा त्वचा के सभी रोगों में अच्छा लाभ करती है।

डाक्टर बोइलू के उपरोक्त कथन के पश्चात् डाक्टर शार्ट ने भी बतलाया कि सब प्रकार के वात रक्त के रोगों में यह औषधि बहुत लाभ करती है परन्तु बाद के विद्वानों में इस सम्बन्ध में बहुत मतभेद हो गया और उन लोगों ने बतलाया कि इस रोग की सिर्फ प्रारंभिक अवस्था में ही यह लाभ पहुँचाती है। इसकी बढ़ी हुई हालत में यह अधिक उपयोगी नहीं होती। फिर भी खुजली इत्यादि दूसरे पुराने और हठीले चर्म रोगों पर यह बहुत लाभ पहुँचाती है।

डाक्टर बटिन का कथन है कि शरीर किसी भाग में होने वाली खुजली के कई गंभीर केसों में मैंने इस औषधि का प्रयोग किया और थोड़े ही समय में मुझे काफी सफलता मिली। व्यभिचारजनित उपदंश की दूसरी और तीसरी अवस्था में; कंठमाला में और पुराने संधिवात में भी इससे अच्छा लाभ होता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

रासायनिक विश्लेषण—इसके ताजे पत्तों में पाया जाने वाला प्रधान पदार्थ व्हेलेरिन होता है। यह पदार्थ ही इसके सब गुणों का मूल उद्गम स्थान हैं। यह धूप के लगने से उड़ जाता है। इसलिये इसका धूप में सुखाया हुआ पौधा गुणहीन हो जाता है। इस कारण इसको हमेशा छाया में सुखाना चाहिये।

ब्रह्मदंडी

नाम—संस्कृत—ब्रह्मदंडी, कंटपत्रफला, अजादंडी। हिन्दी—ब्रह्मदंडी। मराठी—ब्रह्मदंडी, बोटामोर। बंगाल—छागलदंडी, वामनडंडी। बम्बई—मोटाबोर। गुजराती—ब्रह्मदंडी, फुसियारन। लेटिन—Tricholepsis Claberrima (ट्रिकोलेप्सस ग्लेबेरिमा) }

वर्णन—यह एक ऊँची जाति का क्षुप होता है। इसका पौधा २ से ३ फीट तक ऊँचा होता है। इसके पत्ते बरछी के आकार के, नोकदार और काले धब्बों से युक्त होते हैं। इसके फूल नारंगी रंग के झूमकों में आते हैं। इसके फल कांटेदार होते हैं। इसके फूलों में बाबूना के समान तीव्र गन्ध आती है यूनानी हकीमों के मतानुसार यह वनस्पति ऊंट कटारे की ही एक छोटी जाति होती है। यह वनस्पति पश्चिमी राजपूताना, आबू पर्वत, मध्य-भारत, कोकण और बम्बई प्रेसीडेंसी में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से इसका पौधा गरम और कड़वा होता है। यह कफ, वात, सूजन, श्वेत कुष्ठ और दूसरे चर्म रोगों में लाभदायक है।

ऐसा विश्वास किया जाता है कि यह वनस्पति कामोद्दीपक और मज्जा तंतुओं को बल देने वाली होती है और इसका उपयोग वीर्यसम्बन्धी कमजोरी को दूर करने के लिये किया जाता है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह गरम और खुश्क होती है। यह रक्तशोधक, स्मरण शक्ति को बढ़ाने वाली और जख्मों को भरने वाली होती है। विशेष रूप से यह चर्म रोगों पर लाभदायक है। शरीर पर होने वाले फोड़े फुन्सियों को यह आराम करती है। चेहरे के रंग को साफ करती है। १ तोला ब्रह्मदंडी को ७ काली मिरचों के साथ पानी में पीसकर छानकर ४० दिन तक लगातार पीने से और पथ्य में सिर्फ चने की रोटी का सेवन करने से कुष्ठ रोग में बहुत लाभ होता है। इसको १०॥ माशे की मात्रा में गाय के दूध के साथ सेवन करने से मनुष्य की बुद्धि बढ़ती है। उसकी आवाज साफ होती है। खांसी और मुह की बदबू मिट जाती है। कमर में ताकत आती है। मनुष्य की कामशक्ति और स्तम्भनशक्ति बढ़ती है और शरीर का ढीलापन नष्ट हो जाता है। यह वनस्पति सूजन और बादी की बीमारियों के लिये भी बहुत लाभदायक है।

कुछ लोगों का यह मत है कि ब्रह्मदंडी को पानी में भिगोकर छानकर पीने से पेशाब में खून आना बन्द हो जाता है। पेशाब अपने असली रंग में आने लगता है और उसकी जलन मिट जाती है। नेत्र रोगों में भी यह लाभदायक है। बच्चा पैदा होने के बाद, होने वाले गर्भाशय के दर्द को भी यह मिटाती है।

मात्रा—इसकी मात्रा ४ माशे से १०॥ माशे तक है।

बन कपास

नाम—संस्कृत—बनकार्पासी, भारद्वाजी। हिन्दी—बन कपास। लेटिन—Thesparia Lampas (थेस-पेरियालेंपास)।

वर्णन—यह एक फैलने वाली झाड़ी होती है जो कभी २ दूसरे वृक्षों के आसरे से भी चढ़ती है। इसके पत्ते छोटे, फूल पीले, १ इंच लम्बे और रुई पीले रंग की होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसके गुणधर्म साधारण कपास के पौधे के समान ही होते हैं। इसकी जड़ें और फल सुजाक में दिये जाते हैं।

बसन्ती

नाम—हिन्दी, यूनानी—बसन्ती।

वर्णन—यह एक वनस्पति है। इसके फूल का रंग पीला होता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानीमत से यह ठंडी, स्वाद में तेज तथा रक्तपित्त और कफ के प्रकोप को नष्ट करने वाली होती है। प्यास को बुझाती है। पसीने की बदबू को दूर करती है। आँख, कान और मुँह की बीमारियों में मुफीद है। इसके पौधे को फूल समेत लेकर ४ माशे की मात्रा में पीस कर पीने से रक्त के उपद्रव मिटते हैं।

बशाम

नाम—हिन्दी—यूनानी—बशाम।

वर्णन—यह एक वृक्ष होता है। जो, मक्का, ईराक और मिश्र में पैदा होता है। इसकी छोटी और बड़ी दो जातियां होती हैं। बड़ी जाति का दरख्त शहतूत के दरख्त के बराबर होता है। इसके पत्तों को तोड़ने पर उनमें से एक चिकना और तरल पदार्थ निकलता है। इसका फूल छोटा और पीले रंग का होता है। इसका फल चिलगोजे की तरह होता है। इस फल का बीज कबाबचीनी के बराबर होता है। इसके बीजों को लोग हुब्ब बिलसान के नाम से पहचानते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क होता है। आमाशय को ताकत देता है। इसके पत्ते, फल और लकड़ी को बारीक पीस कर पानी में पका कर बालों पर गाढ़ा २ लेप करके एक रात बंधा रहने दें तो बाल काले हो जाते हैं। इसके पत्ते तिलके तेल में इतने उबाले जायँ कि वे काले पड़ जायँ। फिर इस तेल को बालों पर लगाने से भी बाल काले पड़ जाते हैं।

इसके दूधिया रस को फोड़े और जख्मों पर लगाने से वे सूख जाते हैं। इस रस को आँख में लगाने से आंखों का जाला कट जाता है। इसकी डाली से दतून करने से दांत और मसोड़े मजबूत होते हैं और मुँह से खुशबू आने लगती है। इसके फल या तेल को सिरके के साथ मिलाकर योनि में रखने से बन्ध्या स्त्री गर्भ-धारण के योग्य हो जाती है। इसके तेल या फल को खाने और लगाने से बिच्छू का जहर उतर जाता है। (ख० अ०)

बतम

नाम—हिन्दी, यूनानी—बतम।

वर्णन—यह एक बड़ी जाति का वृक्ष होता है जो पहाड़ों में तथा सख्त पथरीली जमीनों में पैदा होता है। इसके पत्ते लम्बे २ होते हैं। इसके गोंद को अलक बतम कहते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत—यूनानी मत से यह वनस्पति पहले दर्जे में खुश्क और दूसरे दर्जे में गरम होती है। इसका पंचांग कब्ज पैदा करता है और गर्मी बढ़ाता है। इसकी छाल को पानी में उबाल कर उस पानी की धार देने से बाल काले हो जाते हैं। सिरके में इसके पत्तों का चूर्ण मिलाकर बालों में लगाने से बाल बढ़ते हैं। बालों के लिये यह वनस्पति एक बहुत पौष्टिक वस्तु है।

इसके पत्तों और डालियों से सिद्ध किया हुआ तेल गरम और काबिज होता है। इस तेल को शरीर पर मलने से बदन की अकड़न और अर्धाङ्ग में लाभ होता है। इसको हलवे में मिलाकर खाने से कमर, घुटने और कूल्हों का दर्द मिटता है। इसके पीने से पथरी टूट जाती है, पेशाब ज्यादा आता है। गुर्दे और मसाने को शक्ति मिलती है और काम शक्ति बढ़ती है। वह मकड़ी के विष में भी फायदा पहुँचाता है।

बतम का गोंद—बतम के झाड़ से निकलने वाला गोंद बिलकुल मस्तगी के समान होता है। यह दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क होता है। इसमें सूजन उतारने की बहुत अच्छी शक्ति रहती है। यह पाचन-क्रिया को ताकत देता और वहां की गंदगी को साफ करता है। इसको पीसकर सिरके में मिलाकर लगाने से पुरानी सूखी खुजली मिट जाती है। सख्त फोड़ों पर लगाने से फोड़े पक जाते हैं। इसको शहद के साथ मिलाकर खाने से भीतर की सूजन मिट जाती हैं।

खांसी, सीने का दर्द और फेफड़े का जखम भी इसको शहद के साथ खाने से मिट जाता है। ३॥ माशे बतम के गोंद को मुनक्का के साथ निहारे मुंह खाने से बिना किसी तकलीफ के आंतों की सफाई हो जाती है। चिकना कफ कटकर निकल जाता है और पेशाब एवं मासिक धर्म साफ हो जाता है। ४॥ माशे बतम का गोंद खाने

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

से बवासीर के खून का बहना बन्द हो जाता है। इसको शराब के साथ खाने से बिच्छू और दूसरे जहरीले जानवरों का जहर उतर जाता है।

मुजिर—गरम प्रकृति वालोंको। दर्पनाशक—शिकंजबीन। प्रतिनिधि—मस्तगी। मात्रा—४॥ माशा। (ख० अ०)

बनमेथी

नाम—हिन्दी—बनमेथी। मलयालम—पोकोजिजी, लिंगजंतन। लेटिन—Caotolaria Albide (क्रोटोलेरिया अलबिड़ा)।

वर्णन—यह एक छोटी जाति का बहुशाखी पौधा होता है। इसके पत्ते रेशमी और चमकीले होते हैं। इस पौधे के पत्ते, फूल वगैरह मेथी की तरह ही होते हैं। यह वनस्पति सारे भारतवर्ष के गरम प्रांतों में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसकी जड़ विरेचक होती है।

बरियार

नाम—संस्कृत—राजबला, ज्वला, बृहन्नागबला, फणिजिव्हिका, इत्यादि। हिन्दी—बरियारा, पहाड़ी बरियारा। बंगाल—बनमेथी पीला बरेलाशिक्रर। बम्बई—बला, जंगली मेथी। गुजराती-बला, जंगलीमेथी। मराठी—तुबकड़ी, चिकना, तुक्ती। तामिल—वट्टतिरुप्पी, पोनभूसुत्ताई। तेलगू—चित्तीम्। लेटिन—Sida Carpinifolia (सिडा कारपिनीफोलिया)।

वर्णन—यह गंगेरन या नागबला ही की एक उपजाति होती है। इसका पौधा बहुवर्षायु, छोटा, झाड़ीनुमा और बहुत चिकना होता हैं। वर्षा ऋतु के अन्दर यह बहुत अच्छा रहता हैं। इसके पत्ते नरम, बरछी आकार के और कंगूरेदार होते हैं। ये दो-तीन इंच लम्बे होते हैं। इसके फूल पीले और बीज छोटे होते हैं। इसके बीजों में बहुत लुआब रहता हैं। इसकी जड़ पतली, लंबी, गोल, खरदरी, ऊबड़-खाबड़, बाहर से किरमची और भीतर से सफेद होती है। इसका स्वाद कड़वा होता है, औषधिप्रयोग में जड़ ही काम आती है।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से इस वनस्पति की जड़ कड़वी, त्रिदोषनाशक, पाचक और मूत्रल होती हैं। यह ज्वर, शरीर की जलन और अनैच्छिक वीर्यस्राव को दूर करती हैं।

इसकी जड़ पसीना लाने वाली, मूत्रल, पाचक, ज्वरनाशक, पौष्टिक और कृमिनाशक होती हैं। इसकी जड़ का काढ़ा सूंठ के साथ पारी से आने वाले बुखार में दिया जाता है, आंतों के प्राचीन रोग में और उदर शूल में भी इसका उपयोग होता हैं। इसके पत्तों को गरम करके उन पर तेल लगाकर फोड़े फुन्सियों पर बांधा जाता है। इसके पत्तों के रस में शहद मिलाकर संग्रहणी और छाती के दर्द में देते हैं। इसकी जड़ की चाय बनाकर भूख बढ़ाने और पसीना लाने के लिये दी जाती हैं। इसकी जड़ का रस कृमिनाशक औषधि की तरह उपयोग में लिया जाता है।

बंबई की तरफ इस वनस्पति का उपयोग बहुत किया जाता है। इसकी जड़ अजीर्ण रोग के अन्दर दी जाती है। आमवात के अन्दर इसका काढ़ा देने का बहुत रिवाज है। ज्वर में सूंठ के साथ इसका काढ़ा बना कर देने से पसीना छूटता है, पेशाब अधिक होता है और भूख बढ़ती है। सुजाक के अन्दर इसकी जड़ का चूर्ण दूध के साथ दिया जाता है। आंतों के प्राचीन रोगों में, आंतों में शक्ति पैदा करने के लिये इसका स्वरस देते हैं।

इसकी जड़ शीतल-संकोचक, पौष्टिक और स्नायुजाल तथा धातुसम्बन्धी और मूत्रसम्बन्धी बीमारियों में उपयोगी मानी जाती है। खून की खराबी और पित्त दोष के अन्दर भी यह लाभ पहुँचाती है। हिन्दू चिकित्सक इस औषधि को बहुत उत्तम अग्निवर्धक और आंतों की प्राचीन शिकायतों को दूर करने वाली औषधि मानते हैं।

बंगाल के कुछ अनुसंधानकों ने इस वनस्पति की जड़ के ज्वरनाशक गुणों की परीक्षा की। यद्यपि इस सम्बन्ध में उनको संतोष नहीं हुआ। मगर वे इस निश्चय पर पहुँचे कि यह एक उत्तम कटु पौष्टिक पसीना लाने वाली और भूख बढ़ाने वाली औषधि है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

गोश्रा के अन्दर यह औषधि मूत्रल और संधियों की सूजन में बहुत लाभदायक मानी जाती है। सुजाक के रोग में यह एक शांतिदायक वस्तु की तरह उपयोग में ली जाती है। मुसलमान लोग इस औषधि को कामोद्दीपक मानते हैं।

कोकण में इसकी जड़ को गोरैया पक्षी की विष्ठा के साथ मिलाकर बाल तोड़ विस्फोट फोड़ों पर लगाया जाता है।

चरक और सुश्रुत के मतानुसार यह वनस्पति दूसरी औषधियों के साथ सर्प विष के उपचार में काम आती है।

गोल्ड कास्ट में यह वनस्पति कामोद्दीपन के कार्य में ली जाती है। वहां पर मरे हुए बच्चे को गर्भाशय से निकालते समय दाइयां इसके पत्तों को कुचलकर अपने हाथ पर चुपड़ लेती हैं। वे इसके पत्तों को पानी में मिलाकर उसका एनेमा ऐसी स्त्रियों को देती हैं जिनके बच्चे गर्भाशय में रुक जाते हैं। गर्भपात के लिये भी वे इसका बहुधा उपयोग करती हैं।

यूनानी मत—यूनानी मत से इस वनस्पति की सफेद फूलवाली और पीले फूलवाली दो जातियां होती हैं। यह मखजन के मतानुसार गरम और तर और तालीफ के मतानुसार सर्द और खुश्क होती है।

इसकी सफेद जाति के पत्तों को पानी में पीसकर पीने से सुजाक और प्रमेह में लाभ होता है। धातु पुष्ट होती है। मसाने की पथरी गल जाती है। इसके पत्तों को कूट कर पानी में निचोड़ कर पिलाने और सुंघाने से सांप का जहर उतरता है। अगर ताजा पत्ते न मिलें तो सूखे पत्तों को पीसकर सुंघाना चाहिये। सांप का काटा हुआ आदमी बेहोश हो गया हो तो उसकी नाक में इसके पीसे हुए पत्तों को एक नली में भरकर जोर से फूंकना चाहिये, जिससे वह होश में आता है। यह वनस्पति बवासीर में भी लाभ पहुँचाती है। इसकी पीली जाति के पत्तों को पीसकर लेप करने से सूजन बिखर जाती है और दर्द शान्त होता है।

बननींबू

नाम—हिन्दी—सुन्दरबन—बननीबू। मलयालम—लिमानलेलांग। लेटिन—Paramignya Longispina (पेरेमिग्न्या लांगिस्पिना)।

वर्णन—यह वनस्पति सुन्दर बन, मलाया और बरमा में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—सुन्दर वन में इसका फल कॉलिक उदर शूल को दूर करने के लिये दिया जाता है।

बदजरीधामन

नाम—बम्बई—बदजरीधामुन। छोटा नागपुर—भावड। कोकण—बुजारीदामु। तामील—मालमतुत्ती। लेटिन—Eriolaena Quinquelocularis (इरियोलेना क्विंकेलोकूलेरिस)।

वर्णन—यह एक छोटी जाति का वृक्ष होता है जो कि बम्बई प्रेसीडेंसी, कोकण, पश्चिमी घाट और मद्रास प्रेसीडेंसी में पैदा होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसकी जड़ का पुल्टिस बनाकर घावों को भरने के काम में लेते हैं।

बड़ा कातुस

नाम—नेपाल—बड़ा कातुस, खिगोरी कातुस, सुङ्गारी कातुस। लेटिन—Quercus Pachphylla (करकस पचफिला)।

वर्णन—यह एक बड़ी जाति का वृक्ष होता है जो सिक्किम, मनीपुर और नेपाल में पैदा होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—सिक्किम में इसकी छाल एक संकोचक द्रव्य की तरह काम में ली जाती है।

बरासलपान

नाम—हिन्दी—बरासल पान, भालिया, कुसुट, सुत्ता। बंगाल—बरासलपान, भालिया। मराठी—दोदोला। संथाल—बिरबुट। लेटिन—Flemingia Congesta (फ्लेमिंगिया कांगेस्टा)।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

वर्णन—यह एक छोटी जाति की सीधी खड़ी रहने वाली झाड़ी होती है। बरसात के पश्चात् यह वनस्पति पदा होती है। इसके पत्ते गहरे हरे, चमकीले और तीन २ साथ लगने वाले होते हैं। इसके फूल किरमची रंग के होते हैं। इसकी हर एक फली में एक २ बीज होता है जो गोल और काला होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—संथाल जाति के लोग इसकी जड़ का लेप बना कर व्रण और गले की सूजन को दूर करने के लिए लगाते हैं।

बरहंता

नाम—संस्कृत—दुर्लभा, ग्राहिणी, कासघ्नी, समुद्रंता, विरूपा, वृश्चिकपत्री। हिन्दी—बरहंता। बंगाल—बिचाटी। बम्बई—खाज कोल्टी, कंचकुरी। तामील—अंबु, कंजोरी। तेलगू—दुला गोंडी। लेटिन—Tragia Involucrata (ट्रेजिया इनव्होल्यूक्रेटा)। मराठी—थोर आगिया। गुजराती—मोटी खोज वणीनी वेल।

वर्णन—यह एक झाड़ी होती है। इसकी ऊँचाई ६-७ फुट तक होती है। इसके पत्ते डंठलदार, कटे हुए कंगूरों के और लोम युक्त होते हैं। इसके फूल तुर्रे वाले और ऊपर से कुछ पीले होते हैं। इस वनस्पति को छूने से शरीर में बहुत खुजली छूटती है और शरीर का वह भाग लाल हो जाता है। औषधि में इसकी जड़ें काम में ली जाती हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—यह वनस्पति पसीना लाने वाली, मूत्रल और धातुपरिवर्तक होती है। इसका शीत निर्यास खुजली और जलन युक्त ज्वर में दिया जाता है।

कोकण में इसकी जड़ का लेप बनाकर नारू के कीड़े को निकालने के लिए बाँधा जाता है। खुजली युक्त चर्म रोगों को मिटाने के लिए इसको तुलसी के रस के साथ मिला कर लगाते हैं।

छोटे नागपुर में इसकी जड़ को ठंड देने वाले बुखार में और टाँगों तथा भुजाओं के दर्द में दिया जाता है। गलित कुष्ठ के अन्दर बनाये जाने वाले लेप में भी इस औषधि का प्रयोग किया जाता है।

टेलर के मतानुसार सूँघने के नस्य में इसके पत्तों को मिलाकर मस्तक शूल को रोकने के लिये उपयोग में लिया जाता है।

थोरंटन के मतानुसार इसके फल को सिर के ऊपर थोड़े से पानी के साथ घिसने से गंजेपन में लाभ होता है।

कोमान के मतानुसार इसकी जड़ के अन्दर पसीना लाने वाले तत्त्व रहते हैं और इसलिए यह बुखार में पसीना लाने के लिए दी जाती है। इसकी जड़का काढ़ा ब्रोंकाइटीज और ज्वर के केसों में दिया गया और उनमें १० रोगियों में १ को लाभ हुआ।

रिंगू

नाम—पंजाब—बरिंगू, ममीरी। अंग्रेजी—Soldiers Buttons। लेटिन—Caltha Palustris (काल्थ पेल्यूस्ट्रिस)।

गुण, दोष और प्रभाव—कर्नल चोपरा के मतानुसार इसकी जड़ विषैली होती है।

बरोला

नाम—बंगाल—बरोला। बम्बई—हालूगिरी, हुलागिरी। मराठी—मुद्रबिंब्रो। लेटिन—Holigarana Longifolia (होलीगेरना लांगिफोलिया)।

वर्णन—यह एक ऊंची जाति का वृक्ष होता है इसकी छाल मुलायम, पत्ते चमकीले और फूल सफेद होते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—इस वृक्ष के पिंड से एक प्रकार का काला रालदार, कड़वा और जहरीला रस बहता है। इसका यह रस एक प्रभावशाली चर्मदाहक वस्तु होती है। इसके लगाने से शरीर के ऊपर छाला उठ जाता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बरू

नाम—हिन्दी—बरू। बंगाल—कलमूचा। बरार—करताल। काश्मीर—बरहम। तेलगू—गिड्डीजनु। लेटिन—Sorghum Halepence (सोरघम हेलपेंस)। अंग्रेजी—Andropogan Halepence।

वर्णन—यह एक जाति का घास है। इसका पौधा ज्वार के पौधे की तरह मगर उससे कुछ पतला होता है। इसके पत्ते भी ज्वार के पत्तों से कुछ मिलते हुए होते हैं। इसके बीज भी ज्वार के बीजों की तरह होते हैं। यह घास जहां पैदा हो जाता है वहां से नष्ट होना बहुत मुश्किल होता है। जब लिखने के होल्डर नहीं चले थे तब लिखने के लिये इसके टुकड़ों की कलमें बनाई जाती थीं।

गुण, दोष और प्रभाव—इसके बीज मूत्रल और शान्तिदायक होते हैं।

बस्ट्रा

नाम—हिन्दी—बस्ट्रा। बम्बई—एसार। बंगाल—मॅसाडरी। तामील—कट्टुकुमिल्ल। लेटिन—Callicarpa Lanata (केलीकारपा लेनेटा)।

वर्णन—यह एक ऊँची जाति की झाड़ी और कभी कभी छोटी जाति का वृक्ष होता है। इसकी छाल भूरी, खरदरी और जगह २ से फटी हुई होती है। इसके पत्ते शाखाओं के अन्त में गुच्छों में लगते हैं। ये १५ से लेकर २३ सेंटिमीटर तक लम्बे और ७-५ से लेकर १० सेंटीमीटर तक चौड़े होते हैं। इसके फूल बिना डंठल के होते हैं। इनका रंग कुछ कुछ ललाई लिये हुए होता है। यह वनस्पति कोकण, पश्चिमी घाट, बम्बई और मद्रास प्रेसीडेंसी में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसकी छाल और पत्ते सुगंधित और कड़वे होते हैं। इनको उबालने से इनमें से बहुत सा चिकना पदार्थ निकलता है। इन पत्तों को दूध में उबाल कर कुल्ले करने से मुंह के छालों में लाभ होता है। इसकी छाल और जड़ को पानी में उबाल कर उसका काढ़ा बनाकर ज्वर की गर्मी को कम करने के लिये और यकृत के व्रण और यकृत के अवरोध को दूर करने के लिये दिया जाता है।

उत्तरी भारत में इसकी जड़ को चमड़े की विकृति को दूर करने के उपयोग में लिया जाता है। मलाया में यह पौधा मूत्रल समझा जाता है।

बथुआ

नाम—संस्कृत—वास्तुक, क्षारपत्र, शाकराट्, शाकवीर, हिलमोचिका, चिल्ली, चिल्लिका, इत्यादि। हिन्दी—बथुआ। बंगाल—बथुआ साग, चन्दनवेट्ठ। गुजराती—चील, टांको। मराठी—चाकवत, चिविल। पंजाब—बथुआ। तामील—पारू पुक्कूराइ। तेलगू—पापूकुरा। इंग्लिश—Allgood। लेटिन—Chenopodium Album (चेनोपोडियम एल्बम)। Che. Olidum (चेनो ओलीडम)।

वर्णन—बथुए की साग सारे भारतवर्ष में प्रसिद्ध है। इसका पौधा करीब हाथ भर ऊँचा होता है। इसके पत्ते हरे और बीच २ में कुछ ललाई लिये हुए होते हैं। इसकी दो जातियां होती हैं एक बथुआ और दूसरा लाल बथुआ जिसको चिल्ली कहते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से बथुआ अग्नि दीपक, मधुर रस युक्त, वात पित्त नाशक, मल मूत्र को शुद्ध करने वाला, नेत्रों को हितकारी, कृमिनाशक और कफ रोग वाले मनुष्यों के लिये विशेष हितकारी है।

बथुआ क्षारयुक्त, कृमिनाशक, त्रिदोषनिवारक, दीपन, पाचन, मधुर, सारक, रुचिवर्धक, दस्तावर, नेत्रों को हितकारी, स्वर को उत्तम करने वाला, स्निग्ध, पाक में भारी और सब प्रकार के रोगों को शान्त करने वाला होता है। दोनों प्रकार के बथुए में लाल बथुआ विशेष गुणकारी होता है।

बथुआ बवासीर, त्रिदोष, अरुचि और कृमियों को नष्ट करता है। यह बुद्धिवर्धक, बलकारक, जठराग्नि को तेज करने वाला, क्षार युक्त और पचने में कड़वा होता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

लाल बथुआ कफ पित्त नाशक, प्रमेह में लाभदायक, मूत्रकृच्छ्र को दूर करने वाला, पथ्य और रुचिकारक होता है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह पहले दर्जे में सर्द और दूसरे दर्जे में खुश्क होता है। लाल बथुआ सर्द और खुश्क होता है। यह शरीर में कोमलता और सर्दी पैदा करता है। हर प्रकार की गर्मी की सूजन, फिर चाहे वह शरीर के अन्दर हो चाहे बाहर उसमें यह लाभ पहुँचाता है। गर्मी की खांसी तथा क्षय की बीमारी में इसको बादाम के तेल में पकाकर खाना चाहिये। यह यकृत की गर्मी को दूर करता है। सीने को मुलायम करता है। जल्दी हजम होता है। उम्दा खून पैदा करता है। जलोदर में मुफीद है। कब्ज को मिटाकर दस्त साफ लाता है, पेट को मुलायम करता है और पीलिये को मिटाता है।

पित्त प्रकृति वालों के लिये यह विशेष रूप से लाभदायक है। पित्त के प्रकोपको दूर करने के लिये चुकन्दर इत्यादि दूसरी तरकारियों से यह उत्तम है।

इसके पत्तों को पानी में उबाल कर उस पानी में शक्कर मिलाकर पीने से दस्त साफ होता है और गुर्दे तथा मसाने की पथरी टूट जाती है। तथा तिल्ली की सूजन बिखर जाती है। इसके उबाले हुए पत्तों का लेप करने से गरमी की सूजन मिट जाती है। रक्त के उपद्रव, बवासीर, पेट के कीड़े और सन्निपात में भी यह मुफीद है। इसके पत्तों का उबाला हुआ पानी पीने से रुका हुआ पेशाब खुल जाता है। इसके काढ़े से रंगीन रेशमी कपड़ों को धोने से उनके धब्बे मिट जाते हैं लेकिन रंग में फरक नहीं आता।

लाल बथुआ कुछ काबिज होता है। यह दिल को ताकत देता है। कफ, पित्त और खून के उपद्रव को मिटाता है, फोड़े फुन्सी को मिटाता है। तिल्ली की बीमारी और पेट के कीड़ों को दूर करता है।

बथुए के बीज समशीतोष्ण होते हैं। ये सूजन को बिखेरते हैं। इनको नमक और शहद के साथ लेने से आमाशय की सफाई होती है और दूषित पित्त निकल जाता है। गर्मी की वजह से आई हुई शरीरकी सूजन में इन बीजों को पानी में पीसकर शहद में मिलाकर लेप करने से सूजन उतर जाती है।

अगर किसी के यकृत में गठान पड़ जाय और उसकी वजह से उसे पीलिया हो जाय तो ७ माशे बथुवे के बीजों को २१ दिन तक प्रतिदिन देने से यकृत की गांठ बिखर जाती है और पीलिया मिट जाता है। इन बीजों के खाने से मनुष्य की लिंगेन्द्रिय में बहुत ताकत और उत्तेजना पैदा होती है। इन बीजों को पीसकर शरीर पर मलने से शरीर के दाग और मैल साफ हो जाते हैं।

जंगली बथुए के १। तोले बीजों को लेकर ४१ तोला पानी में जोश दें। जब आधा पानी रह जाय तब उसे ऐसी स्त्री को जिसके पेट में छोड़ रह गया हो पिलावे तो वह छोड़ निकल जाता है। कब्ज और बवासीर में भी यह प्रयोग लाभ पहुँचाता है।

इलाजुल गुरबा के मतानुसार इसके १॥ तोला बीज का क्वाथ गर्भघातक होता है। इसलिए गर्भवती स्त्रियों को यह नहीं देना चाहिए।

मुजिर—बथुआ सर्द मिजाज वालों को नुकसान पहुँचाता है। इसके बीज गुदा के लिये हानिकारक हैं।

दर्पनाशक—गरम मसाला और चुकंदर। **मात्रा**—बीजों की ७ माशे से ६ माशे तक।

उपयोग—

तिल्ली—तिल्ली और पित्त के रोगों में बथुए का साग बहुत हितकारी होता है।

पेट के कीड़े—बथुए का रस निकाल कर उसमें नमक मिलाकर पीने से पेट के कीड़े मरते हैं।

मूत्र की कमी—बथुए के स्वरस में मिश्री मिलाकर पिलाने से मूत्रवृद्धि होती है।

अर्श—बथुए का साग खिलाने से अर्श के अन्दर लाभ होता है।

प्रसूति कष्ट—बथुए के १॥ तोले बीजों को आधा सेर पानी में औटाकर जब आधा पानी रह जाय तब उसको छान कर पिलाने से बालक होने के समय स्त्री कष्ट से छूट जाती है।

नाड़ीव्रण—बथुए के पत्ते और तम्बाखू के फूलों को पीसकर घी में मिला कर लगाने से नाड़ी व्रण मिटता है।

रक्तपित्त—बथुए के बीजों के चूर्ण को शहद में मिलाकर चटाने से रक्तपित्त में लाभ होता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बथुआबिलायती

नाम—हिन्दी—बथुआ बिलायती। लेटिन—Chenopodium Ambrosioides (चेनोपोडियम एम्ब्रोसिओडस)।

वर्णन—यह एक ऊँची जाति की बहुशाखी वनस्पति होती है। इसकी ऊँचाई ६ से ७ फुट तक होती है। इसके पत्ते ३-८ से लेकर ८ सेंटीमीटर तक लम्बे और ६.६ से २.५ सेंटीमीटर तक चौड़े होते हैं।

यह वनस्पति पहले हिन्दुस्तान में पैदा नहीं होती थी। मगर कुछ दिनों से बंगाल, सिलहट और दक्षिणी भारत में यह पैदा होने लगी है।

गुण, दोष और प्रभाव—दक्षिणी अमेरिका में बहुत पुराने समय से इस वनस्पति के पत्तों और बीजों का शीत निर्यास आंतों में रहने वाले परोपजीवी कीटाणुओं को नष्ट करने के लिए एक घरेलू औषधि की तरह काम में लिया जाता है।

यूरोप में यह वनस्पति छाती के रोगों और स्नायुजाल सम्बन्धी विकार और कंपवात (Chorea) के लिए उपयोग में लिया जाता है।

ब्राझील में इस वनस्पति का शीत निर्यास शान्तिदायक, पसीना लाने वाला और ऋतुस्राव नियामक माना जाता है। यह कफ के दबाव, श्वास नली की रुकावट, कष्टप्रद मासिक धर्म और गर्भस्थ मृत भ्रूण को निकालने के लिए उपयोग में लिया जाता है।

गायना में इसका शीत निर्यास अग्निवर्धक और कृमिनाशक माना जाता है।

मेडागास्कर और लारिनियून में इसके पौधे का रस कृमिनाशक वस्तु की तरह दिया जाता है। आक्षेप रोग, आँतों के कृमि, आमाशय का शूल, रक्त का विषैलापन और स्नायु विकार को दूर करने के लिए इसका बाह्य उपचार किया जाता है।

कोमान के मतानुसार इस वनस्पति का फल और इसका भबके से उड़ाया हुआ तेल कृमिनाशक वस्तु की तरह उपयोग में लिया गया। इसके बीजों का चूर्ण २० ग्रेन तक की मात्रा में दिया गया मगर उसका कृमियों के ऊपर कोई असर नहीं हुआ। मगर इसका तेल १० मिनिम की मात्रा में देने पर पेट के चुरनिये (Hookworm) मर गये।

बटसिंजल

नाम—पंजाब—बटसिंजल, चेतरनी, कारी, कुंजी, मिभारारी, रंगक, ताद्रू, तांद्रा, तुनानी, भनानी। लेटिन—Rhamnus Purpureus (रेमनस परपूरीयस)।

वर्णन—यह एक ऊँची जाति की झाड़ी होती है और कहीं २ छोटे वृक्ष का रूप धारण कर लेती है। इसकी चाल भूरी और मुलायम होती है। इसके पत्ते चमकदार होते हैं। इसके फूल कुछ हरापन लिये हुए होते हैं। यह वनस्पति हिमालय में काश्मीर से कुमाऊँ तक ६ हजार फीट की ऊँचाई तक पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसका फल विरेचक वस्तु की तरह काम में लिया जाता है।

बट्ठल

नाम—पंजाब—बट्ठल, दुधलक, तारीभा। लेटिन—Launaea Nudicaulis (लोनेया नूडीकोलिस)।

वर्णन—यह एक छोटी जाति की वनस्पति होती है। इसके पत्ते ५ से लेकर २५ सेंटिमीटर तक लम्बे और २.५ से ७.५ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—इस वनस्पति के पत्तों को पीसकर सिर पर लेप करने से बच्चों का ज्वर दूर हो जाता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बटुला

नाम—पंजाब—बटुला, कालीजीरी। लेटिन—Saussurea Candicans (सुसरिया केंडिकेन्स)।

वर्णन—यह एक छोटी जाति की वनस्पति होती है। यह हजारा, काश्मीर और भूटान में दो हजार फीट से लेकर ७ हजार फीट की ऊँचाई तक पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसके बीज शांतिदायक होते हैं। पंजाब के लिये यह वनस्पति घोड़ों के लिये उपयोग में ली जाती है।

बटवासी

नाम—सिक्किम—बटवासी। लेटिन—Gouania Leptostachya (गोनिया लेप्टोस्टेच्या), तेलगू—पेनकिटीजे। उड़िया—खांटा। नेपाल—बटवासी।

वर्णन—यह एक बड़ी जातिकी झाड़ी होती है। इसकी डालियां मुलायम, चमकीली और पास २ लगी हुई होती हैं। इसके पत्ते ५ से लेकर १० सेंटिमीटर तक लम्बे और ३.८ से ६.३ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं। यह वनस्पति पंजाब के कांगड़ा डिस्ट्रिक्ट से कुमाऊँ तक और आसाम की खासिया पहाड़ियों पर ३ हजार फीट से लेकर ४ हजार फीट की ऊँचाई तक पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसके पत्तों का पुल्टिस बनाकर व्रण के ऊपर बांधने के काम में लेते हैं।

बरुन

नाम—संस्कृत—वरुण, वरना, अजापा, अश्मरीघ्न, घृतपुष्पा, कुमार, महाकपित्थ, मारुतापह, पासुंदा साधुवृक्ष, सेतुक, सेतुवृक्ष, शिखिमंडल, तमाल, तिक्तशाक, इत्यादि। हिन्दी—वरुन, बरना, बिला, बिलासी इत्यादि। बङ्गाल—बरुन तिक्तशाक। बम्बई—वायवरना, भटावरना, हेदवरना कबांन, कुत्रला। गुजराती—बरनो, बायबरनो। मराठी—हरावरना, कुत्रला, कारवान, बायवरना। तामील—माविलिंगू। मध्यप्रांत—राजवेल, बेला। उर्दू—वरना। लेटिन—Crataeva Religiosa (क्रैटेवा रिलिजिओसा), C. Nurvla (क्रे. नुरबला)। इङ्गलिश—Holy Garter Pear।

वर्णन—यह एक मध्यम कद का वृक्ष होता है। इसके पत्ते बेल के पत्तों की तरह तीन २ साथ लगते हैं। इसके फूल सफेद गुलतुर्रे के फूलों की तरह होते हैं। इसके फल सुपारी के आकार के होते हैं। इसकी छाल सफेद होती है। इसके पत्तों को मसलने पर उनमें बड़ी उग्र गंध आती है। यह वृक्ष दक्षिणी मलाबार और करनाटक में अपने आप पैदा होता है। मगर उत्तरी हिन्दुस्तान में इसको लगाकर इसकी परवरिश की जाती है।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मतसे बरना चरपरा, गरम, रुधिर विकारनाशक, शीत वात निवारक, स्निग्ध, दीपन तथा विद्रधि और वातविनाशक है।

वरना वात और शूल नाशक, दस्तावर, गरम और पथरी को दूर करने वाले होते हैं। वरना के फूल मलरोधक, पित्तनाशक और आमवात को दूर करने वाले होते हैं। वरना के फूल सारक, भारी, पचने में मधुर, स्वादिष्ट, स्निग्ध, गरम तथा वात, पित्त और कफ को नष्ट करते हैं।

संस्कृत के अन्दर वरना का नाम अश्मरीघ्न दिया गया है। यह नाम सार्थक है। क्योंकि इसकी क्रिया मूत्र यंत्रों के ऊपर प्रधान रूप से होती है। पथरी, वस्ति शूल, मूत्रकृच्छ्र, सुजाक, इत्यादि रोगों में इसकी छाल को देने का बहुत रिवाज है। यह छाल अपामार्ग, पुनर्नवा, गोखरू, जवाखार, मुलैठी, इत्यादि मूत्रल औषधियों के साथ दी जाती है। बाह्योपचार में चमड़े के ऊपर इसकी क्रिया राई के समान होती है। इसके ताजे पत्तों को पीसकर त्वचा पर बांधने से त्वचा लाल हो जाती है और कभी २ उस पर छाला भी उठ जाता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

इसकी छाल मूत्र-सम्बन्धी शिकायतों और ज्वर तथा चर्म सम्बन्धी रोगों के कुछ साधारण प्रकारों में उपयोगी होती है। यह वमन को बन्द करती है और जठराग्नि के प्रदाह को भी यह दूर करती है। इसके ताजे पत्ते और इसकी जड़ की छाल ऐसी तमाम सूजनों के ऊपर जिनमें कि सरसों की पुल्टिस बांधी जाती है बहुत उपयोगी सिद्ध होती है।

सीलोन में इसके पत्ते संधियों की सूजन पर काम में लिये जाते हैं। बम्बई में पांवों की प्राचीन सूजन और उससे होनेवाली जलन को दूर करने के लिये इसके पत्तों का उपयोग किया जाता है।

गंडमाला में इसकी छाल का काढ़ा शहद में मिलाकर दिया जाता है और इसकी छाल का लेप भी किया जाता है। व्रण शोथ और विद्रधि में इसकी छाल पुनर्नवा के साथ देते हैं।

ज्वर के अन्दर भ्रम पैदा होने पर इसकी छाल को कुचल कर मस्तक पर बांधते हैं। जिससे वहां पर जलन होकर भ्रम निकल जाता है। लेप हटाने के पश्चात् उस हिस्से को ठण्डे पानी से धोकर तेल लगा देने से फोड़ा नहीं उठता है।

कोकण में इसका रस साफीवात में देते हैं। नाक की हड्डियों की सड़ान में इसके पत्तों का धूम्रपान करने से और उस धुएँ को नाक के रास्ते निकालने से लाभ होता है।

उपयोग—

पैरों की सूजन—इसके पत्तों को पीसकर गरम करके लेप करने से पैरों की सूजन मिटती है।

गठिया—इसके एक तोला रस में सुपारी के पत्तों का रस और घी मिलाकर पिलाने से गठिया में लाभ होता है। इसके पत्ते और छाल को पीसकर पोटली में बांधकर गरम करके सेंक करने से भी गठिया में लाभ होता है।

पथरी—इसकी जड़ की छाल का क्वाथ पिलाने से शर्करा पथरी मिटती है। इसकी छाल के क्वाथ में जौखार मिलाकर पिलाने से कफ से पैदा हुई पथरी मिटती है। इसके क्वाथ में गुड़ मिलाकर पिलाने से बस्तिशूल और पथरी मिटती है।

गंडमाला—इसके क्वाथ में शहद मिलाकर पिलाने से गंडमाला मिटती है।

मूत्र सम्बन्धी रोग—इसकी १० तोला छाल को १५ छटांक जल में औटावें जब १० छटांक पानी रह जाय तब उसको छानकर ५ से १० तोले तक की मात्रा में पिलाने से मूत्र सम्बन्धी कई रोग मिटते हैं।

बलाया

नाम—संस्कृत—बलाया। तामील—विहलूटी। तेलगू—चेकोनदी। लेटिन—Cadaba Trifoliata (केडेवा ट्रिफोलिएटा)।

वर्णन—यह एक बड़ी और बहुशाखी झाड़ी होती है उसकी छाल मुलायम और भूरी होती है। इसके पत्ते ३·८ से ६·५ सेंटिमीटर तक लम्बे होते हैं। इसके फूल बहुत छोटे होते हैं। इसका फल मुलायम, चिकना और हरा होता है इसके बीज गुर्दे के आकार के होते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत से इसकी जड़ और पत्ते विरेचक, ऋतुस्राव नियामक, कृमिनाशक और सूजन को नष्ट करने वाले होते हैं। ये बच्चों के अजीर्ण, स्त्रियों के नष्टार्तव और संधियों के जोड़ों के दर्द में उपयोगी होते हैं।

बसन्त

नाम—हिन्दी—बसंत, डेंढू। पंजाब—वसंत, डेंढू। उर्दू—बालसन। अंग्रेजी—Amber, Grace of God। लेटिन—Hypericum Perforatum (हायपेरिकम परफोरेटम)

वर्णन—यह एक वर्ष जीवी वनस्पति होती है। यह पश्चिमी हिमालय में काश्मीर से शिमला तक ६ हजार फीट से ९ हजार फीट की ऊँचाई तक पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत—यूनानी मत से इसके पत्ते तीक्ष्ण और कुछ कड़वे होते हैं। ये अग्निवर्धक, मृदुविरेचक और कृमिनाशक होते हैं। कर्ण पीड़ा और बिच्छू के विष में भी ये उपयोगी हैं। इसकी छाल मूत्रल और बवासीर तथा मूत्र सम्बन्धी शिकायतों को दूर करने वाली होती है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

यह वनस्पति कड़वी और संकोचक होती है। इसमें शोधक, कृमिनाशक, मूत्रल और ऋतुस्राव नियामक धर्म रहते हैं। बाहरी प्रयोग में त्वचा के लिये यह एक उत्तेजक वस्तु है।

मुसलमानी हकीम इसको कृमिनाशक और बवासीर के लिये लाभदायक औषधि मानते हैं।

इसमें पाया जाने वाला रस योरुप में अन्दर जख्म, चोट, रगड़ और मोच के ऊपर लेप करने के लिये एक बहुत ही लोकप्रिय और लाभदायक वस्तु समझी जाती है।

इसका शीत निर्यास फेफड़े से सम्बन्धित प्राचीन जुकाम, आंतों की शिकायत और मूत्र मार्ग की शिकायतों में बहुत सफलता के साथ उपयोग में लिया जाता है।

बचेटा

नाम—वनभेंडा। हिन्दी—बचेटा। बंगाल—वेनोचटा। मराठी—वनभेंडा, रंतुपकुड़ा। काठियावाड़—वगड़ाऊ भिंडी, स्वर्ण भिंडी। सीमाप्रान्त—बचीटा। तामील—ओटट्टी। तेलगू—पेड्डा वेंडा। देहरादून—ऊंगा। लेटिन—Urena Lobata (यूरेना लोबेटा)।

वर्णन—यह एक छोटी जाति का क्षुप होता है। इसके पौधे १ फुट से २ फुट तक लम्बे होते हैं जो बरसात में घास के साथ बहुत पैदा होते हैं। इसके पत्ते २ या ३ खांचे वाले होते हैं। इसके फूल हलके गुलाबी रंग के होते हैं। इसका फल पांच खाने वाला होता है। इस पर टेढ़ी नोक वाले कांटे लगते हैं। इस पौधे का आकार भिंडी के पौधे की तरह होता है और इसमें सन की तरह बारीक रेशे निकलते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—केंपबेल के मतानुसार छोटे नागपुर में इसकी जड़ संधिवात के ऊपर लेप करने के काम में ली जाती है।

कार्टर के मतानुसार लखीमपुर में इसकी जड़ एक लोकप्रिय मूत्रल औषधि मानी जाती है।

ब्राझील में इसकी जड़ और डालियों का काढ़ा वायुनलियों से सम्बन्धित उदर शूल में उपयोग में लिया जाता है। और इसके फूल सूखी खांसी में कफ निस्सारक वस्तु की तरह दिये जाते हैं।

गोयेना में इसके फूलों का निर्यास मुखक्षत और गले की खराबी को दूर करने के लिये कुल्ले करने के काम में लिया जाता है।

बनकोष्ट

नाम—संस्कृत—भीरुपत्रिका, दीर्घपत्री, चंचु, कलाभि, शुष्क इत्यादि। बंगाल—बन पाट, जंगली पाट। बंबई—हिरन खुरी, मोटी बहुफली। मराठी—हिरनखुरा। पूना—मगर मिथी। काठियावाड़—उभी बहुफड़ा, खाटी गिसाड़ी, कड़वी जारी। गुजराती—छू छड़ी, उभी बहुफली। लेटिन—Corchorus Fascicularis (कोरचोरस फेसीक्यूलेरिस)।

वर्णन—यह जूट के वर्ग की एक वनस्पति होती है। इसके पौधे १ से लेकर २ फीट तक लम्बे होते हैं। इसके पत्ते सनके पत्तों की तरह होते हैं। इसके फूल पीले, फलियां आधे से पौन इञ्च तक लम्बी और ३ खंडवाली होती हैं। इन फलियों में वहुत बीज भरे रहते हैं। इसके बीज कड़वे, चिकने और कुछ काले होते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से इसका पौधा मीठा, गरम, तीक्ष्ण, कड़वा, आंतों के लिये संकोचक, अर्बुद और उसके दर्द को दूर करने वाला, बवासीर में लाभदायक, स्नेहन, संग्राहक और बलवर्धक होता है। यह अतिसार को दूर करता है। इसके पत्ते स्वादिष्ट, शीतल, मृदु विरेचक, उत्तेजक, पौष्टिक, कामोद्दीपक और त्रिदोष को दूर करने वाले होते हैं। इसके बीज गरम, तीक्ष्ण, अर्बुद और दर्द को नष्ट करने वाले और चर्म रोग तथा गीली खुजली में लाभदायक है। सुश्रुत के मतानुसार इसका पौधा कृमिनाशक होता है और यह वहते हुए जखम पर उपयोगी होती है।

सुजाक में इसका काढ़ा देने से जलन कम होती है, पेशाब की मात्रा बढ़ती है और मूत्र नालिका की श्लेष्म त्वचा अपनी पूर्व स्थिति में आ जाती है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बहुफली

नाम—संस्कृत—भेदनी, चंचु, क्षुद्रचंचु, पट्ट पत्रिका। हिन्दी–बहुफली। गुजराती—बहुफली। मराठी—बहुफली। इंगलिश—Shrubby Jute। लेटिन—Corchorus Acutagularis (कोरचोरस एक्यूटेग्यूलेरिस) C. Depressus (को० डिप्रेसस)।

वर्णन—यह भी सन या जूट के वर्ग की वनस्पति होती है। इसके पौधे बरसात के दिनों में बहुत उगते हैं। ये एक से दो फीट तक ऊँचे होते हैं और इनमें से बहुत सी शाखाएं निकल कर जमीन पर फैल जाती हैं। इसके पत्ते दूर २ लगते हैं और ये २ से ३ इंच तक लम्बे और आधे से १॥ इंच तक चौड़े होते हैं। इसके पत्ते कंगूरेदार होते हैं। इसके पत्तों के डंठल पर और बारीक २ रुएँ निकले हुए रहते हैं। इसके पत्तों का स्वाद चिकना और कुछ कड़वापन लिए हुए होता है। इसके फूल पीले रंग के और फलियां ६ धारी वाली होती हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से बहुफली तीक्ष्ण, गरम, कसेली, मलरोधक, उदर रोग, शूल और बवासीर को दूर करने वाली तथा विषनाशक होती है।

धातु की कमजोरी और बहुफली—इस वनस्पति के अन्दर पौष्टिक और धातुवर्धक तत्व काफी मात्रा में रहते हैं और इस कारण यह धातु की निर्बलता और उससे आनेवाली कमजोरी, कमर और पैरों की पिंडलियों में होनेवाली जलन, हाथ-पैरों की जलन, सर के चक्कर, छाती की धड़कन, स्मरण शक्ति का नाश, पेशाब तथा स्वप्न के साथ धातु का पतन इत्यादि धातु की कमजोरी से होनेवाले उपद्रवों में यह बहुत अच्छा लाभ बतलाती है। इसके सेवन से धातु की वृद्धि होती है, शरीर पुष्ट होता है और इन्द्रियों में नवीन बल उत्पन्न होता है।

इस औषधि को उपयोग में लेने की विधि इस प्रकार है। बहुफली के ताजा पौधे को लेकर थोड़े से पानी के साथ पीसकर कपड़े में दबा कर उसका चिकना रस निकाल लेना चाहिये। इस रस को १ औंस की मात्रा में लेकर उसमें १ तोला शक्कर और ६ रत्ती पीपर का चूर्ण मिलाकर प्रतिदिन सबेरे-शाम पीना चाहिये। अगर ताजी बहुफली न मिले तो सूखी बहुफली को लेकर उसको कूट कर पानी में दो घण्टे तक भिगोकर, फिर उस पानी को खूब मसल कर कपड़े में छान लेना चाहिये। उस लुआब में शक्कर और पीपर का चूर्ण मिलाकर पीना चाहिये।

यह वनस्पति पुरुषों की तरह स्त्रियों के प्रदर रोग को मिटाने के लिए अक्सीर मानी जाती है और इस रोग में भी इसका उपयोग ऊपर बताई हुई विधि से ही किया जाता है।

इस वनस्पति में ग्राही और शीतल गुण होने की वजह से सुजाक में होने वाली जलन, संग्रहणी, अतिसार और बवासीर में होनेवाली वेदना को भी दूर करने के लिए इसका उपयोग किया जाता है। पुरातन प्रमेह के रोग में भी बहुफली के पत्तों का रस या उनका चूर्ण बहुत लाभ पहुँचाता है। संग्रहणी के अच्छे होते हुये रोगियों को इसके पौधों का काढ़ा, छोटी पीपर के चूर्ण के साथ देने से अच्छा लाभ होता है। इसके बीजों का चूर्ण ३ माशे की मात्रा में सबेरे शाम ठंडे पानी के साथ देने से त्वचा के रोग, खुजली, उदर शूल और जहरी चूहे के विष में बहुत लाभ होता है।

यह औषधि संकोचक होने की वजह से कुछ कब्जियत पैदा करती है। इस कारण इसके प्रयोग के साथ ही अगर शाम को सोते वक्त १ मात्रा त्रिफला के चूर्ण की ले ली जाय तो इसका यह दोष दूर हो जाता है।

बनावटें—

धातु पौष्टिक चूर्ण—मालवी गोखरू ४ तोला, कौच के बीज की मगज ८ तोला, छोटी पीपर ४ तोला, शतावरी ४ तोला, विदारीकन्द ८ तोला, असगन्ध १२ तोला और तज, तमाल पत्र, इलायची, नागकेशर, सूखे हुए आँवले, लौंग, कमल का कन्द, तालमखाने के बीज, सफेद मूसली, वंशलोचन, गिलोय का सत्व, सेमर की पतली जड़ें, तुलसी के बीज, लाल चन्दन, ऊँट कटारे के बीज और मुलेठी। ये सब चीजें चार २ तोला लेकर सब को इकट्ठा चूर्ण कर लेना चाहिये। फिर जितना इस चूर्ण का वजन हो उससे आधा बहुफली का चूर्ण उसमें मिलाकर मजबूत काग वाली शीशी में भर देना चाहिये।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

रस चिन्तामणि नामक ग्रन्थ के कर्ता यति अनन्तदेव सूरि लिखते हैं कि इस चूर्ण में से प्रतिदिन ३ माशे से ६ माशे तक चूर्ण बराबर मिश्री मिलाकर १० तोला दूध के साथ पीने से मनुष्य के वीर्य में बहुत वृद्धि होती है। जिन लोगों का वीर्य क्षीण हो गया हो अथवा सूख गया हो, जिनको बराबर धातु पतन होता हो अथवा हस्त मैथुन की वजह से जिनकी कामेन्द्रिय शिथिल हो गयी हो और उसमें काम का वेग पैदा नहीं होता हो ऐसे लोगों के लिए यह औषधि अमृत के तुल्य है। मगर इच्छित फायदा होने तक २-४ महीने धीरज के साथ इसका सेवन करना चाहिये और जब तक यह औषधि चलती रहे तब तक खारे, खट्टे, तीखे और तेल वाले पदार्थों को छोड़ देना चाहिये और पूर्ण ब्रह्मचर्य से रहना चाहिये।

बखिया मेला

नाम—नेपाल—बकिया मेला। पंजाब—अरखार, अरकोल, चेचर, दूदला, हुलासिंग, कक्कारी, कक्केरन, काशिन, रस्ट्ट, तार्त्रीवंश। रानीखेत—धरमिल। गढ़वाल—धंफेला, दंफेल। सीमाप्रान्त—दखमिला। लेटिन—Rhus Semialata (रस सेमिलेटा)।

वर्णन—यह एक छोटी जाति का झाड़ीनुमा वृक्ष होता है। इसके पत्ते २५ से लेकर ४५ सेंटिमीटर तक लम्बे होते हैं। इसके फूल कुछ पीलापन लिये हुए हरे होते हैं। यह वनस्पति हिमालय में ३ हजार फीट से ७ हजार फीट की ऊँचाई तक पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसका फल कालिक उदरशूल और अतिसार में लाभदायक होता है। चीनी लोग इस वनस्पति को कफ निस्सारक और संकोचक वस्तु की तरह काम में लेते हैं। सूजन और जखम पर वे इसका बाहरी लेप करते हैं। अनाम में यह वनस्पति लकवे या अर्धाङ्ग के ऊपर उपयोग में ली जाती है।

बनापू

नाम—कनाड़ी—बनापू। तामील—सदागम। इङ्गलिश—Leathery Murdah। लेटिन—Terminalia Coriacea (टर्मिनेलिया कोरीसोया)।

वर्णन—यह एक बड़ी जाति का वृक्ष होता है। इसके पत्ते २५ सेंटिमीटर तक लम्बे और ११ सेंटीमीटर तक चौड़े होते हैं। इसके फूल छोटे और पीले रङ्ग के होते हैं। इसके फल पीलापन लिये हुए भूरे रङ्ग के होते हैं। यह वनस्पति मद्रास प्रेसीडेन्सी और दक्षिण के सूखे पहाड़ों पर पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—केस, महश्कर और इसहाक के मतानुसार इस वृक्ष की छाल एक प्रभावशाली हृदय को उत्तेजना देने वाली वस्तु होती है।

बगा फटकल

नाम—आसाम—बगाफटकल। लेटिन—Osbeckia Nepalensis (ओसबेकिया नेपालेन्सिस)।

वर्णन—यह एक झाड़ी होती है। इसके पत्ते ७.५ से १० सेंटीमीटर तक लम्बे होते हैं। इसके फूल सफेद रंग के होते हैं। यह वनस्पति हिमालय में नेपाल के पूर्वी हिस्से में और खासिया पहाड़ियों पर पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—कार्टर के मतानुसार इस वनस्पति के फूल पीस कर बच्चों के मुंह के छालों पर लगाने के काम में लिये जाते हैं।

बन सुन्दरी

नाम—छोटा नागपुर—बन कुन्दरी। लेटिन—Melothria Perpusilla (मेलोथिरिया परफुसिला)

वर्णन—यह एक पराश्रयी लता होती है। जो नेपाल, पूर्वी बंगाल, पूर्वी हिमालय में ५ हजार फीट की ऊँचाई तक और आसाम, कोकण और दक्षिण तथा पश्चिमी घाट में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इस वनस्पति की जड़ दूध के साथ ज्वर और अतिसार को रोकने के लिए दी जाती है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बादवर्द

नाम—पंजाब—बदवर्द, कंछारी, टिसो। काश्मीर—गुले बदवर्द। उर्दू—गुले बदवर्द। अंग्रेजी—Bank Thistle। लेटिन—Carduus Nutans (कार्डूस नूटन्स), Uolutarella Divaricata (व्हौल्यूटेरेला डिवेरिकेटा)।

वर्णन—यह एक कांटेदार वनस्पति होती है। इसका पौधा गोखरू के पौधे से मिलता हुआ होता है। मगर इसका रंग कुछ सफेद होता है। इसकी डाली गोल, पतली और सफेद रंग की होती है। इस सारे पौधे पर बारीक २ रुँआ होता है। इसके फूलों का रंग सफेद और नीला होता है। इसका बीज कुसुम के बीज की तरह होता है। इसका फल गोखरू की तरह कांटे वाला होता है। इसके फल के अन्दर रुई की तरह एक वस्तु होती है जो फल के टूटने पर हवा में उड़ जाती है।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत से यह पहले दर्जे में सर्द और खुश्क होता है। इसके गुण धर्म धमासे के गुण धर्म से मिलते जुलते होते हैं। इसमें सूजन को बिखेरने की शक्ति होती है, रक्तस्राव को भी यह बन्द करती है। यह थोड़ी सी काबिज भी होती है। इसकी जड़ का लेप कफ की सूजन को बिखेर देता है। इसके ६ माशा बीजों को खाने से धनुर्वात, खांसी और कमर का दर्द मिट जाता है। इसकी जड़ और पत्तों को पीने से अर्द्धाङ्ग में लाभ होता है। इसको पानी में जोश देकर कुल्ले करने से दांतों का दर्द और मसोड़े की सूजन मिटती है। इसकी जड़ और पत्तों को पीने से कफ के साथ खून आना बन्द हो जाता है। यह आमाशय और यकृत की कमजोरी को दूर करके मल की गठानों को दस्त की राह निकाल देता है। इसके पत्तों का शराब में काढ़ा करके पीने से निमोनिया और गृध्रसी में लाभ होता है। आमाशय की खराबी से अगर किसी को दस्त होते हों तो इसकी जड़ और पत्ते देने से बन्द हो जाते हैं। रुका हुआ पेशाब और मासिक धर्म भी इससे खुल जाता है। इसके निरसेवन से पथरी गल जाती है। जलोदर और पीलिया में भी यह मुफीद है। कफ के पुराने ज्वर को दूर करने की इस वनस्पति में बड़ी तासीर है।

गाजरूनी का कहना है कि अगर आमाशय में कमजोरी आ जाय अथवा आमाशय में गर्मी पैदा होकर ज्वर आ जाय तो ऐसे ज्वर को निकालने में बादवर्द एक उत्तम वस्तु है। सांप और विच्छू के विष पर इसको चबाकर लगाने से लाभ होता है।

मुजिर—इसका अधिक सेवन फेफड़े और मस्तिष्क को नुकसान पहुँचाता है।

दर्पनाशक—अफसंतीन और तुख्म काहू। प्रतिनिधि—धमासा और पित्त पापड़ा।

मात्रा—पत्तों की ४॥ माशे से ५॥ माशे तक, जड़ की १७॥ माशे तक, बीज की ६ माशे तक और इसके पत्तों के रस की ३॥ माशे तक है।

बनमल्लिका

नाम—संस्कृत—बनमल्लिका, बासन्ती, माधवो, अस्फोटा, काननमल्लिका, प्रिया, सुपूजा, वनमालि। हिन्दी—वन मल्लिका, नेवारी। मराठी—कुसर। तामील—कावा, मरुगू, मलाई, बनमालीगाई। तेलगू—लिगामाले, अड़वीमल्ले। लेटिन—Jasminum Angustifolium (जेसमिनम औंगस्टिफोलियम)।

वर्णन—वनमल्लिका की बड़ी और झाड़ी नुमा बेल होती है। इसके पत्ते जुही के पत्तों की तरह मगर उनसे कुछ बड़े होते हैं। फूल सफेद, बहुत सुगंधित जूही के फूलों की तरह मगर उनसे कुछ बड़े होते हैं। औषधि प्रयोग में इस वनस्पति की जड़ और पत्ते काम में आते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत से इसका फूल कड़वा, कसैला, कुछ मीठा और शीतल होता है। यह हृदय रोग, मधु प्रमेह, पित्त विकार, शरीर की जलन, प्यास, चर्म रोग, रक्त रोग, दंत पीड़ा, नेत्र रोग में लाभदायक है।

बन मल्लिका फुफ्फुस और श्वास नलिका की सूजन में उपयोग में ली जाती है। निमोनिया रोग में इसके पांच पत्तों का स्वरस, ७ काली मिरच, ६ लहसुन की गुली, आधा तोला संहजने की जड़ का रस और दो तोले

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

शहद मिलाकर देने से बड़ा लाभ होता है। यह मात्रा सशक्त मनुष्य के लिये है। मनुष्य की शक्ति के अनुसार इसमें कमी ज्यादा की जा सकती है। यह एक तीव्र औषधि है। इससे कफ पतला होकर दस्त और वमन की राह से निकल जाता है। छोटे बच्चों के निमोनिया में इसके पत्ते का चौथाई टुकड़ा, काली मिरच के २।३ दाने और एक रत्ती सुहागा शहद में मिलाकर देते हैं। कोकण में इस औषधि को उपयोग में लेने का बहुत रिवाज है और इससे कभी किसी प्रकार की हानि होती देखी नहीं गई। हानिग्बरगर के मतानुसार इसकी जड़ दाद के ऊपर बहुत उपयोगी है।

बरारा

नाम—पंजाब—बरारा, बर्टी, बटा। अफगानिस्तान—हुमहुमा। सिन्ध—बुरेई। लेटिन—Perifloca Aphylla (पेरिफ्लोका एफिला)।

वर्णन—यह एक खड़ी रहने वाली बहुशाखी झाड़ी होती है। इसके हर एक अंग में दूधिया रस भरा हुआ रहता है। अक्सर करके इसके पत्ते नहीं होते। कहीं २ वे दिखलाई देते हैं। जो ६ मिलीमीटर तक लम्बे होते हैं। इसके फूल सुगंधित, चिकने और बड़े होते हैं। यह बनस्पति पंजाब के मैदानों में विशेष रूप से पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—मुरे के मतानुसार सिंध में इसका दूधिया रस गठान और सूजन के ऊपर लगाया जाता है। हक्स बूलर के मतानुसार इसकी छाल का काढ़ा विरेचक वस्तु की तरह उपयोग में लिया जाता है।

बधारा

नाम—संस्कृत—गोपा मुद्रा, बिकारिणी। हिन्दी—बधारा। गुजराती—लटके सर नू झाड़। मराठी—लहानशीबण। पंजाब—बधारा। बिहार—मेंदेरा। उर्दू—बधारा। उड़िया—गोम्भारि, गोपू गोम्भारी। तामील—कंदवेल। तेलगू—नेलगुमड्डू। लेटिन—Gmelina Asiatica (मेलिना एसियाटिका)।

वर्णन—यह एक सुन्दर जाति का झाड़ीनुमा वृक्ष होता है। इसकी छाल कुछ पीलापन लिये हुए सफेद होती है। इसके पत्ते २.३ से ८ सेंटिमीटर तक लम्बे और १.२ से २.५ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं। इसके फूल पीले रंग के बहुत सुन्दर होते हैं। यह वृक्ष बगीचों की सुन्दरता बढ़ाने के लिये उनमें लगाया जाता है। दक्षिण और सीलोन में यह अपने आप भी पैदा होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत से इसकी जड़ कामोद्दीपक और कफ निस्सारक होती है। जोड़ों के दर्द की चिकित्सा में इसका बहुत उपयोग होता है।

कनाइलाल दे के मतानुसार इसकी जड़ प्रमेह और मूत्राशय की व्याधियों में उपयोग में ली जाती है।

इसकी जड़ शान्तिदायक, धातुपरिवर्तक, संकोचक और सुगन्धित होती है। यह संधिवात, कटिवात और उपदंश जनित विष से होने वाली दूसरी बीमारियों में उपयोग में ली जाती है। सुजाक और मूत्राशय के प्रदाह में यह विशेष रूप से उपयोग में ली जाती है।

कम्बोड़िया में इस वनस्पति का निर्यास फफोले उठने के ऊपर उपयोग में लिया जाता है।

बगोगाल

नाम—बगोगाल। लेटिन—Fagopyrum Cymosum (फेगोपिरम सिमोसम)।

वर्णन—यह वनस्पति हिमालय में ५ हजार फीट से ११ हजार फीट की ऊँचाई तक होती है। यह एक प्रकार का धान्य होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसके दाने कॉलिक उदर शूल, पित्तज अतिसार और उदर सम्बन्धी बाधाओं में पथ्य के रूप में दिये जाते हैं।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बन्दाल

नाम—संस्कृत—गन्धमादिनी, जीवंतिका, कामवृत्त, कामिनी, केशरूपा, नीलवल्ली, नीलवरण, पादरूपहा, परपुष्टा, पराश्रया, पुत्रिणी, शेखरा, श्याम, बांदा, वृत्तभक्षा इत्यादि। हिन्दी—बन्दाल, पान, पांडु, बांदे। मध्यप्रान्त—बांदा। बङ्गाल—परगच्छा, बोदू, मन्दादा। गुजराती—वांदो। मराठी—वांदा, कामरुख। लेटिन—Viscum Articulatum (व्हिस्कम आर्टिक्युलेटम)।

वर्णन—यह वनस्पति दूसरे वृत्तों पर पैदा होता है इसके पत्ते नहीं होते मगर इसकी शाखाएँ इतनी पतली और चपटी होती हैं कि वे पत्तों की तरह दिखलाई देती हैं। इसकी शाखाओं की संधियों के पास दोनों तरफ छोटे२ फूल आते हैं। ये फूल रस भरे होते हैं। यह वनस्पति जामुन, धामन, अरीठा, शाम इत्यादि वृत्तों पर विशेष रूप से पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से बन्दाल शीतल, कड़वा-कसेला, मधुर रस युक्त, कामोद्दीपक, और धातुपरिवर्तक होता है। यह कफ, बात रक्तरोग, व्रण, मृगी और पित्त विकार में लाभदायक है।

छोटे नागपुर में इस वनस्पति को ऐसे ज्वर में जिस के साथ शरीर के अवयवों में दर्द रहता है, दिया जाता है।

बलूत (बंज)

नाम—हिन्दी—बंज, बलूत, बन। पंजाब—बन, बंज, दधुनबन, खरपत सेराई, खारशू, मारू, रिन, रिंज, वारी। काश्मीर—शिद्यार, शिला सुपारी। इङ्गलिश—Grey Oak। लेटिन—Quercus incana (करकस इनकेना)।

वर्णन—यह एक हमेशा हरा रहने वाला वृत्त होता है। इसकी छाल गहरे भूरे रङ्ग की होती है। इसके पत्ते ७.५ से १५ सेन्टिमीटर तक लम्बे और २.५ से ५ सेन्टिमीटर तक चौड़े होते हैं। यह वनस्पति हिमालय में ६॥ हजार से ७॥ हजार फीट की ऊँचाई तक पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इस वनस्पति के फलों को पंजाब में बलूत कहते हैं। यह फल सुजाक में मूत्रल वस्तु की तरह दिया जाता है और मन्दाग्नि, अतिसार, बच्चों के अतिसार और दमे के रोग में इसका एक संकोचक वस्तु की तरह उपयोग होता है। इस फल को उपयोग में लेने के पहिले इसके कड़वे तत्व को नष्ट करने के लिये यह जमीन में गाड़ दिया जाता है और फिर वहां से निकाल कर धोकर उपयोग में लिया जाता है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह पहले दर्जे में सर्द और दूसरे दर्जे में खुश्क होता है। यह पागलपन में लाभदायक है। आमाशय की खराबी से होने वाली मतली को रोकता है। पेचिश और आंतों के जखम में लाभदायक है। इसको पीसकर गर्भाशय में रखने से श्वेत प्रदर में लाभ होता है। दो हिस्से बलूत और एक हिस्सा कुंदर को पीसकर जैतून के तेल के साथ मिलाकर लेने से बार २ पेशाब का आना, बून्द २ पेशाब का आना या साथ में पेशाब का आना बन्द हो जाता है।

इब्नजहीर का मत है कि बलूत को पुरानी शराब में पीसकर बालों पर लगाने से बाल काले हो जाते हैं और उनकी जड़ें मजबूत हो जाती हैं। इसके दरख्त की जड़ को छाया में सुखाकर उसको पीसकर गर्भाशय में रखने से श्वेत प्रदर बन्द होता है। इसके पत्ते संकोचक होते हैं। इनको पीसकर जखम पर भुर-भुराने से जखम सूख जाता है। शरीर से खून का बहना भी बन्द हो जाता है।

बलूत में एक दुर्गुण यह है कि इसको खाने से सिर दर्द पैदा होता है क्योंकि इसमें गाढ़ापन होने से यह आमाशय में जाकर गैस पैदा करता है और वह गैस सिर के तरफ जाकर सिर में दर्द पैदा करती है।

मुजिर—इसको ज्यादा खाने से पेट फूलता है। आमाशय में गाढ़ापन आता है। सिर में दर्द पैदा करता है। वायु को बढ़ाता है और सुद्दे पैदा करता है।

दर्पनाशक—शिकन्जबीन और शक्कर। **प्रतिनिधि**—खरनूब।

मात्रा—४॥ माशे से २ तोले तक।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बजरठ

नाम—नेपाल—बजरठ, बदग्रट, फ्राटसिंघोली, शालशी। लेटिन—Quercus Lamellosa (करकस लेमेलोसा)।

वर्णन—यह भी एक बहुत बड़ा हमेशा हरा रहने वाला वृक्ष होता है। यह नेपाल, सिक्किम, भूटान और मनीपुर में पैदा होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसकी छाल और इसका फल एक संकोचक वस्तु की तरह उपयोग में लिया जाता है।

बहन

नाम—पंजाब—बहन, बेटी, भान, भानी, जंगली बेंटी, लभान, सफेदर। बंबई—बान, बहन। सिंध—बहन, भान, सफेदा। लेटिन—Populus Euphratica (पापूलस इफ्रेटिका)।

वर्णन—यह एक बड़ी जाति का वृक्ष होता है। जो सिंध, पंजाब और उत्तर पश्चिम हिमालय में १३॥ हजार बहन, भान, फीट की ऊँचाई तक पैदा होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—पंजाब और सिंध में इसकी छाल संकोचक वस्तु की तरह काम में ली जाती है।

बन अजवान

नाम—हिन्दी—बन अजवायन, ईपर। पंजाब—माशो, मारिभ्र, रांगसबूर, शेकाई। बम्बई-ईपान। यूनानी—सत स्राल, हमीर। उर्दू—हाशा। अंग्रेजी—Wild Thyme। लेटिन Thymus Serphyllum (थायमस सरफिलम)।

वर्णन—यह वनस्पति पश्चिमी हिमालय में काश्मीर से कुमाऊं तक ६ हजार फीट से २३ हजार फीट की ऊंचाई तक पैदा होती है। यह एक बहुत छोटा, नाजुक, बहुत सुगंधित, बहुशाखी और रुएंदार क्षुप होता है। इसकी ऊंचाई करीब बालिश्त भर होती है। इसके पत्ते डंठल रहित, लम्ब गोल होते हैं और इन पर छोटे २ तेलिया छींटे रहते हैं। इसके फूल छोटे और किरमची रंग के होते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत से यह वनस्पति तीक्ष्ण, सुस्वादु, ऋतुस्राव नियामक और कृमि नाशक होती है। यह यकृत और तिल्ली की शिकायतों, यकृत के दर्द और छाती के दर्द में लाभदायक होती है। दमा और ब्रोंकाईटीज में भी यह उपयोगी है। यह कफ और खून को पतला करती है। इसके पत्ते मृदु विरेचक, अग्नि वर्धक, पौष्टिक और गुर्दे तथा आंखों के रोग में लाभदायक होते हैं। ये खून को शुद्ध करते हैं और ब्रोंकाइटीज में लाभ पहुँचाते हैं।

पंजाब के अन्दर यह वनस्पति कमजोर नेत्रोंकी ज्योतिको बढ़ाने के लिए उपयोग में ली जाती है। पेट और यकृत की शिकायतों और पेशाब तथा मासिक धर्म की रुकावट में यह उपयोगी मानी जाती है। इसके बीज कृमिनाशक वस्तु की तरह उपयोग में लिये जाते हैं। इसका तेल दन्त शूल को रोकने के लिये दांतों पर लगाया जाता है।

यूरोप के अन्दर यह वनस्पति आक्षेपनिवारक, शांतिदायक और पौष्टिक मानी जाती है। इसका निर्यास आक्षेप युक्त खाँसी, हूपिंग कफ, जुकाम, और गले की सूजन के उपयोग में लिया जाता है। ज्ञान-तंतुओं की खराबी से अथवा हिस्टीरिया की वजह से होने वाले मस्तक शूल में यह लाभदायक मानी जाती है कब्जियत और नशे की वजह से होने वाले सिर दर्द में भी यह उपयोगी मानी जाती है। त्वचा पर होने वाले भिन्न २ प्रकार के फोड़े फुन्सियों पर इसका निर्यास बहुत सफलता के साथ लगाया जाता है।

डाक्टर देसाई के मतानुसार इस वनस्पति में पीव नाशक-मूत्रल, उत्तेजक, नेत्र ज्योति वर्धक, श्वास कास नाशक, संकोचक, कृमिघ्न, व्रणशोधक और व्रणरोपक इतने धर्म रहते हैं। इसका पीव नाशक धर्म बहुत उत्तम कोटि का होता है। इसके इन सब गुणों का केन्द्र स्थान इसमें पाया जाने वाला सुगन्धित और उड़नशील तेल होता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

इस वनस्पति का स्वरस, सिरका, सेंधा नमक और शहद के साथ देने से पुरानी खांसी, दमा और हूपिंग कफ में अच्छा लाभ होता है इससे कफ ढीला होता है। घबराहट कम होती है और छाती तथा पीठ का दर्द बंद हो जाता है। अग्निमांद्य रोग में और अन्न न हजम होने की वजह से आंतों में सड़ाईद होकर जो अतिसार होता है उसमें इस वनस्पति को सेंधा नमक के साथ देने से बड़ा लाभ होता है। आंतों के व्रण में इसका स्वरस, सिरका और शहद के साथ दिया जाता है। यह आंतों के लिये संकोचक वस्तु है। इसके देने से उदर शूल, बस्तिशूल कफ प्रमेह और दूध के समान पेशाब होने की बीमारी (कायल्यूरिया) में इसका काढ़ा सिरका और शहद के साथ देने से अच्छा लाभ होता है। जख्म और सब प्रकार के चर्म रोगों में यह एक उत्तम औषधि है। पीव को नष्ट करने के लिये यह औषधि बेजोड़ है। इससे रोगी को किसी प्रकार का त्रास नहीं होता। अग्नि से जले हुए स्थान पर इसके रस को घी में मिलाकर लगाया जाता है। संधियों की अकदन और संधियों की सूजन में इसको अरण्डी के तेल में पीस कर लगाते हैं और इसका काढ़ा पीने को देते हैं।

मात्रा—सूखी हुई वनस्पति की मात्रा १॥ माशे से ३ माशे तक, तेल की मात्रा १ बूंद से ३ बूंद तक, इसके सत्त की मात्रा पाव रत्ती से आधी रत्ती तक।

इस वनस्पति के अन्दर अजवायन में पाया जाने वाला थायमल नामक सत्व भी बहुत थोड़ी मात्रा में पाया जाता है।

बकपुष्पी

नाम—मराठी—बकपुष्पी। लेटिन—Yandellia Erecte (वेंडेलिया इरेक्टा)।

वर्णन—यह एक छोटी जाति का वर्षजीवी क्षुप होता है। इसकी शाखाएँ जड़ से ही निकलती हैं। इसके पत्ते बिना डंखल के होते हैं। यह वनस्पति हिमालय में काश्मीर से आसाम तक और बंगाल, मध्यभारत और दक्षिणी भारत में पाई जाती है।

गुण, दोष और प्रभाव—सुजाक के अन्दर इस वनस्पति का स्वरस घी में मिलाकर दिया जाता है। ऐसे बच्चों को जिनको हरे रंग के दस्त लगते हैं इसका स्वरस देने से बहुत लाभ होता है।

बसक

नाम—हिन्दी—बसक, बासक। भूतान—सिंगनामूक। नेपाल—असेरू, वांसक, बासक। लेटिन—Dichroa Febrifuga (डिक्रोआ फेब्रीफ्यूग)।

वर्णन—यह एक झाड़ी होती है जो नेपाल, हिमालय और खासिया पहाड़ियों पर होती है। इसकी कोंपलें चमकदार और बारीक रुएंदार होती है। इसके पत्ते एक दूसरे के विरुद्ध लगते हैं। इसके फूल नीले रंग के होते हैं। इसकी छाल फीके पीले रंग की, मुलायम और कुछ खुशबूदार होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसकी छाल ज्वरनाशक, वामक और ग्लानि पैदा करने वाली होती है। इसको चबाने से वमन होती है। पत्तों की क्रिया कुछ छाल की अपेक्षा सौम्य होती है।

यह औषधि नेपाल, भूटान, सिकिम और चीन में बहुत उपयोग में ली लाती है। मुलेठी के साथ इसका काढ़ा बनाकर उसमें थोड़ी सी शराब मिलाकर देनें का बहुत रिवाज है। मलेरिया ज्वर में यह औषधि काफी लाभदायक है। इससे वमन होकर दूषित पित्त निकल जाता है और उस पित्त के साथ ज्वर का विष भी निकल जाता है। दूषित पित्त निकल जाने से यकृत की क्रिया सुधर जाती है और रहा सहा विष दस्त की राह निकल जाता है। क्योंकि यह दस्त भी साफ लाती है। मतलब यह कि यह औषधि ज्वर के लिये एक बहुत उत्तम वस्तु है। मगर वृद्ध और अशक्त मनुष्यों को यह औषधि नहीं देना चाहिये। क्योंकि इस औषधि की क्रिया बहुत उग्र होती है।

मलाया, इण्डोचायना और चीन में इसकी डालियां और पत्ते सब प्रकार के ज्वरों में एक चमत्कारी औषधि समझी जाती है और इसकी जड़ का उपभोग पौष्टिक वस्तु की तरह किया जाता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बङ्ग

नाम - संस्कृत—बंग, रांग, चक्रसंग्य, स्वर्णज, नागजीवन, मृदबंग, गुरुपत्र, पूतिगंध, इत्यादि। हिन्दी—रांग, रांगा, वंग, कलई, कथीर। बंगाल—रांग, वंग। मराठी—कथील। गुजराती—कलई, कथीर। तेलगू—तगरम्। अरबी—रूसास। फारसी—अर्जीज। लेटिन—Stallum (स्टेलम)।

वर्णन—बङ्ग या रांगा एक मशहूर धातु है जो बरतनों पर कलई करने और फूटे हुए बरतनों को जोड़ने के काम में आती है।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत—राजनिघंटुके मतानुसार बङ्ग कड़वी, तिक्त, शीतल, कषाय रसान्वित लवण रस युक्त, सारक, प्रमेह नाशक, कृमिनाशक, दाह निवारक, कांतिकारक, रसायन और पांडुरोग नाशक होती है।

बंग हलकी, सारक, रूखी, गरम तथा प्रमेह, कफ, कृमि, पांडु और श्वास रोग को दूर करने वाली होती है। यह नेत्रों को लाभ पहुँचाने वाली और कुछ पित्तकारक होती है। जैसे सिंह हाथियों के समूह को नाश करता है उसी प्रकार बंग सब प्रकार के प्रमेहादिकों को नाश करती है। यह देह को पुष्ट करने वाली और इन्द्रियों को ताकत देने वाली होती है।

खांसी, श्वास, मंदाग्नि, पीनस, विषम ज्वर, प्रमेह और पांडु रोग में बङ्ग को लेना आवश्यक होता है।

बंग की जातियाँ—बङ्ग की खुरक और मिश्रक ये दो जातियां होती हैं। जो बङ्ग सफेद, नरम, चिकनी, तौल में भारी और बिना किसी शब्द के आग पर जल्दी गलने वाली हो उसको खुरक कहते हैं। मिश्रक बङ्ग श्वेत और श्याम मिश्रित रंग की रहती है। खुरक बंग उत्तम होती है।

औषधि प्रयोग में जो बंग सफेद, मुलायम, स्वच्छ, स्निग्ध, शीतल और चमकदार होती है वह उत्तम समझी जाती है।

बङ्ग को हमेशा शुद्ध करके उपयोग में लेना चाहिये। क्योंकि अशुद्ध बंग कुष्ठ, गुल्म, शूल, बात व्याधि, सूजन, पांडु, प्रमेह, भगंदर, रक्तविकार, क्षय, मूत्रकृच्छ्र, ज्वर, प्रमेह, पथरी, विद्रधि, इत्यादि अनेक प्रकार के रोगों को उत्पन्न करती है और विष के समान होती है।

बंग को शुद्ध करने की विधि

साधारण शुद्धि—तेल, मट्ठा, गोमूत्र, कांजी, कुल्थी का काढा। इन पांच चीजों में बङ्ग को गला २ कर सात-सात बार बुझाने से बङ्ग की साधारण शुद्धि हो जाती है।

बंग की विशेष शुद्धि—इमली की छाल का काढ़ा, कांजी का पानी, नीबू का रस, गोमूत्र, सज्जी खार का पानी, थूहर का दूध, आंकड़े का दूध तथा हल्दी के चूर्ण सहित निर्गुंडी का काढ़ा इन आठ चीजों में अलग २ बंग को गला गला कर सात-सात बार बुझाने से बंग की विशेष शुद्धि होती है।

आजकल बहुत से वैद्य दोनों प्रकार की पूर्ण शुद्धि इसलिये नहीं करते हैं कि बंग को कई बार बुझाने से सेर भर बंग का आध पाव तीन छटांक शेष रह जाता है। बाकी सब किट्ट हो जाता है। उस किट्ट में से बंग को निकालना बहुत मुश्किल होता है। इसलिये कई वैद्य उस किट्ट को फेंक देते हैं और इस डर से वे बंग की शुद्धि बराबर नहीं करते। तीन बार शुद्धि करके ही वे सन्तुष्ट हो जाते हैं। ऐसा करने से यद्यपि बंग के अन्दर दोष नहीं रहता है मगर उसके गुणों में वृद्धि नहीं होने पाती। इसलिये यहां पर बंग के किट्ट में से फिर बङ्ग को निकालने की एक विधि दी जाती है, जिससे बङ्ग के वजन का कम होने का जो डर रहता है वह उतनी मात्रा में नहीं रहेगा।

बङ्ग को बुझाते २ जो किट्ट इकट्ठा होता जाय उसमें से आधा सेर किट्ट लेकर उसमें २ तोला पीसा हुआ नोसादर और ४ तोला गुड़ डाल कर लोहे के कलछे में रखकर खूब गरम करें, जब वह खूब तप्त हो जाय तब उसको लोहे की कलछी से चलावे। ऐसा करने से बङ्ग सब बह कर इकट्ठा हो जायगा और किट्ट हलका पड़ कर एक तरफ हो जायगा। उस बङ्ग को जमीन पर ढाल कर डली बना लें।

इस प्रकार १०० बार भी बंग को शोधने पर बंग विशेष नष्ट नहीं होगा।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बंग को शोधना बड़ा दुस्तर कार्य है। जरासी गलती से इसमें बड़ी चोट पहुँचने का डर रहता है। क्योंकि तेल के सिवाय हर एक जल युक्त पदार्थ में इसको गलाकर डालने से यह एक दम बहुत जोर से उछलता है। जिससे शोधन कर्ता को चोट लगने का बहुत भय रहता है। इसलिये वंग, इत्यादि वस्तुओं को शुद्ध करने के लिये एक पिठर यंत्र बनाया जाता है। उसके बनाने की विधि इस प्रकार है। एक रतल धातु की शुद्धि के लिये लोहे का एक ऐसा तसला बनाना चाहिये जिसमें ८ रतल पानी समा जाय और उस तसले का ढक्कन भी उसी नाप का ऐसा हो जिसको ढकने में या उठाने में विलंब न लगे अर्थात् न बहुत सटा हुआ हो और न बहुत ढीला हो। उस ढकने के ठीक बीच में इतना बड़ा छिद्र होना चाहिये कि जिसमें मुट्ठी समा जाय। उस छिद्र के किनारे को हथोड़े से ठोक कर कुछ नीचा कर दे। उस छिद्र को किसी साफ पत्थर या शिला से ढँक दे जिससे उछलने वाला रांगा उससे टकरा कर वापस भीतर चला जाय। उसके पश्चात् गले हुए बंग के कलछे को ढक्कन के छेद के पास लाकर ठोके हुये किनारे के रास्ते से धीरे २ डालते जाय बंग को उस नली के द्वारा तसले में डालते समय यदि बङ्ग तसले के अन्दर उछलता रहे और शब्द भी करता रहे तो भी वैद्य को डरना नहीं चाहिये। इस प्रकार शुद्धि करने से बङ्ग उछलने का खतरा नहीं रहता।

जो लोग इतना आयोजन न कर सकें उनके लिये दूसरी, सरल विधि यह है कि मिट्टी या लोहे के जिस पात्र में वे बंग को बुझाना चाहें उस पात्र में गोमूत्र इत्यादि किसी भी शोधनीय द्रव्य को भर कर उसके ऊपर एक देशी चक्की पाट रख दें और उस पाट के छिद्र में से बङ्ग को गला २ कर डालते जायँ।

बंग भस्म की विधि

पहली विधि—लोहे की कढ़ाई में अथवा ३।४ कपड़मिट्टी किये हुए मिट्टी के कूंडे में बङ्ग को गड़ा कर थोड़ी २ अजवायन डालते जाँय और लोहे की कलछी से अथवा नीम के गीले डंडे से उसको हिलाते जायँ। इस प्रकार १ सेर बङ्ग की भस्म १ सेर अजवायन को जलाने से हो जाती है। अजवायन की जगह पीपल की छाल का चूर्ण या इमली की छाल का चूर्ण इन दोनों में से किसी एक को भुरभुराने से भी १ सेर चूर्ण में १ सेर बङ्ग की भस्म दो प्रहर में हो जाती है। इस भस्म को कपड़े में छान कर जो मोटा चूर्ण बचे उसको अग्नि पर रख कर फिर पूर्वोक्त विधि से अजवायन या पीपल की छाल का चूर्ण डालते रहने से उसकी भस्म हो जाती है।

दूसरी विधि—उपरोक्त बङ्ग भस्म और उसके समान भाग शुद्ध हरताल लेकर दोनों को नीबू के रस में दो दिन तक घोटें। फिर शुद्ध किये हुए सफेद रंग के एक बड़े शंख को लेकर लुग्दी को उस शंख में भर दें। फिर उस शंख के मुँह को उसी नाप की ठीकरी से ढक कर दृढ़ मुद्रा कर दें। जब मुद्रा सूख जाय तब उस शंख को एक कपड़मिट्टी की हुई हांडी में रख कर हांडी पर ढकना लगा कर उस ढकने पर भी दृढ़ मुद्रा कर दें। उस हांडी को तालादि भस्मकरी भट्टी पर रख कर ४ प्रहर की मध्यम आंच दें। जब वह हांडी उस आँच को सहन कर ले, तब उसको गज पुट में रख कर फूंक दें और स्वांग शीतल होने पर निकाल लें फिर उस हण्डी में से उस शंख को निकाल कर उस शंख समेत उस बङ्ग भस्म को खरल में घोंट लें।

यह बङ्ग भस्म प्लीहा, मंदाग्नि, श्वास, खांसी, इत्यादि रोगों पर बहुत अच्छा काम करती है। शरीर में केलसियम की कमी की वजह से जो भी उपद्रव पैदा होते हैं उनको यह दूर करती है।

तीसरी विधि—आधा पाव बङ्ग को एक मिट्टी के सिकोरे में रख कर अग्नि पर गला कर उसमें आध पाव शुद्ध पारद डाल दें। फिर इस पाव भर पिट्ठी को खरल में डालकर इसमें कपड़े से छाना हुआ शुद्ध हरताल का पाव भर चूर्ण डाल कर नीबू के रस में ४ प्रहर तक घोटे और फिर सबकी एक टिकिया बना लें। इस टिकिया को खूब सुखाकर डमरू यन्त्र में रखकर खूब सावधानी के साथ दो प्रहर की आंच दें। जब तक आंच लगती रहे तब तक ऊपर वाली हंडी पर एक आठ तह किया हुआ गीला कपड़ा बराबर रहना चाहिये और उस कपड़े को बहुत थोड़ी २ देर में बदलते जाना चाहिये। दो प्रहर की आंच पूरी होने के पश्चात् उस डमरू यन्त्र को खोलकर उसमें ऊपर वाली हांडी में लगे हुए पारद और हरताल के सत्व को अलग कर देना चाहिये और नीचे की हांडी में जमी हुई बङ्ग भस्म को निकाल कर उसमें आध पाव पारद और हरताल की नई कजली को डालकर नीबू के रस में घोंटकर टिकिया बनाकर डमरू यन्त्र में रखकर फिर फूंकना चाहिये। इस प्रकार तीन बार करने से बङ्ग की निरुत्थ भस्म

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

तैयार हो जाती है और पारद और हरताल के सत्व में समान भाग शुद्ध गंधक डालकर कजली करके सिंदूर रस बनाने की विधि से सर्वार्थकरी भट्ठी पर या चन्द्रोदयादि भट्ठी पर पका लेना चाहिये। जिससे उत्तम ताल सिंदूर रस तैयार हो जायगा।

उस विधि से बनी हुई बङ्ग भस्म को शहद के साथ चाटने से नपुंसकता, श्वास, कास और क्षय रोग में बहुत लाभ होता है और उपरोक्त विधि से बनाये हुए ताल सिन्दूर रस को भी अदरक के रस के साथ चाटने से हैजा, ज्वर, इत्यादि अनेक रोग दूर होते हैं।

बंगेश्वर रस—पाव भर बङ्ग को अग्नि पर गलाकर उसमें पाव भर पारा डाल दें। फिर शुद्ध मेंसिल, शुद्ध हरताल और संखिया इन तीनों को सम्मिलित रूप में आध सेर लेकर बंग और पारद की पिट्ठी में डाल दें। इसके पश्चात् इन सबके बराबर वजन में शुद्ध गंधक और पाव भर हींगलू डाल कर कजली कर लें। फिर इन सब चीजों को नीबू के रस में तीन दिन तक घोटें। जब यह पिट्ठी घोटते २ सूख जाय तब इसकी टिकियाएँ बनाकर नलिका डमरू यन्त्र में रखकर वज्र मुद्रा कर दें। फिर उस यन्त्र को तालादि भस्मकरी भट्ठी पर रखकर १६ प्रहर की अथवा जब तक गंधक जारण न हो तब तक तीव्र आंच दें। उसके पश्चात् ठण्डा होने पर उसको खोलें। नीचे की हांडी में बंगेश्वर रस मिलेगा और ऊपर की हांडी में अति उग्र सिंदूर रस प्राप्त होगा।

अगर इस बंगेश्वर रस के कुछ कच्चा रहने का सन्देह हो तो उसको इसी प्रकार एक बार और कर लेने से वह बिलकुल निरुत्थ हो जायगा।

यह दोनों ही वस्तुएँ अत्यन्त उग्र और गरम होती हैं। उचित अनुपान के साथ देने से यह अनेकों रोगों को नष्ट करती है और मनुष्य की जीवनी शक्ति, काम शक्ति और रोग प्रतिरोधक शक्ति को बढ़ाती है।

सुवर्ण बंग—शुद्ध बंग एक छटाँक को मिट्टी के सिंकोरे में रखकर आग पर तपाकर गला लें और उसमें उतने ही वजन का शुद्ध हिंगुलोत्थ पारद भी डाल दें। इन दोनों की पिट्ठी को खरल में डाल कर तीन प्रहर तक नींबू के रस और सेंध नमक के साथ घोटें। फिर कई बार पानी से घोट २ कर उसे धो डालें, उस कोमल पिट्ठी में १ छटांक शुद्ध आमला सार गंधक और एक छटांक नौसादर डालकर उसको तीन दिन तक ऐसी सावधानी से घोटें जिससे वह खरल से उछल कर नीचे न गिर जाय। उस कजली को कपड़ मिट्टी की हुई आतशी शीशी में भरकर उस शीशी को बालुका यन्त्र के बीच में रखकर, उस यन्त्र की सर्वार्थकरी भट्ठी को लोह जाली पर भरे हुए पत्थर के कोयलों पर रख दें और भट्ठी के नीचे बबूल की दो-दो लकड़ियों की आच दें। जब कोयले सिलग जायं तब लकड़ी जलाना बन्द कर दें।

जब यह खयाल हो कि शीशी का मुंह क्षार से बन्द हो गया है तब एक गरम लोहे की सलाई को लेकर उससे शीशी के मुंह को साफ करते चले जावें। अगर शीशी का मुंह साफ नहीं हुआ और उससे धुआँ बराबर न निकल सका तो वह शीशी जरूर फूट जायगी और सब रस बालू में मिल जायगा। २-३ घण्टों के बाद जब धुआँ निकलना बिलकुल बन्द हो जाय तब उसके मुँह पर एक डाट लगा दें। फिर सब शीतल होने पर शीशी को निकाल कर उस पर की मिट्टी को धीरे-धीरे चाकू से खुरच कर साफ कर लें और उसे गीले कपड़े से पोंछ डालें। फिर शीशी के मध्य भाग में एक घाँसलेट से भीगा हुआ धागा लपेट कर उस धागे में दियासलाई से अग्नि लगा दें जिससे वह शीशी बीच में से फूट जायगी। शीशी को पत्थर से कभी नहीं फोड़ना चाहिये। क्योंकि उससे औषधि में काँच के टुकड़े मिलने का डर रहता है। इसलिए उसको तरकीब से ही तोड़ना चाहिये। फिर उस शीशी के तल भाग और गलभाग में से सब औषधि को खुरच कर इकट्ठी कर लें। शीशी के मुख पर लगा हुआ कुछ क्षार भी मिलेगा। उसको भी निकाल कर अलग रख लें।

इस सुवर्ण बंग का रंग सोने के समान दीप्तिमान होता है। इसको एक रत्ती तक की मात्रा में एक माशा इलायची के दानों के चूर्ण और छ माशे शहद के साथ चटाने से हर प्रकार के प्रमेह महीने दो महीने में दूर हो जाते हैं।

शीशी के मुँह से निकला हुआ क्षार एक रत्ती की मात्रा में पान के साथ खिलाने से सब प्रकार की खांसी में लाभ होता है।

बङ्ग भस्म के गुण—बङ्ग भस्म शीतल होती है, बुद्धि को बढ़ाती है, क्षय रोग को नष्ट करती है। कांतिवर्धक होती है। इसके सेवन से बीसों प्रकार के प्रमेह दूर होते हैं। वृद्ध लोगों में नव यौवन का संचार होता है और जठराग्नि प्रदीप्त होती है।

उपयोग—अम्ल पित्त—हलदी के चूर्ण के साथ बंग भस्म को खाने से अम्ल पित्त दूर होता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

मंदाग्नि—पीपल के चूर्ण के साथ वंग भस्म का सेवन करने से मंदाग्नि मिटती है।

श्वास—कटेरी के चूर्ण और शहद के साथ बङ्ग को खाने से श्वास में लाभ होता है।

चर्मरोग—खैर के क्वाथ के साथ कुछ दिनों तक बङ्ग भस्म को सेवन करने से दाह, खाज, इत्यादि सब प्रकार के चर्मरोग दूर होते हैं।

नपुंसकता—बङ्ग भस्म को मलाई के साथ सेवन करने से नपुंसकता और इलायची तथा शहद के साथ लेने से सब प्रकार के प्रमेह मिटते हैं।

ज्वर—बंग भस्म पीपल और शहद के साथ लेने से ज्वर दूर होता है।

स्तम्भन—बंग भस्म को कस्तूरी के साथ लेने से स्त्री सहवास के समय शुक्र का स्तम्भन होता है।

वात व्याधि—बंग भस्म को लहसुन के साथ लेने से सब प्रकार की वात व्याधियों में लाभ होता है।

कुष्ठ—बंग भस्म को समुद्र फल के साथ लेने से कुष्ठ रोग में लाभ होता है।

अनेक रोग—बंग भस्म को मक्खन के साथ लेने से हड्डियां मजबूत होती हैं। नागर बेल के पान के साथ लेने से वीर्य की रक्षा होती है। जायफल के साथ लेने से शरीर पुष्ट होता है। तुलसी के पत्तों के साथ लेने से सब प्रकार के प्रमेह नष्ट होते हैं। घृत के साथ लेने से पांडु रोग मिटता है। मिश्री और नीबू के रस के साथ लेने से दाह नष्ट होता है। जायफल और असगन्ध के चूर्ण के साथ लेने से कमर की पीड़ा दूर होती है और शुद्ध सुहागे के साथ लेने से प्लीहा और गुल्म रोग दूर होता है।

बनावटें—बंग रसायन—वंग भस्म, अभ्रक भस्म, कान्त लौह भस्म, इन तीनों भस्मों को समान भाग लेकर गाढ़े कपड़े में छान कर अपामार्ग के स्वरस, धतूरे के पत्तों के स्वरस, अनार के पत्तों के स्वरस और नींबू के पत्तों के स्वरस में क्रमशः आठ २ दिन तक घोंटे। ज्यों २ रस सूखता जाय त्यों २ नया रस डालते जायँ। फिर इस चूर्ण को गोमूत्र, शिलाजीत का पानी और गूगल के पानी में आठ दिन तक घोट २ कर सुखा लें और कपड़ छान कर लें। फिर उन सबका जितना वजन हो उतना ही बबूल का गोंद और उतनी हीरासना मिलाकर खूब बारीक पीसकर कपड़े में छान लें।

इस बंग रसायन को १ माशे से २ माशे तक की मात्रा में हलदी के चूर्ण और गाय के मट्ठे के साथ प्रातःकाल सेवन करने से बीसों प्रकार के प्रमेह नष्ट होकर शरीर बहुत मजबूत हो जाता है।

बङ्ग के विकार की शांति—अशुद्ध अथवा कच्चे बंग को खाने से शरीर में कई प्रकार के विकार पैदा हो गये हों तो मेंढासिंगी को मिश्री के साथ तीन दिन तक खाने से सब प्रकार के विकार शान्त हो जाते हैं। (रसायन सार)

बड़हल

नाम—संस्कृत—अम्लक, एरावत, लकुच, निकुच, क्षुद्र फणस इत्यादि। हिन्दी—बड़हर, बड़इल, लकुच, घाव। बंगाल—दाहू, देफल, लकुच, मदार। बम्बई—लाहू, लोवी, लकुच। गुजराती—लकुच। मराठी—बधार, क्षुद्र फणस, घोटंबा। पंजाब—दहेओ, ट्यूक्स। नेपाल—बरार। आसाम—चंबा। उर्दू—बरहड़। तामील—इरप्पाला। तेलगू—नक्केरनु, कमारेगु। इङ्गलिश—Menkey Jack। लेटिन—Artocarpus Lagoocha (आर्टोकार्पस लकुच)

वर्णन—यह वनस्पति हिमालय की पहाड़ियां, खासिया पहाड़ियां, बरमा और सीलोन में पैदा होती है यह एक ऊँचे कद का वृक्ष होता है इस वृक्ष की ऊँचाई १५ से २८ मीटर तक होती है। इसका ऊपरी हिस्सा फैला हुआ रहता है। इसकी छाल खुरदरी और भूरे रंग की होती है। इसकी छोटी डालियां बहुत नाजुक होती हैं। इन पर नरम और भूरे रंग का रुआं रहता है। इसके पत्ते गोलाकार और तीखी नोक वाले रहते हैं। इनकी लम्बाई १० से ३० सेंटीमीटर तक और चौड़ाई ५ से १५ सेंटीमीटर तक होती है। इसके फूल गोल आकार के होते हैं। इसके फल नरम, पीले, मखमली और खाने लायक होते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत से इसका कच्चा फल गरम, भारी, कब्जियत करने वाला, मीठा खट्टा, त्रिदोष को पैदा करने वाला, रुधिर को दूषित करने वाला, नेत्रों को हानिकारक और वीर्य को नष्ट करने वाला होता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

इसका पका हुआ फल मधुर, खट्टा, वात पित्त नाशक, कफ कारक, रुचिवर्धक, कामोद्दीपक और कब्जियत करने वाला होता है।

यूनानी मत—यूनानी मत से इसका कच्चा फल ज्वर पैदा करने वाला होता है। इसका पका हुआ फल खट्टा मीठा और दुष्पाच्य होता है। यह पित्त विकार और कफ जनित ज्वरों में उपयोगी है। यकृत के लिये यह एक पौष्टिक वस्तु है। इसके बीज बच्चों के लिये उत्तम विरेचक हैं।

बंगाल में इसके एक या दो बीज अथवा इसका थोड़ा सा दूधिया रस जुलाब देने के काम में लिया जाता है। मुंडा जाति के लोग इसके दूधिया रस की एक या दो बूदें बच्चों को और आठ दस बूँदे जवान आदमियों को विरेचन के लिये देते हैं। फोड़े, फुन्सी और पैर की बिवाई में इसके छिलके का सत्व लगाया जाता है। घावों के ऊपर इसके छिलके को पीस कर लगाने से यह उसके मवाद को खींच लेता है।

बरबेल

नाम—संस्कृत—वेल्लतरु, दीर्घमूल, वीरद्रु, बहुवारक, वीरवृक्ष। हिन्दी—वरबेल, बिल्वान्तर। मराठी—बेल्लतूर। तामील—विडात्तर। तेलगू—वेणुतुरुचेट्टु। लेटिन—डेस्मान्थस सिनेरियस।

वर्णन—बिल्वांतर के वृक्ष मारवाड़ में तथा नर्मदा नदी के तट पर होते हैं। इस पर कांटे होते हैं। पत्ते खेजड़े के समान छोटे २ होते हैं। फूल पांचों रंग के आते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत से वेलतर-चरपरा, पथ्य, गरम, अग्निदीपक, रस और पाक में कड़वा, मलरोधक, वात रोग नाशक तथा मूत्रकृच्छ्र, पथरी, संधिशूल और मूत्राघात रोग को दूर करता है।

बगन

नाम—हिन्दी—यूनानी—बगन।

वर्णन—यह एक छोटी जाति की वनस्पति होती है। जमीन पर बिछी हुई रहती है। इसकी डालियाँ बारीक, पत्ते छोटे, लम्बे, नोकदार और गोल सिर के होते हैं। जहां पत्ता डाली से लगा होता है वहां का हिस्सा कुछ पतला होता है। फूल छोटा, गोल और डाली की हर एक गठान पर लगा हुआ होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत—यह वनस्पति पित्त, कफ और विष के उपद्रव को दूर करती है। पेशाब सम्बन्धी बीमारियों में लाभदायक है। नाक से बहने वाले खून को बन्द करती है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह गरम और खुश्क होती है। मखजनुल अदविया में लिखा हुआ है कि इसके पत्तों का रस पीने से बुखार, कफ, सरदी की खांसी, पेशाब का कठिनाई से आना और पेशाब की जलन मिट जाती है। मसाने की पथरी भी इससे गल जाती है इसके लेप से फोड़े पक जाते हैं।

ऐसा कहा जाता है कि पानी के एक घड़े में इसके पत्तों को भर कर उस घड़े में पानी भरकर उसका मुंह बंद करके घोड़े की लीद के ढेर में गाड़ देना चाहिये। १५ दिन के बाद उसको निकाल कर उस घड़े में से १ प्याला पानी रोज पिया जाय और खटाई और बादी की चीजों से परहेज रखा जाय तो बवासीर बिलकुल नष्ट हो जाता है।

बस्तेयाज

नाम—हिन्दी, यूनानी—बस्तेयाज।

वर्णन—यह एक कांटेदार वनस्पति होती है। इसके पत्ते छोटे, खुरदरे, फूल सफेद और नीले और डालियां १ बालिस्त लम्बी होती हैं। हर एक डाली के सिरे पर एक घुंडी होती है। इसके बीज अजवायन के बीज की तरह होते हैं। इनका स्वाद तेज होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसकी बारीक डालियों की दांत कुचरनी बना कर उससे दांत कुचरने से दांतों के मसोड़े मजबूत होते हैं। इसके लेप से सूजन बिखर जाती है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बकमून

नाम—हिन्दी, यूनानी—बकमून।

वर्णन—यह एक झाड़ है जो पानी के किनारे उगता है। इसकी ऊंचाई अनार के वृक्ष के बराबर होती हैं। इसकी डालियां बहुत कम होती हैं। इन डालियों में से एक प्रकार का तीव्र दूधिया रस निकलता है। इसके बीज काले दाने सरीखे होते हैं। जिनको हुब्बुल फकद कहते है।

गुण, दोष और प्रभाव—यह वनस्पति गरम और खुश्क होती है। यकृत, तिल्ली, आमाशय और आंतों के सुद्दों को बिखेरती है। तिल्ली के वास्ते यह विशेष रूप से लाभदायक है। इसके बीज को अगर स्त्री खावे तो वह एक साल तक गर्भवती न हो।

बलूती

नाम—हिन्दी, यूनानी—बलूती।

वर्णन—यह एक वनस्पति होती है जिसके पत्ते लहसन के पत्तो की तरह होते हैं। इनका रंग हरा और कालापन लिए हुए होता है। इन पर गहरे रुएँ होते हैं। इसका फूल गोल पीला तथा खाकी रंग का होता है। इसमें तेज गंध आती है।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत—यूनानी मत से इसकी जड़ तीसरे दर्जे में गरम और खुश्क है तथा पत्ते पहले दर्जे में गरम और खुश्क होते हैं। इसके पत्तों को कूटकर शहद में मिलाकर जख्मों पर लगाने से जख्मों की पीब साफ हो जाती है। इसको भूमल में दबाकर बवासीर पर बांधने से बवासीर में बड़ा लाभ होता है। इसको नमक के साथ पागल कुत्ते के काटे हुए मुकाम पर लगाने से लाभ होता है।

बन सटकी

नाम—हिन्दी, यूनानी—बनसटकी।

वर्णन—यह एक बहुशाखी वनस्पति होती है। इसके पत्ते मेंहदी के पत्तों की तरह मगर उनसे कुछ छोटे और फल मकोय के फल की तरह मगर उनसे कुछ चौड़े और चपटे होते हैं। फल कच्ची हालत में हरा और पकने पर भूरे रंग का हो जाता है। इस फल में बारीक २ बीज होते हैं। यह पौधा पानी के किनारे पर जमता है।

गुण, दोष और प्रभाव—यह वनस्पति गरम और खुश्क होती है। इसके फल और पत्तों को पीस कर गरम करके सूजन या जलोदर पर बांधने से लाभ होता है। इसके पंचांग को घोट कर पीने से बच्चा जल्दी पैदा होता है। गर्भाशय से बहने वाली सफेद पानी भी इससे रुक जाता है।

बलसी

नाम—हिन्दी, यूनानी—बलसी।

वर्णन—यह एक घास होता है। इसमें बहुत सी लम्बी २ डालियाँ होती हैं और इन डालियों पर पत्ते लगे हुए होते है। इसके पत्ते मजीठ के पत्तों की तरह, फूल सफेद और बीज सख्त तथा गोल होते है। इसके पत्ते ऐसे खुरदरे होते हैं कि कपड़ों में उलझ जाते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत—यूनानी मत से यह वनस्पति दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क होती है। पुरानी चर्बी में इस दवा को मिलाकर जहर बाद पर लगाने से बड़ा लाभ होता है। इसके पत्तों का रस गुलाब या बनफशा के तेल में मिलाकर कान में टपकाने से कान का दर्द मिट जाता है। एक हकीम का कहना है कि अगर इसके १७॥ माशे पत्तों को खिलाकर ऊपर से शराब पिला दी जाय तो सांप और नेवले का जहर उतर जाता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बरनोफ

नाम—हिन्दी, यूनानी—बरनोफ।

वर्णन—यह अनार के वृक्ष की तरह एक वृक्ष होता है। इसकी बहुत डालियां होती हैं। इसके पत्ते सेब के पत्तों की तरह मगर उनसे गहरे रंग के और रुएंदार होते हैं। इसका फूल खुशबूदार होता है और उसके बीच की केशर पीले रंग की होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत—बह दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क होता है। सूजन को उतारता है। दिमाग की गंदगी को निकालता है। इसके पत्तों का रस मां के दूध के साथ पिलाने से बच्चों की मृगी चली जाती है। बच्चों के पेट में वायु और कफ से मरोड़ों की पैदायश हो तो इसको पिलाने से फायदा होता है। इसके पत्तों को सुखाकर फोड़ों पर भुरभुराने से फोड़े सूख जाते हैं।

बरहानी

नाम—हिन्दी, यूनानी—बरहानी।

वर्णन—यह एक बहुशाखी पौधा होता है। इसके फूल सफेद और फल जैतून के फल की तरह होते हैं। इनका स्वाद तेज होता है इसकी ज़ड़ भीतर सफेद और ऊपर से पीली होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत—यह वनस्पति जलोदर, बवासीर, पेशाब की रुकावट, पथरी, सूजन, सिरकी गंज, यकृत की कमजोरी और आंख के जाले में मुफीद होती है। यह पहले दर्जे में गरम और तर होती है।

बरिया मिश्री

नाम—हिन्दी, यूनानी—बरिया मिश्री।

वर्णन—यह वनस्पति विशेष करके मिश्र में पैदा होती है। इसके पत्ते राई के पत्तों की तरह होते हैं। जो जड़ के पास से निकलना प्रारंभ होते हैं। इसके पौधे की शक्ल अजमोद के पौधे की तरह होती है और इसकी खुशबू सौंफ के समान होती है। इसके बीज हरे और बारीक होते हैं इसमें भी खुशबू आती है।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में खुश्क होती है। आंत, आमाशय और यकृत को ताकत देती है। इसको सूंघने से दिमाग की सर्दी बिखर जाती है। इसके बीज बहुत पौष्टिक होते हैं। इनके सेवन से कामेंद्रिय में बहुत उत्तेजना पैदा होती है। बवासीर में भी यह बहुत लाभदायक है। इसको हमेशा खाते रहने से और कुछ दिनों तक नागरमोथे के साथ इसको लगाते रहने से बवासीर में बहुत लाभ पहुँचाता है।

यह वनस्पति अधिक सेवन से दिमाग को नुकसान पहुँचाती है। इसकी मात्रा ३ माशे से ६ माशे तक है। इसका प्रतिनिधि जावित्री और दर्पनाशक नीलोफर होता है।

बरमून

नाम—हिन्दी, यूनानी—बरमून।

वर्णन—इस वनस्पति का पौधा कपास के पौधे सरीखा होता है। इसके नीचे के पत्ते कुछ चौड़े और ऊपर के पत्ते कुछ संकड़े होते हैं। इसके पत्तों के बीच में बीज लगते हैं। इसके बीज तरमीज से मिलते जुलते होते हैं। हर एक दो परदों के बीच में बीज रहता है। इसके पत्तों का रंग कुछ ललाई लिये हुए काला होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—यह वनस्पति पहले दर्जे में गरम और खुश्क होती है। सूजन को बिखेरती है। खुश्की पैदा करती है। खुजली में लाभदायक है।

हकीम जालीनूस का कहना है कि इसको खाना और इसको लगाना पागल कुत्ते के विष में लाभदायक है। इसकी मात्रा ४॥ माशे तक है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

ब्रह्मराक्षस

नाम—हिन्दी, यूनानी—ब्रह्मराक्षस।

वर्णन—मुजर्रबात अकबरी में इस वनस्पति का नाम मिलता है। इसके सिवाय इसका कहीं भी उल्लेख देखने में नहीं मिलता है।

गुण, दोष और प्रभाव—मुजर्रबात अकबरी में लिखा है कि इस वनस्पति को छाया में सुखा कर रख लें। इसमें से हर रोज आधा माशा औषधि गुड़ के अन्दर रखकर गोली बना कर खा लिया करें। इसके सेवन से कफ की खांसी और दमे में बहुत लाभ होता है।

बरसियान

नाम—हिन्दी, यूनानी—बर सियान।

वर्णन -यह एक छोटी जाति की वनस्पति होती है। इसमें फूल नहीं आते सिर्फ बीज आते हैं। मोहित आजम में लिखा है कि इसके बीज भिलावे की तरह होते हैं और ये गर्मी की शुरू मौसम में लगते हैं। मगर एक दूसरी यूनानी किताब में लिखा है कि इसके बीज अजमोद की तरह होते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत से यह वनस्पति गरम और तर होती है। इसको पीने और सूंघने से दिमाग में तरी पहुँचती है। ज्ञानेन्द्रियों को शक्ति मिलती है और नेत्रों की ज्योति बढ़ती है। यह वायु को तोड़ती है। शरीर के दोषों को दस्त की राह निकालती है। यकृत और आमाशय को ताकत देती है। इसको गुलाब जल में पीस कर शरीर पर मलने से शरीर के तमाम काले निशान और खुजली मिट जाती है।

बरफ

नाम—हिन्दी—यूनानी—बरफ। अंग्रेजी—Ice।

वर्णन—जमे हुए पानी को बरफ कहते हैं। यह दो प्रकार का होता है। एक कुदरती जो बादलों से ओलों के रूप में गिरता है अथवा हिमालय पहाड़ में हवा की सर्दी से पैदा होता है। दूसरा बनावटी जो यहां के कारखानों में मशीनरी से बनाया जाता है।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी हकीमों के मत से यह तीसरे दर्जे में सर्द और खुश्क होता है। मगर हकीम कुरेशी का मत है कि बरफ ठंडा होने पर भी दर असल में गरम होता है। क्योंकि वह अपनी ठंडक से शरीर की तमाम ठंडक को निकाल देता है और गर्मी को भड़का देता है। हकीम अरजानी ने भी इस मत को तिब्बे अकबरी में पसन्द किया है। हकीम नफीसी ने लिखा है कि बरफ अपनी ठंडक की वजह से आमाशय के मुंह में तकलीफ पैदा करता है और उसी तकलीफ को दूर करने के लिये तबियत पानी मांगती है और इसी से शरीर में गर्मी पैदा हो जाती है।

गर्मी का बुखार और तर तथा खुश्क खुजली में बरफ मुफीद है। अगर गले में जोंक चिपट जाय तो बरफ के खाने से वह निकल जाती है। इसको ललाट पर रखने से नाक से बहने वाला खून बन्द हो जाता है। यह आमाशय के कीड़ों को मार कर निकाल देता है। बरफ की पोटली बांध कर प्लेग की गठान पर १२ घन्टे तक रखने से गठान बैठ जाती है।

बरफ की दो विशेषताएँ विशेष रूप से ध्यान में रखने के योग्य हैं। पहली तो यह कि यह शरीर की रक्त-वाहिनियों का संकोचन करती है। इसलिये शरीर के किसी भी अंग से चाहे जितना तेज रक्तप्रवाह हो रहा हो और वह दूसरी औषधियों से बन्द न होता हो तो उस जगह बरफ का टुकड़ा रख देने से फौरन बन्द हो जाता है। दूसरी बात यह है कि शरीर का तापक्रम ज्वर में या दूसरी किसी बीमारी में बहुत बढ़ गया हो और वह किसी दूसरी औषधि से कम न होता हो तो बरफ को सिर पर रखने से फौरन कम हो जाता है। अतः प्रयोग में भी बरफ से कुछ उपचार किये जाते हैं, मगर इसका अधिक सेवन जैसा कि आज कल गर्मी के दिनों के अन्दर शहरों में होता है, मनुष्य शरीर को बहुत नुकसान पहुँचाता है। लोग गर्मी में ठंडक और तरी प्राप्त करने के लिये इसका सेवन करते

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

हैं मगर वास्तव में यह शरीर में बहुत खुश्की पैदा करता है और जठराग्नि को मंद करता है। इसलिये बहुत कम सेवन करना चाहिये।

बच्छनाग काला

नाम—संस्कृत—वत्सनाभ, गरल, विष, ब्रह्मपुत्र, अमृत, गरद, जांगल, हलाहल, तीक्ष्ण, रसायन, प्राणहर। हिन्दी—बच्छनाग, मीठा विष, सींगिया विष। बंगाली—विष, कट विष, वत्सनाभ विष। बम्बई—बच्छनाभ। गुजराती—वच्छनाग, सींगड़ियों वच्छनाग। मराठी—वच्छनाग। तामील—विषनावि। तेलगू—अतिवस, वसनवि। लेटिन—Aconitum Ferox (एकोनिटम फेरोक्स)।

वर्णन—यह वनस्पति नेपाल के अल्पाइन हिमालय प्रान्त में पैदा होती है। इसके पौधे का प्रकांड सीधा रहता है। इसके पत्ते एक दूसरे के आमने सामने रहते हैं। ये अखंड होते हैं। इसकी जड़ें गठानदार होती है। ये गहरे बादामी रंग की होती हैं, कोई २ पीले रंग की भी होती है।

बच्छनाग की करीब १८० जातियों का पता अभी तक लग चुका है लेकिन ५० से अधिक यूरोपियन जातियां और २४ भारतीय जातियों का अभी तक ऐसा पता लग चुका है। जिनमें प्रभावशाली उपहार पाये जाते हैं। इन जातियों में एकोनिटम नेपलेस, एकोनिटम फेरोक्स, एकोनिटम हैट्रोफिलम (अतीस), एकोनिटम स्पिकेटम, इत्यादि जातियां विशेष रूप से प्रसिद्धि में आई हैं और उनका वर्णन यहां पर किया जायेगा।

बच्छनाग की जड़ जाड़े के अंत में अथवा बसंत के प्रारंभ में जब तक इस वृक्ष में नये पत्ते नहीं फूटते तबतक खोद कर सुखा लेते हैं। इसके ताजे फूलों की छड़ियां और पत्ते उस वक्त तोड़ते हैं जब फूल खिलने ही वाला हो।

काले अथवा तेलिया बच्छनाग की जड़ें ऊदी रंग की होती हैं। इनका आकार गाजर के समान होता है मगर बहुत ऊबड़ खाबड़, छोटा बड़ा और साधारणतया २-४ इंच लम्बा होता है। अधिक दिनों तक पड़े रखने पर यह साफ काले रंग की हो जाती है। बरसात के दिनों में यह बहुत चीठी और सींग के समान हो जाती हैं। इनको हाथ पर मसलने से ऊदी रंग चढ़ जाता है। इनमें बहुत उग्र गंध होती है। इसका जबान पर जरा सा स्पर्श होते ही जबान में जड़ता पैदा हो जाती है और बहुत देर तक टिकती है। इसलिए इसकी असली नकली की परीक्षा करने के लिये इसको जबान पर कभी नहीं लगाना चाहिये।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से बच्छनाग अत्यन्त मधुर, गरम, वात-कफ-नाशक और कंठरोग तथा सन्निपात को दूर करने वाला होता है। यह पित्त और संताप को उत्पन्न करता है। यह प्राणनाशक होता है।

इस विष में रूक्ष, उष्ण, तीक्ष्ण, सूक्ष्म, आशु, व्यवायी, विकासी, विशद, लघु और अपाकी ये १० धर्म रहते हैं। यह अपने रूक्ष गुण से वायु को कुपित करता है। उष्ण गुण से पित्त और रक्त को कुपित करता है। तीक्ष्ण गुण से बुद्धि को भ्रमित करता है और मर्म बन्धन को छिन्न भिन्न करता है। सूक्ष्म गुण से मनुष्य-शरीर के सब अवयवों में हठपूर्वक प्रवेश करके उनकी क्रियाओं को प्रकाश में लाता है। आशु गुण से अत्यन्त शीघ्र अपने प्रभाव को घोषित करता है। व्यवायी गुण से प्रकृति को नष्ट करता है। विकासी गुण से शारीरिक वातादि दोष, रसादि धातु और मूत्रादि मल के समूह को फैलाता है। विशद गुण के द्वारा अत्यन्त दस्तों को लाता है। लघु गुण की वजह से बहुत कठिनाई से वश में आता है और अपाकी गुण की वजह से बहुत दुर्जर और बहुत दीर्घकाल तक क्लेश का कारण होता है।

लेकिन शुद्ध किया हुआ और विधिपूर्वक सेवन किया हुआ विष रसायन, बलकारक तथा वात, श्लेष्म, कुष्ठ, वातरक्त, अग्निमांद्य, श्वास, खांसी, प्लीहा, उदररोग, भगंदर, गुल्म, पांडु और व्रण का नाश करता है। युक्तिपूर्वक सेवन करने से यह बलदायक, रसायन, कामोद्दीपक और त्रिदोषजन्य रोगों को नष्ट करने वाला होता है।

बच्छनाग को शुद्ध करने की विधि—सिंगिया विष और बच्छनाग विष को ३ दिन तक गोमूत्र में पड़ा रखें मगर रोज पुराने गोमूत्र को निकाल कर उसमें नवीन गोमूत्र डालते रहें। तीसरे दिन उस बच्छनाग को गोमूत्र में औटा कर निकाल लें और उसके छोटे २ टुकड़े करके धूप में सुखा लें। इसी क्रिया से बच्छनाग शुद्ध हो जाता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बछनाग को शुद्ध करने से उसका विषैला प्रभाव कम हो जाता है और उसका अवसादक गुण कम होकर उसमें उत्तेजक गुण पैदा हो जाता है।

बच्छनाग से शरीर के भिन्न २ अवयवों पर होने वाले प्रभाव—बच्छनाग को पेट में देने से आमाशय के ज्ञानतन्तुओं में जड़ता आ जाती है और आमाशय में कफ और रस की कमी हो जाती है। इन गुणों की वजह से आमाशय की पीड़ा, जलन और गर्भावस्था की वमन को बन्द करने के लिये बच्छनाग का प्रयोग किया जाता है। इसको छोटी मात्रा में देने से आमाशय की पाचन शक्ति बढ़ती है।

बच्छनाग के तत्व रक्त के अन्दर बहुत जल्दी मिल जाते हैं और रक्त में मिलकर हृदय केन्द्र, श्वासोच्छ्वास के केन्द्र, त्वचा और मूत्र पिंड पर बहुत शीघ्र अपने प्रभाव बतलाते हैं। बच्छनाग से नाड़ीका वेग कम हो जाता है। त्वचा में स्निग्धता पैदा होती है और पेशाब का परिमाण बढ़ जाता है। हृदय के ऊपर इसकी क्रिया विशेष रूप से अवसादक होती है। जिससे हृदय की धड़कन और उसका जोर कम हो जाता है। नाड़ी शिथिल हो जाती है। श्वासोच्छ्वास की क्रिया मंद हो जाती है। पसीना और पेशाब बहुत छूटता है। शरीर के सब ज्ञान तंतुओं में थोड़ी बहुत जड़ता पैदा हो जाती है। इन सब गुणों की वजह से बच्छनाग का उपयोग ज्वर और वेदना युक्त बीमारियों में किया जाता है। ज्वर के अन्दर बच्छनाग को देने से पसीना होता है। पेशाब अधिक होता है और नाड़ी की गति शांत हो जाती है इसी प्रकार शरीर के भीतर होने वाली सूजन को भी कमी हो जाती है। बच्छनाग में वेद-नाशामक गुण रहता है। पर यह वैद्यकीय प्रमाणों में देने से विशेष सौम्य होता है अर्थात् बच्छनाग को अफीम और खुरासानी अजवायन अथवा और किसी पीड़ा शामक द्रव्य के साथ मिलाकर देते हैं।

बच्छनाग के अन्दर सूजन को नष्ट करने का गुण भी रहता है मगर इसका प्रभाव सिर्फ बच्चों के अन्दर ही दिखलाई देता है। वृद्ध मनुष्यों की सूजन पर इसका बिलकुल असर नहीं होता है। बच्चों को किसी भी प्रकार की सूजन के प्रारंभ में उदाहरणार्थ गले की सूजन, श्वासनलिका की सूजन, फुफ्फुस की सूजन, फुफ्फुस के परदे की सूजन, हृदय की सूजन, आंतों के परदे की सूजन, संधियों की सूजन, इत्यादि रोगों के प्रारंभ में ही बच्छनाग को देने से सूजन की अगली अवस्था तक पैदा नहीं होने पाती। करीब १८ वर्ष तक के लड़कों के लिये यह औषधि लाभदायक सिद्ध होती है। बच्छनाग की १ मात्रा एक साथ देने से जो लाभ होता है उसकी अपेक्षा १ मात्रा के आठ भाग करके थोड़ी २ देर के अन्तर से उनको देने से अधिक लाभ होता है।

बोस, महस्कर और केस के मतानुसार यह वनस्पति पेट में जाकर सबसे पहले हृदय की गति को धीमी करती है, फिर रक्त के दबाव को हलका करती है। इसके पश्चात् यह परिवर्तीय रक्त बहाव को तेज करती है। इसके बाद में हृदय की गति कुछ तेज होती है और रक्तभार भी बढ़ता है। इसकी जड़ को गोमूत्र में शुद्ध कर लेने पर यह हृदय की गति को घटाने के बजाय बढ़ाती है और रक्तभार तथा परिवर्तीय रक्तबहाव को बढ़ाती है। अगर गोमूत्र के बजाय गाय के दूध में इसको शुद्ध किया जाय तो उपरोक्त परिवर्तन और भी साफ रूप से दृष्टिगोचर होते हैं।

इसकी बिना शुद्ध की हुई जड़ में १-४ प्रतिशत कुल उपक्षार रहते हैं और गोमूत्र में शुद्ध की हुई जड़ में सिर्फ १-२७ प्रतिशत उपक्षार रहते हैं। गोमूत्र के साथ शुद्ध करके इसे धूप में सुखा लेने पर इसके अलके लाइडस, एको-नाइटस और सूडेकोनीटाइन में कुछ परिवर्तन हो जाता है। इसमें बेंझोइल एकोनाइन और बेरेट्राइल एकोनाइन नामके विषैले पदार्थ थोड़ी मात्रा में पाये जाते हैं।

डा० मुडीनशरीफ का कथन है कि यह वनस्पति ब्रिटिश और भारतीय फरमाकोपिया में सम्मत मानी गई है। कुछ साल पहिले मैंने स्वयं बच्छनाग की सफेद जाति का थोड़ी मात्रा में उपयोग किया। मैं यह कह सकता हूँ कि इसका भीतरी प्रयोग इतना खतरनाक नहीं है जितना कि यूरोप में पैदा होने वाली बच्छनाग की जड़का। मैं यह कहने में नहीं हिचकिचाऊंगा कि यह भारत की अत्यन्त उपयोगी औषधियों में से एक है। मधुप्रमेह या डायबिटीज रोग में इससे बहुत लाभ होता है। जिस दिन से इसका उपयोग शुरू किया जाय उसी दिन से अधिक मूत्र का जाना बन्द हो जाता है और शक्कर भी कम हो जाती है। अनैच्छिक वीर्यस्राव और अनैच्छिक मूत्रस्राव पर भी इसका बहुत ही अच्छा प्रभाव होता है। पक्षाघात और कुष्ठ के रोगियों पर भी यह बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है। एकोनाइट फेरोक्स के गुण इस औषधि की अन्य जातियों के गुणों से उत्तम होते हैं यह मादिल है और इसका प्रभाव भी निश्चित और एक सरीखा होता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

यूनानी मत—यूनानी मत से बच्छनाग चौथे दर्जे में गरम और खुश्क होता है। शुद्ध किया हुआ बच्छनाग बहुत थोड़ी मात्रा में देने से कुष्ठ और सफेद दाग में लाभ पहुँचाता है। यह कामशक्ति को बढ़ाता है, आमाशय, यकृत और मस्तिष्क को ताकत देता है, खून को साफ करता है, कफ को निकाल देता है, वायु को बिखेरता है, अर्द्धाङ्गवायु, जलोदर, जबान का तुतलाना, दांतों का दर्द और आँख की बीमारियों में लाभदायक है। मगर इन सब कामों में इसका उपयोग बहुत सावधानी से करना चाहिये। कफ की पुरानी बीमारी और खांसी में भी यह लाभ पहुँचाता है। इसका लेप जख्म को फायदा पहुंचाता है

बच्छनाग के विष की प्रतिक्रिया—बच्छनाग को अधिक मात्रा में ले लेने से मनुष्य के सब अंगों की क्रियाशक्ति शिथिल हो जाती है। शरीर के भीतरी अंग, होठ और जबान सूख जाते हैं। आँख की पुतली फिर जाती है। चक्कर आने लगते हैं और मृगी के दौरे आने की सरीखी हालत हो जाती है। फिर नाक से खून बहना शुरू हो जाता है और आदमी बेहोश हो जाता है। पेशाब से खून जाने लगता है। अक्ल में फितूर पैदा हो जाता है। जबान पर कालापन आ जाता है और अन्त में सन्निपात की सी हालत होकर आदमी मर जाता है।

चिकित्सा—बच्छनाग की चिकित्सा तब ही हो सकती है जब कि वह थोड़ी मात्रा में खाया गया हो और समय रहते उसका इलाज शुरू हो गया हो। अधिक मात्रा में खा लेने पर या अधिक विलम्ब हो जाने पर इसका इलाज असम्भव हो जाता है। इसके इलाज में पहले पहल वमन कराना चाहिये। फिर कपूर को गुलाब के अर्क और खुरफे के बीजों के साथ खिलाना चाहिये। बरफ का खिलाना भी इसमें लाभदायक होता है। हृदय और यकृत के ऊपर चन्दन, कपूर और गुलाब का अर्क वेद मुश्क में पीसकर लेप करना चाहिये। ताजा दूध, जौ का सत्तू, खट्टे अनार के दानों का रस, तरबूज का रस, बेदाना या इसबगोल का लुआब भी इसमें लाभ पहुँचाता है। यूनानी की दबाउलमिस्क मौत दिल जवाहरदार का चटाना भी इसके विष में लाभ पहुँचाता है।

उपयोग-गठिया—गठिया और छोटे जोड़ों की सूजन पर बच्छनाग के तेल की मालिश करने से और बहुत थोड़ी मात्रा में पेट में देने से गठिया और छोटे जोड़ों की सूजन मिटती है।

मूत्रकृच्छ्र—शुद्ध बच्छनाग को आधे चावल भर की मात्रा में देने से मूत्रकृच्छ्र मिटता है।

मधुप्रमेह—१ तोला शुद्ध बच्छनाग में ७ तोला अरारोट मिलाकर उसमें से आधी रत्ती से १ रत्ती तक की मात्रा में देने से मूत्रातिसार, मधुप्रमेह, पक्षाघात और कुष्ठ रोग में बहुत लाभ होता है।

रसायन—बच्छनाग में समान भाग सुहागा मिलाकर थोड़ी मात्रा में जो इसको खाने की आदत डालता है वह दीर्घायु होता है। उसकी ज्ञानेन्द्रियाँ शक्तिशाली हो जाती हैं। शरीर में तेज और जोश बना रहता है। उसकी कामशक्ति हमेशा जाग्रत रहती है और हृदय की गति बहुत धीमी और व्यवस्थित रहती है। बुखार, मंदाग्नि, गठिया, फोड़े फुन्सी, इत्यादि बीमारियों से वह बचा रहता है।

कण्ठमाला—बच्छनाग को नींबू के रस में घोट कर लेप करने से कण्ठमाला में लाभ होता है।

बिच्छू का बिष—बच्छनाग का लेप करने से और इसको थोड़ी मात्रा में खिलाने से बिच्छू का विष उतरता है।

बादी के दर्द—कुटे हुए २॥ तोला बच्छनाग को अलसी के आधा सेर तेल में औटाकर उस तेल की मालिश करने से हर किस्म के बादी के दर्द आराम होते हैं।

निमोनिया—दूधिया बच्छनाग को बहुत थोड़ी मात्रा में देने से निमोनिया में लाभ होता है। मगर शर्त यह है कि जब बीमारी शुरू हो और बुखार तेज हो तब इसको देना चाहिये।

इसके अतिरिक्त गठिया, गृध्रसी और धनुर्वात में भी इससे बहुत लाभ होता है।

बनावटें—माजून बच्छनाग—हरड़ काली और चित्रक तीन २ तोला, पीपल १॥ तोला, बच्छदाग दूधिया ६ माशे, इन सबको पीस छानकर गाय के घी में चिकना करके १६॥ तोले शहद में मिला लें। इन माजून को १॥ माशे से लेकर ३ माशे तक की मात्रा में देने से श्वेत कुष्ठ, दमा इत्यादि रोगों में लाभ होता है और मनुष्य का सर्वाङ्गीण शक्तियां बढ़ती हैं। इसको लेने के पहिले पेट साफ करने के लिये जुलाब ले लेना चाहिये।

माजून बच्छनाग नं० २—हरड़, बहेड़ा, आंवला, चित्रक, सब एक २ तोला, जायफल, सफेद इलायची के बीज, कुन्दर, मजीठ, कालीमिरच, गजकेशर, पीपल, नकछिकनी, प्याजदस्ती (कोली कांदा) का असारा और

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

तेजपात। ये सब चीजें तीन २ तोला, दूधिया बच्छनाग १॥ तोला इन सबको कूट छानकर शक्कर की चासनी में मिलाकर माजून बना लें। इस माजून को दो माशे की मात्रा में लेने से उपरोक्त सब फायदे होते हैं।

तिला बच्छनाग—बच्छनाग काला १ तोला, अकरकरा १ तोला, सिंदूर १ तोला, आक का दूध ४ तोला, गाय का मक्खन १० तोला। इनमें जो दवाइयाँ पीसने सरीखी हों उनको पीसकर आक के दूध और मक्खन के साथ उनको कढ़ाई में डालकर नीम की लकड़ी में तांबे का पैसा लगाकर उससे ४ दिन तक खूब घोटे और फिर कुछ दिनों तक पड़ा रखें जिससे कि उसकी तेजी कम हो जाय।

इस तिला में से १ माशा लेकर रात के समय लिंगेन्द्रिय पर सीवन और सुपाड़ी छोड़कर मालिश करें और ऊपर से नागरवेल का पान बांध दें। सवेरे गरम पानी से उसको धो डालें। अगर सरदी का मौसम हो तो मालिश करने के पहिले दवा को जरा सा गरम कर लिया करें। इस तिला के प्रयोग से कुछ ही दिनों में लिंगेन्द्रिय की नसों की कमजोरी, बाँका टेढ़ापन, हस्तमैथुन तथा दूसरी कुटेवों से पैदा हुई नपुंसकता मिट जाती है और मनुष्य की कामशक्ति जाग्रत होती है।

बच्छनाग दूधिया

नाम——संस्कृत—वत्सनाभ। हिन्दी—सफेद बछनाग। काश्मीर—वनबलनाग। पंजाब—दूधिया विष। लेटिन—Aconitum Napellus (एकोनिटम नेपलेस)।

वर्णन—इस बच्छनाग का क्षुप हिमालय में तथा यूरोप में पैदा होता है। इसके पत्ते और जड़ें औषधि प्रयोग में काम आती हैं। इसकी जड़ें काले बच्छनाग की अपेक्षा छोटी होती है। ये एक से तीन इञ्च तक लम्बी, गाजर के आकार की, ऊपर से ऊदी रङ्ग की और भीतर से सफेद होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसके गुण भी काले बच्छनाग के समान ही होते हैं। मगर यह उसकी अपेक्षा सौम्य होता है। यह कहा जा सकता है कि काला बच्छनाग बाह्य उपचार और लेपादि द्रव्यों के लिये विशेष उपयोगी होता है। दूधिया बच्छनाग खाने के काम में उत्तम होता है। दूधिया बच्छनाग में काले बच्छनाग की अपेक्षा कम विषैले और सौम्य तत्त्व रहते हैं। इसका लेप त्वचा के ऊपर करने से त्वचा की स्पर्शशक्ति बहुत कम हो जाती है। मुंह में जबानपर इसको स्पर्श करने से पहिले जबान पर चींटी चलने सरीखा अनुभव होता है, फिर लार छूटने लगती है और फिर जबान में जड़ता पैदा होती है जो बहुत देर तक कायम रहती है। पेट में जाने पर यह पेट की उष्णता को बढ़ाता है। आमाशय के ज्ञान तन्तुओं को जड़ कर देता है। इससे नाड़ी का वेग और उसकी शक्ति शिथिल हो जाती है, हृदय की गति धीमी तथा शांत हो जाती है तथा पेशाब और पसीने की तादाद बढ़ जाती है।

इस औषधि में नाड़ी और हृदय शामक धर्म के साथ २ ज्वर और शोथ नाशक धर्म भी बहुत प्रभावशाली रहता है। यह एक प्रभावशाली अवसादक, वेदनानाशक, सूजन को नष्ट करने वाला, पसीना लाने वाला और बड़ी मात्रा में तीव्र विष होता है। यह रक्त में बहुत जल्दी घुस जाता है और रक्ताभिसरण पर इसकी अच्छी क्रिया होती है। डिजिटेलिस की तरह बच्छनाग भी हृदय की पेशियों और हृदय में जाने वाली वात नाड़ियों को उत्तेजना देता है जिससे हृदय की गति मंद होती है और हृदय को आराम मिलता है। उसके पश्चात् रक्त का दबाव कम होता है। मगर तत्पश्चात् इससे हृदय की गति और रक्त का दबाव बढ़ता है और हृदय की क्रिया अव्यवस्थित होकर नाड़ी की गति बिगड़ जाती है। मगर यह स्थिति उसकी अधिक मात्रा होने पर ही होती है। प्रामाणिक और अल्प मात्रा से यह उपद्रव नहीं होते हैं।

बच्छनाग एक उत्तम सूजन नाशक औषधि है। गले के अन्दर टांसिल्स में होने वाली सूजन इसके प्रयोग से बहुत जल्दी उतर जाती है। सूजन युक्त ज्वर में अथवा कफ प्रधान नवीन ज्वर में सूजन को कम करने के लिये बच्छनाग को प्रारंभ से ही देना चाहिये। कफ और वात प्रधान रोगों की यह एक प्रभावशाली और प्रधान औषधि है।

इसको छोटी २ मात्रा में बार २ देने से यह बहुत उत्तम कार्य करती है। बच्चों और युवक पुरुषों के लिये यह विशेष रूप से लाभदायक होती है। वृद्ध पुरुषों पर इसका उपयोग नहीं करना चाहिये। बच्छनाग का वेदना-

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

शामक गुण बहुत उत्तम होता है। इसलिये मस्तकशूल, दंतशूल, मज्जा तन्तुओं का शूल, इत्यादि पीड़ा युक्त रोगों में इसको पेट में देने से और इसका लेप करने से बड़ा लाभ होता है।

आमाशय की पीड़ा और जलन तथा गर्भावस्था की वमन में इसको देने से बड़ा लाभ होता है। हृदय की धड़कन तथा ज्ञान तंतुओं की वजह से होने वाली धड़कन (Nerves Palpitation) को कम करने के लिये और रक्ताभिसरण के दबाव को कम करने के लिये भी यह एक उत्तम वस्तु है। सर्दी की वजह से मासिक धर्म एक दम बन्द हो गया हो अथवा मासिक धर्म बहुत होता हो तो दोनों ही हालतों में बच्छनाग को देने से बड़ा लाभ होता है। मधु प्रमेह, बहुमूत्र, स्वप्नदोष, इत्यादि रोगों में बच्छनाग को देने से पेशाब और शक्कर की तादाद दिनों दिन कम होती जाती है। आमवात, संधिवात, श्वेत कुष्ठ, वातरक्त इत्यादि रोगों में भी इसका उपयोग होता है।

इसकी मात्रा, इसके विष की प्रतिक्रिया और उस प्रतिकिया को शांत करने के उपाय, काले बच्छनाग के समान ही समझना चाहिये।

जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है हमेशा इस बात का ख्याल रखना चाहिये कि शोधन करने और खाने के कार्य में हमेशा दूधिया बच्छनाग ही लेना चाहिये। काला बच्छनाग बहुत उग्र होता है। इसलिये उसको सिर्फ लेप के ही काम में लेना चाहिये।

उपयोग—व्रण शोथ ज्वर—बच्छनाग शुद्ध, शुद्ध हींगलू, शुद्ध सुहागी, नागदन्ती; निर्गुण्डी का रस। इन सब चीजोंको समान भाग लेकर पीसकर आधी २ रत्तीकी गोलियां बना लेना चाहिये। इन गोलियों में से एक गोली योग्य अनुपान के साथ देने से व्रण शोथ ज्वर में बहुत लाभ होता है।

अभिष्यन्दयुक्त ज्वर—कुनेन, कर्पूर और शुद्ध बच्छनाग को समान भाग लेकर आधी रत्ती की मात्रा में देने से अभिष्यंदयुक्त ज्वर मिटता है।

कफ ज्वर—बच्छनाग, शुद्ध सुरमा, शुद्ध शोरा, शुद्ध अवसाद और कपास की जड़ की छाल इन सब औषधियों को अडूसे के रस में घोट कर एक २ रत्ती की गोलियां बना लेना चाहिये। कफ ज्वर में इन गोलियों को देने से बड़ा लाभ होता है।

वातविकार—शुद्ध बच्छनाग, शुद्ध मेनसिल और शुद्ध धतूरे को पारिजात के रस में खरल करके देने से सब प्रकार की वात व्याधियां दूर होती है।

आमाशय की व्याधियां—बच्छनाग, प्रवाल भस्म, जायपत्री, लवंग इन सब औषधियों को भांगरे के रस में खरल करके देने से आमाशय की सब व्याधियां मिटती हैं।

बख़ूर-इ-मरियम (हाथजोरी)

नाम—हिन्दी—हाथजोरी। उर्दू—बख़ूर-इ-मरियम। ईरान—चुबक उशनान। लेटिन—Gyclamen Persicum (सायक्लेमेन परसीकम)।

वर्णन—इस वनस्पति की उत्पत्ति ईरान में होती है। इसके पत्ते एक तरफ से हरे और दूसरी तरफ से सफेद होते हैं और उन पर रुआं होता है। इसका फूल गुलाब के फूल की तरह होता है। कुछ फूलों का रङ्ग नीला भी होता है। इसकी जड़ गोल, कंद की तरह काली और शलगम की तरह होती है मगर उससे कुछ चपटी होती है। वह वनस्पति अक्सर करके झाड़ों की छाया में और तर जमीनों में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इस वनस्पति की जड़ वामक, आनुलोमिक, पसीना लाने वाली, मूत्रल, रजःप्रवर्तक सूजन को नष्ट करने वाली और विष नाशक होती है। इसकी जड़ को मुँह में रखने से लार छूटती है और पेट में जाने पर आमाशय में दाह पैदा होती है। बड़ी मात्रा में इसको लेने से बमन होती है, आमाशय और अंतड़ियों में दाह पैदा होता है और शरीर के भीतरी भाग में सूजन आकर उस भाग की जीवनी शक्ति कमजोर हो जाती है। तष्क और मजा तंतु की क्रिया पर उसका कोई असर नहीं होंता।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

इसके ये सब उपद्रव इसमें रहने वाले एक विषैले द्रव्य की वजह से होते हैं। यह द्रव्य अरीठे और शिकाकाई में पाये जाने वाले विषैले द्रव्य से बहुत मिलता हुआ होता है। इसका स्वाद कड़वा और तीखा होता है। पानी में इसको डालने से यह फौरन घुल जाता है और पानी में फेन पैदा कर देता है।

बखूरीमरियम का खास उपयोग जुलाब के लिये किया जाता है। इसको देने से जँभाइयां आती हैं, वमन होते हैं और बड़ी मात्रा होने से पसीना छूटता है, चक्कर आते हैं और आक्षेप होने लगते हैं।

गंडमाला की गठांनों की सूजन को कम करने के लिये इसका लेप किया जाता है। उदररोगों में दस्त साफ होने के लिये पेट पर इसका लेप किया जाता है और पेशाब होने के लिये बस्ति प्रदेश पर इसका लेप किया जाता है।

कर्नल चोपरा के मतानुसार यह वनस्पति वामक, ऋतुस्राव नियामक, विरेचक, मूत्रल और सर्प विष नाशक होती है। इसमें ग्लुकोसाइड और सेपानिन सायक्लेमिन नामक पदार्थ पाये जाते हैं।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह तीसरे दर्जे में गरम और खुश्क होती है। इसकी जड़ पेशाब और मासिक धर्म को साफ करती है। पसीना अधिक लाती है। यकृत के सुदों को बिखेरती है। चेहरे के दागों को साफ करती है। इसकी जड़ को कुचल कर शहद या शिकंजबीनके साथ मिलाकर पीलिये के रोगी को पिलावें और बाद में उसको कपड़ा ओढ़ाकर सुला दें तो पीले रंग का पसीना आकर उसका पीलिया चला जायगा। क्योंकि इससे यकृत की सफाई हो जाती है और सारे शरीर में जो पित्त का असर हो जाता है वह निकल जाता है।

जहां तक हो इस औषधि को अकेले उपयोग में नहीं लेना चाहिये। बल्कि कतीरा, गोंद, अनार के दानों का रस अथवा शराब या शहद के साथ अथवा और किसी दर्पनाशक वस्तु के साथ इसको लेना चाहिये। गरम प्रकृति वाले लोगों को और ज्वर के रोगियों को यह औषधि नहीं लेना चाहिये।

इसकी जड़ दमे में भी लाभ पहुँचाती है। इसको सिरके के साथ लेप करने से तिल्ली की सूजन मिटती है। इसको योनि में रखने से मासिक धर्म साफ हो जाता है और बच्चा बाहर आ जाता है। इसको पीसकर कष्ट प्रसूता स्त्री के पेट या नाभि पर लेप करने से भी बच्चा आसानी से पैदा हो जाता है। गर्भवती स्त्री को इस औषधि का प्रयोग नहीं करना चाहिये क्योंकि इसके सेवन से गर्भ गिरने की आशंका रहती है।

इसकी डाली या पत्तों का लेप कंठमाला की सूजन और दूसरी सख्त सूजनों को बिखेरता है। इसके पत्ते का रस कान में डालने से कान के जख्म को आराम हो जाता है और नाक में डालने से मृगी में लाभ होता है। जहरीले जानवरों के डंक पर भी इसको लगाने से बहुत लाभ होता है।

मुजिर—यह औषधि अधिक मात्रा में सिर दर्द पैदा करती है। गरम प्रकृति वालों के लिये हानिकारक है। गुदा, फुफ्फुस और मसाने को नुकसान पहुँचाती है।

दर्पनाशक—उन्साव कतीरा और अनार का रस मात्रा—३ माशे।

बरञ्जसफा

नाम—हिन्दी यूनानी—बरंजसफा। फारसी—बुरामादएन।

वर्णन—यह एक जाति का घास होता है। जो अफसंतीन से मिलता जुलता होता है। इसके पौधे एक हाथ के करीब ऊंचे होते हैं। इसकी डालियाँ पतली २, पत्ते छोटे २ और फूल सोया के फूल की तरह होते हैं। फूल सफेद, पीले और नीले रङ्ग के होते हैं। इसके पत्ते और डालियों पर थोड़ा चेपदार पदार्थ लगा हुआ रहता है। यह वनस्पति तर जमीनों में, समुद्री किनारों पर और छाया वाली जमीनों में पैदा होती है। यह हर साल गर्मी के मौसम में उगती है। इसकी नर और मादा दो जातियां होती हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत से यह औषधि मूत्रल, दोषों को साफ करने वाली, पथरी को तोड़ने वाली, कृमिनाशक और रोम कूपों को साफ करने वाली होती है। इसके फूलों को ७ माशे की मात्रा में शहद में मिला कर चटाने से पेट से कद्दू दाने निकल जाते हैं। इसके प्रयोग से रुका हुआ मासिक धर्म जारी हो जाता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

कष्ट प्रसूता स्त्री को यह औषधि देने से बच्चा आसानी से पैदा हो जाता है। गर्भाशय की सूजन में भी यह लाभदायक है। इसको ७ माशे की मात्रा में पानी मिलाकर पीने से बुखार, बेहोशी और जुकाम में बहुत लाभ होता है।

इसका लेप हर प्रकार के सिर दर्द को आराम करता है, इसकी जड़ को पेड़ू पर लेप करने से पेशाब और मासिक धर्म साफ हो जाता है।

इसके फल का काढ़ा दमे में बहुत लाभ पहुँचाता है। इसके फल को आधे तोले से १ तोले तक की मात्रा में पानी में जोश देकर पीने से गर्भाशय की बीमारी में लाभ होता। इसको शराब के साथ मिलाकर देने से पथरी में बहुत लाभ होता है। इसके पौधे को जला कर उसकी राख को जख्मों पर छिड़कने से जख्म जल्दी भर जाते हैं। इसके पत्तों की धूनी मकान में देने से मकान के सब जहरीले कीड़े भाग जाते हैं। इसको शराब के साथ देने से जहरीली दवाओं का असर मिट जाता है।

मुजिर—इसका अधिक सेवन गुर्दे को नुकसान पहुँचाता है। दर्पनाशक—अनीसून।

प्रतिनिधि—अफसंतीन। मात्रा—चूर्ण की २ माशे से ७ माशे तक और काढ़े में ७ माशे से १। तोले तक।

(ख० अ०)

बनंता

नाम—यूनानी—बनंता।

वर्णन—यह एक जाति का घास होता है जो जमीन पर बिछा हुआ रहता है। इसकी डालियां पतली, पत्ते छोटे २ और फूल सफेद रंग के होते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—यह वनस्पति गरम होती है और इसके सेवन से पागलपन में लाभ पहुँचता है।

(ख० अ०)

बखरुल कराद

नाम—यूनानी—बखरुल कराद।

वर्णन—यह एक छोटी जाति की वनस्पति होती है। इस पर पत्ते बहुत आते हैं जो गुलदस्ते की तरह होते हैं। इसके फूल पीले, जड़ मोटी और काली और गंध तीव्र होती है। यह पहाड़ों पर वृक्षों की छाया में पैदा होती है। इसकी डालियों में एक लाल रंग का गोंद निकलता है जो कुंदर की तरह होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत से इस वनस्पति के पत्ते और डालियां दूसरे दर्जे में गरम खुश्क होती हैं। और इसका गोंद तीसरे दर्जे में गरम होता है। यह सूजन को उतारती है। पथरी को तोड़ती है। गर्भ को गिरा देती है। इसका गोंद खाने से कफ से पैदा होने वाले लकवा, फालिज, सन्निपात और धनुर्वात में फायदा होता है। कफ से पैदा होनेवाली हर प्रकार की बीमारियों में यह लाभ पहुंचाती है। इसके चिकने रस को गुलाब के तेल में मिला कर कान में डालने से कान की पीड़ा दूर होती है और बहरेपन में लाभ होता है। इसका धुआं नाक में पहुँचाने से हिस्टीरिया में लाभ होता है।

सिरके और जैतून के तेल के साथ में इसको मलने से गृध्रसी वात में लाभ होता है। इस वनस्पति को हमेशा नीलोफर के साथ लेना चाहिये।

बखुर-ऊल-सूदान

नाम—यूनानी—बखुर-ऊल-सूदान।

वर्णन—यह एक छोटी जाति की वनस्पति होती है। इसके फूलों का रंग सफेद होता है। इस वनस्पति में एक प्रकार का चिकना तरल पदार्थ भरा हुआ रहता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क होती है। इसको जैतून के तेल के साथ मिलाकर, पकाकर, कफ और वायु से पैदा हुई सख्त सूजन और गृध्रसी वात में मालिश करने से लाभ होता है। इसकी मात्रा ४॥ माशे तक है।

बशना

नाम—यूनानी—बशना।

वर्णन—यह एक छोटा पौधा होता है, इसकी डालियां बहुत बारीक होती हैं। यह सब डालियां जमीन पर फैली हुई होती हैं। इसके पत्ते बहुत छोटे, गोल और रुएंदार होते हैं। फूल बहुत छोटे और सफेद रंग के लगते हैं। इसके बीज धनिये के दाने सरीखे होते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—यह पौधा कुछ कड़वा और काबिज होता है। इसको पानी में जोश देकर पीने से पेट का आफरा, तिल्ली की सूजन और सांस की तंगी मिट जाती है।

बसल सूरना

नाम—यूनानी—बसल सूरना।

वर्णन—यह एक छोटी जाति की वनस्पति होती है, इसके पत्ते गंधना के पत्तों सरीखे होते हैं। इसका फूल नीला होता है। इसकी जड़ में एक छोटा सा कंद रहता है।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत से यह तीसरे दर्जे में गरम और खुश्क होती है। इसके बीज या इसकी जड़ को शराब के साथ लेने के पीलिया मिट जाता है।

बछ्रू फरसन

नाम—यूनानी—बछ्रू फरसन।

वर्णन—इस वनस्पति के पत्ते तज के पत्तों की तरह होते हैं। इन पत्तों का स्वाद तेज होता है। इसके फूल जंगली तुलसी के फूल की तरह, बीज गंदने के बीजों की तरह और जड़ गोल गठान की तरह होती है। इसकी जड़ में शराब की तेज गंध आती है।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत से इसकी जड़ तीसरे दर्जे में गरम और दूसरे दर्जे में खुश्क होती है। इसका पंचांग सूजन को उतारने वाला होता है। शरीर के अन्दर कहीं कांटा अथवा कील अथवा तीर की अणी लग जाय तो इसका रस लगाने से खींच ली जाती है। इसके पत्तों को पीसकर लगाने से बड़े २ फोड़े बिखर जाते हैं। इसके बीजों को पीस कर कफ की सूजन पर लगाने से सूजन बिखर जाती है।

बकला-अल-बरार

नाम—यूनानी—बकला-अल-बरार।

वर्णन—इस वनस्पति के पत्ते जंगली कासनी की तरह मगर उनसे कुछ छोटे होते हैं। इसकी जड़ जमीन के अन्दर फैली हुई रहती है। इसके फूल पीले रंग के और बीज बिनौले की तरह होते हैं। यह रेतीली जमीनों में ज्यादा पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत से यह पहले दर्जे में सर्द और तर होती है। यह दिल की घबराहट को दूर करती है। मुंह में खुशबू पैदा करती है। मसूड़ों को मजबूत करती है। यह आमाशय, यकृत और आंतों को ताकत देती है। इसकी जड़ की धूनी देने से चौथिया ज्वर मिटता है।

बकाल यहूदिया

नाम—यूनानी—बकाल यहूदिया।

वर्णन—कुछ लोगों ने इसको जंगली कासनी माना है मगर हकीम गिलानी का मत है कि यह जंगली कासनी नहीं है। इसका पौधा कांटे वाला होता है। इसके पत्ते गोल होते हैं जिनके किनारों पर नाजुक कांटे होते

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

हैं। इसकी डालियां और जड़ सफेद होती हैं। यह वनस्पति अक्सर रेगिस्तान और समुद्र के किनारों पर पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी तक से यह पहले दर्जे में गरम और खुश्क होती है। इसकी जड़ और सुदाव के पत्तों का काढ़ा करके पीने से पसलियों का दर्द मिटता है। हाथी पांव, पिंडलियों की सूजन और फोड़े फुन्सियों पर इसको जौ के आटे के साथ लगाने से लाभ होता है।

बलसू

नाम—यूनानी—बलसू।

वर्णन—यह एक जंगली वृक्ष होता है। यह मोटे २ कांटों से भरा हुआ रहता है। हर कांटे के नीचे २ पत्ते मेंहदी की तरह मगर उनसे कुछ छोटे लगे हुए रहते हैं। पत्ते के बीच में फूल आते हैं। इसके फल फालसे के फल के बराबर मगर उनसे कुछ चपटे होते हैं। इसके कच्चे फल हरे, आधे पके हुए फल केसरिया और पूरे पके हुए फल लाल हो जाते हैं। हर एक फल में एक से लेकर तीन तक बीज रहते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—इसका फल गरम, तर, शक्तिवर्धक, कामशक्ति को बढ़ाने वाला और कामेन्द्रिय में उत्तेजन पैदा करने वाला होता है। यह पेचिश को मिटाता है, प्रमेह और धातुस्राव में लाभ पहुँचाता। इसके पत्ते ज्वर में बहुत लाभदायक होते हैं।

बलतुल अरज

नाम—यूनानी—बतुलतुल अरज।

वर्णन—यह एक छोटी जाति की वनस्पति होती है। इसके पत्ते कासनी के पत्तों की तरह चौड़े और हरे होते हैं। यह रेतीली जमीन में ज्यादा पैदा होती है। औषधि में इसकी जड़ काममें आती है।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क होती है। यह शरीर के भीतर की सूजन को बिखेर देती है। पेशाब और मासिक धर्म को साफ करती है। इसको पीसकर शहद में मिला कर खाने से तिल्ली के रोग आराम होते हैं। इसके लेप से पुराने फोड़े साफ हो जाते हैं। मसाने की पथरी में भी यह लाभ पहुँचाती है।

बलबूस

नाम—यूनानी—बलबूस।

वर्णन—इसका पौधा प्याज के पौधे की तरह होता है, इसके पत्ते प्याज के पत्तों की तरह मगर उनसे कुछ चौड़े होते हैं, इन पत्तों की गंध और स्वाद प्याज के समान होता है। सरदी के दिनों में इसमें पीले रंगके फूल आते हैं जो बनफ्शाके फूलों की तरह होते हैं। इसकी जड़ प्याज की छोटी गांठन पौधे पर बराबर मगर उससे कुछ लम्बे आकार की होती है।

इसकी दो जातियां होती हैं। एक जति विषैली होती है जो खाने के काम में नहीं आती है। दूसरी जाति खाई जा सकती है जिसका स्वाद कुछ कड़वा और मीठा होता है। इसकी हर एक गठान के अन्दर एक बीज होता है जो सफेद रंग का होता है। इसकी विषैली जाति को खाने से बहुत जोर से वमन होती है। इसके खाने से हलक में सूजन पैदा होकर आदमी मर जाता है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसकी विषैली जाति चौथे दर्जे में गरम और खुश्क होती है और दूसरी जाति पहले दर्जे में गरम और दूसरे दर्जे में खुश्क होती है।

इसकी दूसरी अर्थात् बिना विष वाली जाति को पानी में जोश देकर सिरका मिलाकर पीने से पट्ठों का दर्द मिटता है। इसको पीस कर शहद में मिलाकर लगाने से अधिक पसीने का आना बन्द हो जाता है। श्वेत कुष्ठ की बीमारीमें अगर अधिक जोर न पकड़ा हो तो इसको लगाने से आराम हो जाता है। फोड़े फुन्सी आराम होने के बाद

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

अगर वहां काले दाग रह गये हों तो इसका लेप करने से मिट जाते हैं। शरीर के अन्दर अगर किसी शस्त्र की नोक रह गई हो तो इसका लेप करने से वह चमड़े की तरफ खिंच आती है। सिर के जखम और डाढ़ी की फुन्सियों पर भी इसको लगाने से बड़ा लाभ होता है।

इसकी मीठी जाति पाचन क्रिया को शुद्ध करती है। भूख और कामशक्ति को बढ़ाती है। इसको आमाशय और पेंढ़ू पर लेप करने से गर्भस्थ बच्चा और आँवल बहुत जल्दी निकल जाते हैं। पागल कुत्ते के काटने पर भी इसको लगाने से लाभ होता है। बिच्छू के विष पर इसको लगाने से और अंजीर के साथ खाने से लाभ होता है।

इसकी जहरीली जाति को खाने से पहले बदन में खुजली पैदा होती है, फिर खून के दस्त लगते हैं और फिर गला सूज कर आदमी मर जाता है। इसके विष को नष्ट करने के लिये रोगी को पहिले मूली खिलाना चाहिये फिर पोदीने के पत्तों का पानी और कांजी पिलाना चाहिये तथा काफी मात्रा में शहद चटाना चाहिये और तेज एनिमा लगाना चाहिये।

मुजिर—यह पठ्ठों को नुकसान पहुँचाती है, जबान और तालू में खुश्की पैदा करती है जिससे जबान फट जाती है। स्मरणशक्ति कम हो जाती है और पेट में मरोड़ होकर पेट फूल जाता है।

दर्पनाशक—कासनी, ताजा दूध, शहद और अनीसून। प्रतिनिधि—कोली कांदा।

वंशलोचन

नाम—संस्कृत—वंशलोचन, त्वक्क्षीरी, क्षीरिका, कपूर रोचना, तुङ्गा, रोचनिका, पिगा, बंशशर्करा, वंश कपूर। हिन्दी—बंशलोचन। गुजराती—बांसकपूर। बंगाल—बंशलोचन, बांसकावर। मराठी—बंशलोचन। फारसी—तबाशीर। अंग्रेजी—Ramboo Manna। लेटिन—Bambuna Arundinacea (बाबूना अरंडीनेसिया)।

वर्णन—वंशलोचन एक जाति के बांस के अन्दर से जिसे नजला बांस कहते हैं निकलता है। यह बांस मादा जाति का होता है और इसमें एक जाति का मद जम जाता है जो सूखने के पश्चात् निकाला जाता है। इसको हिन्दी में बंशलोचन और गुजराती में बांसकपूर कहते हैं। इस वस्तु की कीमत अधिक होने से इसमें कई प्रकार की नकली चीजों की मिलावट कर दी जाती है। इसलिये इसको लेते सयय बहुत सावधानी रखने की जरूरत है। असली बंशलोचन सफेद रङ्ग का होता है। मगर उस पर नीले रङ्ग की झाई होती है। इसको लकड़ी अथवा पत्थर पर घिसने से किसी प्रकार का निशान नहीं होता। इसको हाथ की चुटकी में लेकर दबाने से यह नहीं टूटता और मुँह में रखने से भी एक दम नहीं गलता। नकली बंशलोचन असली के बराबर ओज पूर्ण नहीं होता। उसको पत्थर पर घिसने से उसकी लकीर उघड़ जाती है। असली बंशलोचन में पानी को सोख लेने की शक्ति रहती है और पानी सोख लेने के पश्चात् वह पारदर्शक हो जाता है। नकली बंशलोचन पानी में डालते ही घुल जाता है।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत से वंशलोचन रूखा, कसेला, मधुर, रक्त को शुद्ध करने वाला, शीतल, ग्राही, वीर्यवर्धक, कामोद्दीपक और क्षय, श्वास, खांसी, रुधिर विकार, मन्दाग्नि, रक्त पित्त, ज्वर, कुष्ठ, कामला, पांडुरोग, दाह, तृषा, व्रण, मूत्रकृच्छ्र और वात को नष्ट करता है।

रासायनिक विश्लेषण—वंशलोचन में ७० प्रतिशत सेलिसिक एसिड और ३० प्रतिशत पोटास तथा चूना रहता है। डाक्टर देसाई के मत से इसमें ६०॥ प्रतिशत सेलिसिक एसिड, १॥। प्रतिशत यवक्षार और ३।४ प्रतिशत मण्डूर का अंश रहता है।

जिस वंशलोचन में जितनी अधिक सेलिसिक एसिड होती है वह उतना ही उत्तम रहता है। इसके प्रयोग से श्वासेन्द्रिय की श्लेष्म त्वचा को बल मिलता है और इस वजह से उसके द्वारा उत्पन्न होने वाला कफ कम तादाद में उत्पन्न होता है। इस कार्य के लिये शीतोपलादि चूर्ण का योग बहुत उत्तम साबित हुआ है। यह चूर्ण बच्चों और नौजवानों के लिये विशेषरूप से उपयोगी होता है। इससे कफ रोगों के अन्दर त्वचा की दाह कम होती है और कभी २ कफ के साथ खून का पड़ना बन्द हो जाता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

कर्नल चोपरा के मतानुसार वंशलोचन एक उत्तेजक और ज्वर नाशक वस्तु है। इससे पक्षाघात की शिकायतें, दमा, खांसी और साधारण कमजोरी में बहुत लाभ होता है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में सर्द और खुश्क होता है। यह काबिज, हृदय को आनन्द देने वाला, आमाशय की गरमी को दूर करने वाला और प्यास को बुझाने वाला होता है, हृदय, यकृत और आमाशय को यह ताकत देता है। इसको पीसकर मुंह में बुर बुराने से मुंह के छाल मिटते हैं। खांसी, बुखार, पित्तरोग, गरमी का पागलपन, बेहोशी तथा पित्त के दस्त और वमन में यह बहुत मुफीद है।

गर्मी की वजह से दिल में दहशत, गमगीनी और बहम पैदा हो जाय तो इसके प्रयोग से बहुत लाभ होता है। गर्मी की वजह से पैदा हुई अङ्गों की कमजोरी में इससे बहुत लाभ होता है। बवासीर से बहने वाले खून और अनैच्छिक वीर्यस्राव को भी यह बन्द करता है। इसको एक पोटली में बांधकर पानी में डाल दें और उस पानी में से थोड़ा २ पानी ऐसे रोगियों को पिलावें जिनको बहुत प्यास लगती हो तो उनको बहुत लाभ होगा। मिट्टी खाने वाले बच्चों को इसकी कंकरी हाथ में देने से उनकी मिट्टी खाने की आदत छूट जाती है।

उपयोग-सूखी खांसी—इसको १० रत्ती से २० रत्ती तक की मात्रा में शहद के साथ चटाने से सूखी खांसी मिटती है।

पेशाब की जलन—गोखरू, वंशलोचन और मिश्री के चूर्ण को कच्चे दूध के साथ देने से मूत्र की जलन मिटती है।

विष विकार—साधारण विष विकार के अन्दर इसको शहद के साथ चटाने से शान्ति मिलती है।

मुंह के छाले—वंशलोचन को शहद में मिलाकर लेप करने से मुंह के छाले मिटते हैं।

श्वास और खांसी—इसको शहद के साथ चटाने से बालकों का श्वास और खांसी मिटती है।

पुराना ज्वर—वंशलोचन और गिलोय के सत को शहद में मिलाकर चटाने से पुराना ज्वर मिटता है।

रक्त पित्त—शहद और मिश्री के साथ इसका सेवन करने से रक्त पित्त मिटता है।

बनावटें—शीतोपलादि चूर्ण—मिश्री १६ तोला, वंशलोचन, ८ तोला, छोटी पीपर ४ तोला, छोटी इलायची के बीज दो तोला और दालचीनी १ तोला। इन सब चीजों को पीस कर कपड़े में छान लेना चाहिये, यह आयुर्वेद के सुप्रसिद्ध शीतोपलादि चूर्ण का पाठ है, जो कि शरीर की साधारण कमजोरी दुर्बलता, क्षय, दम, खांसी और मन्दाग्नि में बहुत उपयोगी माना जाता है। मगर हमारे अनुभव में आया है कि यदि इस नुसखे में ४ तोला गिलोय सत्व और २ तोला प्रवाल भस्म और मिला दी जाय तो यह बहुत प्रभावशाली हो जाता है और मनुष्य के बल, कान्ति और ओज के बढ़ाने में बड़ा सहायक होता है।

सुजाक नाशक गोली—वंशलोचन, कबाबचीनी, असली नागकेशर और इलायची के बीज ये चारो चीजें समान भाग लेकर पीसकर कपड़े में छान लेना चाहिये। फिर इस चूर्ण को असली मलयागिरि चन्दन के तेल में अच्छी तरह तर करके झड़बेर के बराबर गोलियां बना लेना चाहिये। इन गोलियों में से एक २ गोली सबेरे शाम ४ तोला पानी में डालकर उसमें आधा तोला शक्कर मिलाकर अच्छी तरह घोलकर पी जाना चाहिये। इस प्रयोग से व्यभिचार जनित नई सुजाक की जलन एक ही दिन में शान्त हो जाती है और ७ दिन में तो भयङ्कर सुजाक भी नष्ट हो जाता है। यह औषधि जब तक चालू रहे तब तक पथ्य में सिर्फ गेहूँ की रोटी, घी और शक्कर ही देना चाहिये।

(जंगलनी जड़ी बूटी)।

बरांगोम [परदेसी भांगरो]

नाम—गुजराती—परदेसी भांगरो। संथाल—बरांगोम, वीरवरांगोम। लेटिन—Glossogyne Pinnatifida (ग्लोजोजिन पिनेटिफिडा)।

वर्णन—इस वनस्पति के पौधे २ से ३ फीट तक लम्बे होते हैं। ये अक्सर जमीन पर फैले हुए रहते हैं। इसके पत्ते गहरे हरे रंग के और कंगूरेदार होते हैं। इन पत्तों के बीच में से फूलों की लम्बी डंडियां निकलती हैं और

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

हर एक डण्डी पर एक २ पीले रंग का फूल आता है। इसके बीज भूरे और रुएंदार होते हैं। इस सारे पौधे पर सख्त रुएं रहते हैं। इस पौधे का दृश्य बहुत ही सुन्दर होने से यह कई जगह बगीचों के क्यारों में लगाया जाता है। इस पौधे की मूल उत्पत्ति स्थान अमेरिका है। मगर आज कल यह इस देश में भी बहुत लगाया जाता है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसके पत्तों का रस तेल में मिलाकर कान में टपकाने से कान का दर्द आराम होता है। सूजन और चर्म रोगों पर भी इसका रस लगाया जाता है। बवासीर के ऊपर इसके पत्तों का पुल्टिस बांधा जाता है।

संथाल जाति के लोग इसकी जड़ को सांप और बिच्छू के विष पर लगाने के काम में लेते हैं।

बाबची

नाम—संस्कृत—सोमराजि, कृष्णफला, कुष्ठनाशिनी, सोमवल्ली, कालमेषिका, चन्द्रलेखा, सुप्रभा, कुष्ठ हंत्री, कांबोजि, पूतिगंधा, चंद्रराजी इत्यादि। हिन्दी—बाबची, बकुची। बंगाल—बावची, हकुच, लता कस्तूरी। बम्बई—बाबची। गुजराती—बाबची। मराठी—बाबची, पंजाब—बावची। तामील—करपोकृषी, करपून्हरीशी। तेलगू—भवंजी, कालागिजा। उर्दू—बाबची। लेटिन—Psoralea Corylifolia (सोरेलिया कोरिलीफोलिया)।

वर्णन—बाबची के पौधे बरसात के दिनों में बहुत पैदा होते हैं। ये एक से लेकर ४ फीट तक ऊंचे होते हैं। इनकी डालियां सीधी होती हैं। इसके पत्ते ग्वार के पत्तों से मिलते जुलते होते हैं। इन पत्तों पर काले रङ्ग के कुछ छींटे पड़े हुए रहते हैं। इन पत्तों के कोनों में से १ से ३ इञ्च तक लम्बे डण्ठल निकलते हैं और उन डण्ठलों के ऊपर फीके और गहरे बैगनी रंग के अनेकों छोटे २ फूल आते हैं। इन फूलों का आकार तुलसी की मंजरी की तरह दिखलाई देता है। इन फूलों में से बारीक और तोते के समान हरे रंग की फलियां निकलती हैं जो पकने पर काली पड़ जाती हैं। इन फलियों में से काले रंग के बीज निकलते हैं जिनको बाबची के बीज कहते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से बाबची मधुर, कड़वी, पचने में चरपरी, धातु परिवर्तक, कब्जियत को दूर करने वाली, शीतक, रुचिकारक, सारक, कफ और रक्तपित्त का नाश करने वाली, रूखी, हृदय को हितकारी तथा श्वास, कुष्ठ, प्रमेह, ज्वर और कृमियों का विनाश करने वाली होती है।

बाबची का फल पित्त जनक, कुष्ठनाशक, कफ और वात को दूर करने वाला, कड़वा, केशों को उत्तम करने वाला, कांतिवर्धक तथा वमन, श्वास, मूत्रकृच्छ्र, बवासीर, खांसी, सूजन, आम और पांडुरोग का नाश करने वाला होता है।

बाबची पाक में चरपरी, कड़वी, शीतल, रसायन, मधुर, रुचिकारक, रूखी, हृदय को हितकारी, ग्राही, अग्नि-दीपक, बलकारक, कसैली, हलकी, मेधाजनक तथा रक्तपित्त, कफ, कोढ़, कृमि, श्वास, खाँसी, प्रमेह, व्रण, त्रिदोष, वात, त्वचा के विकार, विष, कंडू और खुजली को नष्ट करती है।

बाबची की एक दूसरी जाति और होती है जिसको संस्कृत में श्वित्रारि कहते हैं। यह जाति कुष्ठ, त्रिदोष, रक्त विकार, वातरक्त और श्वेत कुष्ठ को दूर करती है।

बाबची की जड़ दांतों की सड़ान को दूर करती है। इसके पत्ते अतिसार को रोकने में उपयोगी हैं। इसके फल कड़वे, मूत्रल, पित्त को पैदा करने वाले, गलित कुष्ठ को दूर करने वाले तथा चर्मरोग, कफ, वात, वमन, श्वास, कुष्ठ, बवासीर ब्रोंकाइटीज, सूजन और पाण्डु रोग में लाभदायक है। इसके बीज मीठे, कड़वे, ज्वर और तृषा को मिटाने वाले, धातु परिवर्तक, मृदुविरेचक, कृमिनाशक और ज्वरनाशक होते हैं। ये कफ और रक्तपित्त को दूर करते हैं और हृदयरोग, दमा, श्वेत कुष्ठ तथा अनैच्छिक वीर्यस्राव में लाभदायक है। जख्म, चर्म रोग और गीली खुजली में ये फायदा पहुँचाते हैं। इनका तेल हाथी पांव में उपयोगी होता है।

बाबची और श्वेत कुष्ठ—बावची के बीज भारतवर्ष में बहुत प्राचीन काल से श्वेत कुष्ठ की एक प्रामाणिक औषधि की तरह काम में लिये जाते हैं। महर्षि चरक अपनी चरक संहिता में लिखते हैं कि चार भाग बावची के बीज और १ भाग तबकिया हड़ताल को लेकर गाय के मूत्र में पीसकर सफेद कुष्ठ पर लेप करने से यह रोग नष्ट हो जाता है। आगे चलकर यही महर्षि लिखते हैं।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

तीव्रेण कुष्ठेन पुरीतमर्तीं, यः सोमराजीं नियमेन खादेत् । संवत्सरं कृष्णतिलद्वितीयां स सोमराजी वपुषातिशेते ॥*

अर्थात् तीव्र कुष्ठ रोग से जिसका शरीर खराब हो गया हो वह मनुष्य यदि एक वर्षतक बावची और काले तिल को मिलाकर प्रतिदिन सेवन करे तो उसका रोग नष्ट होकर उसका शरीर चन्द्रमा की कांति के समान शोभायमान हो जाता है।

महर्षि वाग्भट्ट लिखते हैं कि बावची के बीजों के ऊपर के छिलके निकाल कर उनकी मगज का चूर्ण करके उस चूर्ण को दूध में डालकर उस दूध का दही जमाना जाहिए। उस दही को बिलोकर उसमें से जो मक्खन निकले, उस मक्खन को शहद में मिलाकर चाट लेना चाहिये और उसके ऊपर उसी दही से निकले हुए मट्ठे को पी जाना चाहिये।

कुष्ठ के रोग से जिसका शरीर बिगड़ गया हो और हाथ पैर की उगलियां तथा नाक का भाग भी गलकर गिर पड़ा हो। ऐसे असाध्य मनुष्य भी अगर इस प्रयोग को दीर्घकाल तक सेवन करें तो जिस प्रकार वृक्ष की कटी हुई डाली के स्थान पर फिर से नवपल्लव युक्त दूसरी डाली फूट जाती है उसी प्रकार उसके शरीर का पुनरुद्धार हो जाता है।

बंगसेन लिखते हैं कि अगर खैर और आंवले के काढ़े के साथ बावची के बीजों का प्रतिदिन सेवन किया जावे तो शङ्ख और कुंद के पुष्प के समान फैला हुआ श्वेत कुष्ठ भी आराम हो जाता है।

इन प्राचीन आप्त वाक्यों के साथ जब हम इस सम्बन्ध में की हुई नई खोजों का मिलान करते हैं तो काफी साम्य नजर आता है।

रायबहादुर कन्हैयालाल बावची के बीजों का पाताल यन्त्र के द्वारा निकाला हुआ ओलियोरेजिन्स एक्सट्रैक्ट को मक्खन के साथ मिलाकर श्वेत कुष्ठ पर लगाने की जोरदार सिफारिश करते हैं। उनका कथन है कि इस औषधि को थोड़े दिन तक लगाने से कुष्ठ के सफेद चट्ठे वाला भाग लाल रंग में बदलता हुआ दिखाई देता है और उसमें कुछ वेदना तथा जलन भी मालूम होती है। कभी २ उसमें छाले उठे हुए भी दिखलाई देते हैं। इन छालों को स्पर्श न करते हुए अगर इनको ज्यों का त्यों रहने दिया जाय तो अपने आप जल्दी सूख जाते हैं और उनकी जगह एक काला दाग पड़ जाता है। यह काला दाग धीरे २ बढ़ता जाता है और तमाम सफेद दाग की जगह घेर लेता है और सफेद दाग काले दाग के रूप में परिणत हो जाता है। धीरे २ काला दाग भी मिटकर चमड़े के स्वाभाविक रूप में मिल जाता है।

रासायनिक विश्लेषण

सबसे पहिले डायमाक ने अपने फारमाकोग्रफिया इण्डिका नामक ग्रंथ में बावची के बीजों के रासायनिक तत्वों का वर्णन करते हुए बतलाया कि इन बीजों में एक रङ्ग रहित तेल १३.२ प्रतिशत पाया जाता है। इसके अतिरिक्त इसमें एल्ब्यूमिन, शुगर और एक खनिज पदार्थ (Manganese) भी पाया जाता है।

सन् १९३२ में सेन, चटर्जी और दत्त ने इसके बीजों की विशेष रूप से परीक्षा की। उसके परिणाम स्वरूप इसमें (१) एक साबुन बनाने के अयोग्य तेल (२) एक प्रकार का पीला अम्ल द्रव्य (३) और एक प्रकार का ग्लुकासाइड पाया गया है। इन लोगों ने बतलाया कि इसमें पाया जाने वाला तेल सबसे अधिक महत्वपूर्ण और प्रभावशाली वस्तु है। उन्होंने इस तेल का श्वेत कुष्ठ और दूसरे चर्म रोग के रोगियों पर उपयोग किया और काफी सफलता प्राप्त की।

सन् १९२७ में चोपरा और चटर्जी ने बावची के बीजों के रासायनिक तत्वों का अध्ययन किया। उन्होंने बतलाया कि इसके बीजों में पाई जाने वाली सबसे अधिक महत्व की वस्तु एक प्रकार का उड़नशील तेल है। इसके अतिरिक्त इनमें एक स्थिर तेल, एक प्रकार की राल (Resin) और एक प्रकार का उपक्षार की तरह पदार्थ पाया जाता है। उन्होंने इसमें पाये जाने वाले उड़तशील तेल का विशेष रूप से अध्ययन किया। यह उड़नशील तेल भफके की क्रिया द्वारा (Distilled) प्राप्त किया जाता है।

कर्नल चोपरा लिखते हैं कि इसमें पाये जानेवाले उड़नशील तेल का त्वचा पर और श्लेष्मिक झिल्लियों पर प्रदाहक असर होता है। जीवन तत्व (Protoplasm) के ऊपर भी इसका प्रभाव ध्यान देने योग्य होता है।

---

* श्लोक में महर्षि चरक ने सोमराजी उल्लेख किया है। सोमराजी के अर्थ के सम्बन्ध में वैद्यों के अन्दर मतभेद है। कई लोग सोमराजी का अर्थ बावची करते हैं और कई लोग कालीजीरी करते हैं। दोनों ही औषधियां कुष्ठ के लिये समान रूप से लाभदायक हैं।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

एक भाग इसेंशियल ऑइल का १० हजार भाग में डायल्यूशन करके देने से वह शरीर के भीतर के स्ट्रेप्टोकासी (Streptococci) नामक कीटाणुओं को १० मिनिट में मार देता है। टाइफ्सस (Typhosus) नामक ज्वर के कीटाणुओं पर इस तेल का कोई प्रभाव नहीं होता है। विशूचिका और बेसेलरी डिसेंट्री के कीटाणुओं पर भी इस तेल का प्रयोग किया गया, मगर उसके परिणाम भी आशा जनक नहीं रहे। चर्मरोगों के कीटाणुओं पर इस तेल के डायल्यूशन का प्रभाव काफी प्रभावशाली रहा।

कर्नल चोपरा लिखते हैं कि बावची के बीज बहुत प्राचीन काल से भारतवर्ष में श्वेत कुष्ठ की एक लोकप्रिय औषधि रही है। इतना ही नहीं पाश्चात्य चिकित्सा पद्धति से काम करनेवाले रायबहादुर कन्हैयालाल ने भी इस औषधि की श्वेत कुष्ठ के ऊपर बहुत जोरदार सिफारिश की है।

सन् १९२६ से कलकत्ता स्कूल आफ ट्रापिकल मेडिसिन में इसके बीजों से बनाये हुए कई प्रकार के प्रयोग भिन्न २ प्रकार के चर्म रोगियों पर अजमाये गये। इसके इसेंशियल आइल के १--१० हजार और १--२० हजार के तैयार किये हुये डायल्यूशन तीव्र चर्म रोगियों पर (Streptococcal Dermatitis) प्रयोग किये गये लेकिन दुर्भाग्यवश इस प्रयोग से उनकी यन्त्रणा बढ़ी और स्थिति और खराब हो गई। इसमें पाये जाने वाले रेजिन को शुद्ध करके उसका अलकोहल में सोल्यूशन बनाकर उसका भी श्वेत कुष्ठ पर प्रयोग किया गया, मगर उसका परिणाम भी कुछ नहीं हुआ। इसके इसेंशियल आइल का अलकोहल में तैयार किया हुआ सोल्यूशन भी प्रयोग किया गया मगर उसका परिणाम भी असन्तोषजनक रहा, लेकिन इसके बीजों से तैयार किया हुआ आलियोरेजिनस एक्स्ट्रेक्ट बहुत ही उपयोगी वस्तु साबित हुई। इसके अन्दर इसेंशियल आइल का भी हिस्सा रहता है। इस एक्स्ट्रेक्ट का बाह्य प्रयोग मालिश के रूप में श्वेत कुष्ठ रोगियों पर दिन में एक बार या दो बार किया गया। यह प्रयोग जिन अनेक रोगियों पर किया गया उन रोगियों में तीन प्रकार के रोगी थे। पहले प्रकार के वे रोगी थे जिनका रोग उपदंश जनित विष (Syphilitic origin) की वजह से था। दूसरी प्रकार के वे रोगी थे जिनका रोग उपदंश जनित नहीं था। तीसरा ग्रूप उन रोगियों का था जो दाद, इत्यादि दूसरे चर्म रोगों से ग्रसित थे।

इस एक्स्ट्रेक्ट का प्रभाव उन्हीं रोगियों पर विशेष रूप से सफल हुआ जिनका श्वेत कुष्ठ उपदंश जनित नहीं था। उपदंश जनित विष के रोगियों पर इसका बिलकुल प्रभाव नहीं हुआ। इस औषधि का प्रभाव बिलकुल बाह्य प्रयोग से ही होता है। हिन्दू चिकित्सक बावची के बीजों का चूर्ण मुँह के द्वारा भी खिलाते हैं मगर इस पद्धति का प्रयोग श्वेत कुष्ठ की चिकित्सा में नहीं किया गया। इसके प्रभावशाली असर इस प्रकार कहे जाते हैं।

(१) यह औषधि पेट के अन्दर जाती है और यहां अपनी क्रिया करके अपने में के तेल को चमड़े के द्वारा शोषण करके बाहर निकालती है।

(२) आंतों का श्लेष्मिक झिल्लियों पर इसका उत्तेजक असर होता है जिसकी वजह से यह एमिनोएसिड के शोषण को उत्तेजित करती है।

(३) पाकस्थली की आंतों के विस्तार में इसका कृमिनाशक असर होता है।

मगर ये सब बातें हमारे अपने अनुभव में नहीं आ सकी हैं। हमने इसमें पाये जाने वाले उड़नशील तेल का बाहरी प्रयोग ही विशेष रूप से किया है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क होती है। वायु को बिखेरती है। दिल और मेदे को कुव्वत देती है। भूख पैदा करती है। आमाशय के कीड़ों को मारती है। श्वेत कुष्ठ, स्याह कुष्ठ, खुजली, कोढ़ और रक्त के उपद्रवों को मिटाती है। इन बीमारियों में इसका खाना और लगाना दोनों मुफीद है। अगर कोई स्त्री मासिक धर्म से शुद्ध होकर बावची के बीजों को तेल में पीसकर योनि में रख ले तो वह बांझ होती है।

बावची के बीज गाढ़े कफ को पतला करते हैं। खाँसी को मिटाते हैं। मसूड़ों को मजबूत करते हैं। प्राणवायु को उत्तेजित करते हैं। बावची के बीजों को हलदी और मूली के बीजों के साथ पीस कर इतवार की रातको जमाये हुए गाय के दही के तोड़ में मिलाकर सफेद कुष्ठ के दाग पर मालिश करें तो बहुत लाभ होता है।

गेरू पाव भर, बावची आधा पाव, आमलासार गंधक एक पाव इन सब चीजों को वासी पानी के साथ ६ प्रहर तक खरल करें, फिर गोलियाँ बांधकर दिन को धूप में और रात को खुली छत पर सुखावें। जरूरत के वक्त इन गोलियाँ को पानी में पीसकर सफेद दागों पर लगाने से बहुत लाभ होता है। इसके साथ ही आधा सेर बावची

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

और आधा पाव नमक को पीसकर इस चूर्ण में से हथेली भर चूर्ण रोज खा लिया करे और पथ्य में सिर्फ चने की रोटी खावे तो श्वेत कुष्ठ में बहुत लाभ होता है। बावची के बीजों को गोमूत्र में इस प्रकार भिगोवे कि गोमूत्र उससे ४ अँगुल ऊपर रहे। जब बीज खूब अच्छी तरह से तर हो जायँ तब उनको निकालकर छाया में सुखाकर जितने बीज हों उनसे आधा जीरा मिलाकर पानी के साथ पीस कर अरोठे के बराबर गोलियाँ बना लें। इनमें से एक २ गोली रोज खाने से और पथ्य के साथ रहने से सफेद दागों में बहुत लाभ होता है। गोमूत्र में भिगोते समय इस बात का ख्याल रखना चाहिये कि बीजों की कोंपलें न फूटने पावें।

बावची के बीजों को पानी में पीसकर लस्सी की तरह पका कर बाँधने से बदगांठ एक दिन में बैठ जाती है।

मुजिर—इसका अधिक सेवन पित्त को बढ़ाता है और बुखार में नुकसान पहुँचाता है। कोई २ कहते हैं कि बावची आंख की रोशनी को कम करती है। धातु को सुखाती है और खांसी में नुकसान पहुँचाती है।

दर्पनाशक—शिकंजबीन और दूसरी खटाइयां। प्रतिनिधि—काली जीरी।

मात्रा—बावची के बीजों के चूर्ण की ३ माशा, काढ़े की १। तोला।

बनावटें—श्वेत कुष्ठ हर लेप—बावची के बीज तबकिया हड़ताल ४ तोला, सफेद चिरमी के बीज ४ तोला, चित्रक की जड़ की ताजी छाल ४ तोला, मेंसिल २ तोला और काला भाँगरा २ तोला। इन सबको लेकर बारीक पीसकर कुछ दिनों तक गोमूत्र में खरल करना चाहिये। फिर सफेद कुष्ठ के दागों को कुछ रगड़ कर उन पर इस लेप को लगाने से लाभ होता है।

श्वेत कुष्ठ नाशक तेल—बावची के बीज २५ तोला, पवांर के बीज ५ तोला, सफेद चिरमी के बीज २ तोला, काली मिरची २ तोला, मेंसिल ३ तोला, हरताल ४ तोला और चित्रक की जड़ की ताजी छाल २ तोला। इन सब चीजों को कूटकर आतशी शीशी में भरकर बालुकागर्भ यन्त्र से मंदाग्नि के द्वारा तेल निकालना चाहिये। इस तेल को नियमित रूप से लगाने से श्वेत कुष्ठ, दाद, छाजन इत्यादि रोग नष्ट होते हैं।

वृहत् सोमराजि तेल—बावची के बीज ५ सेर, पवांर के बीज ५ सेर। इन दोनों को कूटकर ४० सेर पानी के साथ उबालना चाहिये। जब १० सेर पानी शेष रह जाय तब उसको छानकर उस काढ़े में २५६ तोला गोमूत्र और ६४ तोला सरसों का तेल मिलाकर नीचे लिखी औषधियों की लुग्दी उसमें रखकर मंदाग्नि से औटाना चाहिये। जब पानी का भाग जलकर सिर्फ तेल का भाग शेष रह जाय तब उसको उतार कर छान लेना चाहिये।

लुगदी की औषधियां—चित्रक की जड़, कलिहारी की जड़, सोंठ, हलदी, करंज के बीज, हरताल, मेंसिल, अनन्त मूल, आकड़े की जड़, कनेर की जड़, सप्तपर्ण की छाल, गाय का गोबर, खैर सार, नीम के पत्ते, काली मिर्च और कसोंदीके बीज। इन सब चीजों को एक २ तोला लेकर पानी के साथ खरल करके इनकी लुगदी बनाकर उसमें रख देना चाहिये।

इस तेल का मालिश करने से श्वेत कुष्ठ, दाद, खाज, चित्रकुष्ठ, इत्यादि अनेक रोग दूर होते हैं।

रोगी के शरीर का अगर बहुत हिस्सा सफेद हो गया हो तो सारे भाग पर एक ही साथ दवा नहीं लगाना चाहिये। क्योंकि बावची के बीचों सेबनाई हुई औषधियां बहुत प्रदाहक होती हैं और इनको लगाने से बहुत जलन होती है। इसलिये थोड़े २ भाग पर ऐसी औषधियों को लगाना चाहिये। जब वह भाग अच्छा हो जाय तब दूसरे भाग पर औषधि लगाना चाहिये। बावची के बीज कुछ अंशों में मिलाने का स्वभाव रखते हैं। इसलिये नाजुक प्रकृति वाले रोगियों को खिलाने से या उनके रोगग्रस्त अङ्ग पर लगाने से रोगग्रस्त अङ्ग पर जलन पैदा होकर छोटी २ फुन्सियां पैदा हो जाती हैं। इन फुन्सियों के फूटने और उनके अच्छा होने के साथ ही चमड़ी का रंग बदल जाता है। अगर किसी व्यक्ति को इसकी जलन सहन न हो तो तिल और खोपरे के पानी के साथ पीस कर लेप वाली जगह पर लगाने से और तिल तथा खोपरे को खिलाने से उपद्रव की शान्ति हो जाती है।

राबर्टस के मतानुसार सीलोन में सर्पदंश के केसों में इसके बीजों को पीसकर पानी के साथ उसका द्रव बनाकर बेहोशी और मूर्च्छा में नाक के अन्दर टपकाया जाता है और इसके बीजों का चूर्ण बनाकर मुंह के द्वारा खिलाया जाता है।

चीन और मलाया में इसके बीज पौष्टिक और कामोद्दीपक माने जाते हैं और यह कुछ विशेष प्रकार के चर्म रोगों के उपयोग में लिये जाते हैं।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

इण्डोचायना में इसका फल उदर शूल, अनैच्छिक वीर्यस्राव और कुछ विशिष्ट चर्म रोगों के काम में लिया जाता है।

अनाम में इसके बीजों का अलकोहल में तैयार किया हुआ द्रव संधिवात और स्त्रियों के रोगों में काम में लिया जाता है।

अमेरिका में इसके बीजों से तैयार की हुई अनेक प्रकार की बनावटें मज्जा तन्तुओं के लिये उत्तेजक और पौष्टिक समझी जाती हैं। वहां पर गलित कुष्ठ के रोगियों पर भी आंशिक सफलता के साथ इसके प्रयोग किये गये हैं।

कोमान का कथन है कि इसके बीजों का चूर्ण श्वेत्र कुष्ठ के रोगियों को खिलाया गया और इसके बीजों का ओलियोरेजिन रोगग्रस्त पर लगाया गया। कुछ दिनों के प्रयोग से श्वेत कुष्ठ के दाग लाल रङ्ग में परिवर्त्तित होते दिखाई देने लगे, मगर इस औषधि की जलन और वेदना इतनी अधिक थी कि रोगियों ने इस प्रकार के इलाज में रहना अस्वीकार कर दिया।

गवार के बीजों के साथ बाबची के बीजों का चूर्ण बनाकर उसको नींबू के रस में मिलाकर दाद के ऊपर प्रयोग किया गया और उसका परिणाम बहुत सन्तोषजनक रहा।

ब्राह्मी

नाम—संस्कृत—ब्राह्मी, वयस्था, मत्स्याक्षी, सुरमा, ब्रह्मचारिणी, सोमवल्लरी, महौषधि, स्वायंभुवी, सुरश्रेष्ठा, सरस्वती, सौम्यलता, सुरेष्टा, दिव्या, शारदा, सोमवल्ली, इत्यादि। हिन्द्री—ब्रह्मी, सफेद चमनी। बंगाल—ब्रह्मी-साक, अदबिरनी, धूपचमनी। गुजराती—ब्राह्मी, विद्याब्राह्मी। मराठी—ब्राह्मी। उड़िया—कृष्णपर्णी। तामील—ब्रह्मी, निरब्रह्मी। तेलगू—साम्ब्राणिचेट्टु। अंग्रेजी—Indian Pennywort। लेटिन—Herpestis Monniera (हरपेस्टिसमोनिएरा), Monniera Cuneifolia (मोनीरा कुनीफोलिया)।

वर्णन—ब्राह्मी के क्षुप गीली और तर जमीनों में पैदा होते हैं। यह वनस्पति वैसे सारे भारतवर्ष में जलाशयों के किनारों पर पैदा होती है मगर हरिद्वार से लेकर बद्रीनारायण के मार्ग पर यह बहुत बड़ी तादाद में पाई जाती है और वहां की ब्राह्मी उत्तम भी होती है। ब्राह्मी की पहिचान करते समय अक्सर भ्रम हो जाया करता है। क्योंकि इसी के समान आकार प्रकार वाली मंडूकपर्णी या ब्रह्ममंडूकी नामक एक वनस्पति और होती है। साधारण तौर से इसकी पहिचान करना बड़ा कठिन होता है। मगर बारीक निगाह से देखने पर इन दोनों का भेद समझ में आ जाता है। ब्राह्मी के पत्ते मंडूकपर्णी के पत्तों की अपेक्षा पतले होते हैं और उनका अग्रभाग गोलाकार होता है। उनके डण्ठल की तरफ का भाग क्रमशः क्षीण होता जाता है। इन पत्तों के ऊपर बहुत छोटे २ चिह्न भी रहते हैं। इस बनस्पति की डालियां जमीन पर ही फैलती हैं और इन शाखाओं की प्रत्येक गठान में से जड़ निकल कर जमीन में घुस जाती है। बसन्त ऋतु से लेकर ग्रीष्म ऋतु तक इसके फूल और फल आते हैं। ये फूल सफेद और कुछ नीली झांई लिये हुए होते हैं। ब्राह्मी के सारे पौधे का स्वाद बहुत कड़वा होता है।

मंडूकपर्णी का पौधा भी ब्राह्मी के पौधे की तरह जमीन पर फैला हुआ रहता है और उसकी डालियों की गठानों से भी जड़ निकल कर जमीन में घुसती हैं। मगर इन दोनों वनस्पतियों में मुख्य भेद यह है कि ब्राह्मी की अपेक्षा इसके पत्ते और गोल होते हैं। दूसरा अन्तर यह है कि इसके फूलों का रङ्ग रक्त के समान लाल होता है। इसके सारे पौधे का स्वाद तूरापन लिये हुए कड़वा होता है और अकेले इसके पत्तों को चबाने से इन में एक प्रकार की विचित्र गन्ध आती है।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत—भावप्रकाश के मतानुसार ब्राह्मी शीतल, सारक, हलकी, मेधाकारक कसैली, मधुर, स्वादुपाकी, आयुवर्धक, रसायन, स्वर को उत्तम करने वाली, स्मरण शक्ति को बढ़ाने वाली तथा कुष्ठ, पांडु, प्रमेह, रुधिर विकार, खांसी, विष, सूजन और ज्वर को हरने वाली होती है।

निघंटु रत्नाकर के मतानुसार ब्राह्मी शीतल, कसैली, कड़वी, बुद्धिदायक, मेधाजनक, आयुवर्धक अग्निदीपक, सारक, स्वादिष्ट, हलकी, कण्ठ शोधक, हृदय का हितकारी, स्मरण शक्ति वर्धक, रसायन तथा प्रमेह, विष, कोढ, पांडुरोग, खाँसी, ज्वर, सूजन, कण्डु, प्लीहा, वातरक्त, पित्त, अरुचि, श्वास, शोष, कफ और वात को दूर करनेवाली होती है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

ब्राह्मी और मस्तिष्क सम्बन्धी रोग—ब्राह्मी की मुख्य क्रिया मस्तिष्क और मज्जा तन्तुओं के ऊपर होती है। यह मस्तिष्क को शान्ति देती है और उसके लिये एक पौष्टिक वस्तु का काम करती है। इस गुण की वजह से ब्राह्मी मस्तिष्क और मज्जा तन्तुओं के रोगों में विशेष रूप से दी जाती है। मस्तिष्क को बहुत अधिक श्रम पड़ने पर जब वह थक कर ऊटपटांग काम करने लगता है तब उसको इस वनस्पति का कोई प्रयोग देने से आराम और पौष्टिक तत्व मिल जाते हैं। तब वह अपनी क्रिया ठीक करने लग जाता है। उन्माद और अपस्मार के रोगों में भी यही बात होती है। इसलिये इन में भी ब्राह्मी का प्रयोग होता है। सिर्फ नवीन और जोरदार रोगों में ब्राह्मी नहीं देना चाहिये। क्योंकि ब्राह्मी के अन्दर कुछ मस्तिष्क को उत्तेजित करने का धर्म रहता है और तीव्र रोगों में उत्तेजक औषधि देने से रोग का बल बढ़ जाता है। इसलिये नवीन और तीव्र उन्माद में तीव्र रेचक वस्तु देकर उसके पश्चात् खुरासानी अजवायन के समान कोई शामक वस्तु देना चाहिये। उन्माद और अपस्मार के पुराने होने पर उनमें एक ओर तो मस्तिष्क को पुष्ट करने वाली औषधियों की जरूरत होती है और दूसरी ओर कुछ उत्तेजक औषधि की भी आवश्यकता होती है। ब्राह्मी में ये दोनों ही गुण पर्याप्त मात्रा में रहते हैं और इसलिये ऐसे रोगों में ब्राह्मी देने से अच्छा लाभ होता है।

ब्राह्मी के अन्दर कुछ कब्जियत पैदा करने का दोष भी रहता है। इसलिए इसके साथ कुछ हलकी मृदुविरेचक औषधि देना उपयोगी होता है। प्राचीन ग्रन्थों में इसके साथ शंखपुष्पी देने का विधान दिया गया है। रोगी की नाड़ी शिथिल होने की हालत में ब्राह्मी के साथ कूट या पेठे का रस देना चाहिये। ब्राह्मी के अन्दर भूख को कुछ कम करने का भी दोष रहता है। इसलिये इसके साथ कुछ दीपक औषधि दी जाय तो इसका यह दोष दूर हो जाता है। इस कार्य के लिये प्राचीन ग्रन्थों में इसके साथ बच को देने का विधान दिया है जो वास्तव में बहुत उपयोगी है। तबियत की उदासीना में तथा अधिक बोलने की वजह से पैदा हुए स्वरभङ्ग में ब्राह्मी का उपयोग होता है।

ब्राह्मी के अन्दर एक प्रकार का उड़नशील तेल रहता है वही इसके सब गुणों का आधार है। आंच लगने से यह तेल उड़ जाता है। इसलिये ब्राह्मी को धूप में नहीं सुखाना चाहिये और आंच पर बनाये हुए प्रयोग की अपेक्षा बिना आंच पर बनाये प्रयोग विशेष रूप से उपयोग में लेना चाहिये।

इसके पत्तों का रस पेट्रोल में मिलाकर मालिश करने से संधिवात में फायदा होता है। इसका १ चम्मच रस बच्चों को देने से जुकाम, ब्रोंकाइटीज, वमन और दस्त में लाभ होता है।

पांडिचेरी में यह वनस्पति कामोद्दीपक मानी जाती है।

सीलोन में ज्वर के अन्दर इसका प्रयोग होता है और इसका सारा पौधा बच्चों के लिये मृदु विरेचक माना जाता है। अग्नि विसर्प और श्लीपद रोगों में इसका सेंक किया जाता है। इसकी डालियों और पत्तों का ताजा रस सर्पदंश के उपचार में पिलाया जाता है

कोमान के मत से ब्राह्मी घृत जो कि ब्राह्मी के पौधे से तैयार किया जाता है, मृगी और हिस्टीरिया के कुछ केसों में और विसूचिका के एक केस में अजमांया गया। मृगी के केसों में इससे काफी लाभ हुआ और उसके दौरे जो जल्दी २ आते थे वे बहुत देरी से आने लगे। हिस्टीरिया के केस इससे बिलकुल आराम हो गये और विशूचिका या हैजे के केस में इससे कोई लाभ नहीं हुआ।

रासायनिक विश्लेषण—के० सी० बोस और एन० के० बोस ने सन् १६३१ में इस वनस्पति का रासायनिक विश्लेषण किया और उन्होंने इसमें से ब्रह्मीन (Brahmin) नामक एक विषैला उपक्षार प्राप्त किया जो कि कुचले में पाये जाने वाले स्ट्रिकनाइन (Stricnine) से मिलता जुलता था। उन लोगों ने इस उपक्षार का अध्ययन किया और इसको बहुत तीव्र विषैला पाया। इसकी बहुत थोड़ी मात्रा ने मेंढक को १० मिनिट में और चूहे को २४ घंटे में मार डाला। इसकी बहुत थोड़ी मात्रा शरीर के रक्तभार को बढ़ाती है और हृदय की पेशियों को उत्तेजित करती है। श्वासक्रियाप्रणाली, गर्भाशय और छोटी आंतों को भी इसकी अत्यन्त सूक्ष्म मात्रा उत्तेजित करती है।

बोस ने इसके सूखे पत्तों के चूर्ण का बहुत ही सफलता के साथ, हृदय क्रिया की दुर्बलता, स्नायु जाल की गिरावट, मस्तिष्क-कमजोरी और दूसरी दुर्बलताओं पर प्रयोग किया। उनके कथनानुसार इसके सत्त्व में स्ट्रिकनाइन से कई प्रकार की विशेषताएँ हैं यह उसके बराबर विषैला नहीं होता और स्ट्रिकनाइन और नक्सवोमिका के लम्बे समय के सेवन से जो प्रतिक्रियाएँ और प्रदाह पैदा होते हैं वे इससे नहीं होते। इसके अतिरिक्त ब्राह्मी हृदय के ऊपर सीधा

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

पौष्टिक प्रभाव बतलाती है मगर स्ट्रिक्नाइन हृदय के ऊपर बहुत गौण रूप से उत्तेजक असर बतलाता है। इन सब बातों से यह मालूम होता है कि भविष्य में इस वनस्पति के सम्बन्ध में किये गये अनुसंधान और भी अधिक उपयोगी सिद्ध होंगे।

बनावटें—ब्राह्मी घृत—घोड़ा बच, कूट और शङ्खाहूली की जड़ इन तीनों का चूर्ण बीस २ तोला, ब्राह्मी के पौधे का रस ६० तोला, गाय का घी ६४ तोला और पानी २४० तोला। इन सब चीजों को मिलाकर हलकी आंच पर चढ़ाना चाहिये। जब पानी जलकर घी मात्र शेष रह जाय तब उसको उतार कर छान लेना चाहिये। इस घृत को एक से दो तोले तक की मात्रा में दूध के साथ सवेरे शाम लेने से सब प्रकार का पागलपन, मृगी, अपस्मार और स्वरभंग दूर होता है।

सारस्वत घृत—ब्राह्मी के पौधे को जड़ समेत उखाड़कर पानी से धोकर लकड़ी के दस्ते से कूट कर उसका २५६ तोला रस निकाल लेना चाहिये। इस रस में गाय का ६४ तोला घी तथा हल्दी, मालती के फूल, कूट, निसोथ और हरड़, इन सब चीजों का चूर्ण चार ४ तोला और लींडी पीपल, बाय बिडंग, सेंधानमक, शक्कर और घोड़ाबच इनका चूर्ण एक २ तोला डालकर हलकी आंच पर चढ़ाना चाहिये। जब रसका भाग जलकर सिर्फ घी रह जाय तब उसको उतारकर छान लेना चाहिये।

रस रत्नाकर नामक ग्रन्थ के कर्ता का कथन है कि इस घी में से एक दो तोला तक घी दूध में डालकर प्रतिदिन दो बार पीने से मनुष्य का कण्ठ स्वर किन्नरों की तरह हो जाता है। उसकी स्मरणशक्ति ऐसी प्रबल हो जाती है कि कठिन से कठिन शास्त्र भी सिर्फ १ बार के पढ़ने से उसको याद हो जाते हैं। सब जाति के कुष्ठ इससे दूर होकर मनुष्य का शरीर चन्द्रमा की कांति की तरह हो जाता है। हर एक प्रकार की बवासीर, ५ प्रकार के वायु गोले तथा पांचों जाति की खांसी इससे दूर होती है। बांझ स्त्रियाँ इसके सेवन से गर्भधारण के योग्य हो जाती हैं और क्षीण वीर्य वाले पुरुषों में भी रमणशक्ति पैदा हो जाती है। बल और जठराग्नि में भी इसके सेवन से वृद्धि होती है।

सारस्वतारिष्ट—पुष्य नक्षत्र के दिन सवेरे सूर्योदय के पहिले ८० तोला ब्राह्मी के पौधे जड़ समेत उखाड़ कर पानी में धोकर साफ कर लेना चाहिये। फिर सतावरी की जड़, बिदारीकंद, अदरक और सोवा ये सब चीजें बीस २ तोला लेकर इन सबको कूट कर १०२० तोला पानी के साथ औटाना चाहिये। जब २५६ तोला पानी बाकी रह जाय तब उसको उतार कर, मसल कर छान लेना चाहिये। इस क्वाथ में ४० तोला पुरानी शहद, १०० तोला शक्कर, २० तोले धावड़ी के फूल और निर्गुण्डी के बीज, निसोथ की जड़, छोटी पीपर, लोंग, बच, कूट, असगंध, बहेड़ा, गिलोय, इलायची, वायविडंग और तज सब चीजें एक २ तोला पीसकर डाल देना चाहिये। इन सब चीजों को चीनी मिट्टी की बरनियों में भरकर उनमें एक तोला सोने के बारीक बरक डालकर, उन बरनियों का मुंह बन्द कर एक महीने तक पड़ी रखना चाहिये। उसके पश्चात् पतले कपड़े से छानकर इस औषधि को बोतलों या बरनियों में भर लेना चाहिये।

भैषज्यरत्नावली नामक ग्रन्थ के कर्ता का कथन है कि यह औषधि सारस्वतारिष्ट के नाम से प्रसिद्ध है और इसको सबसे पहिले भगवान धन्वन्तरि ने अपने मन्दबुद्धि शिष्यों के लिये बनाया था। इसको प्रति दिन सवेरे, शाम और दुपहर एक तोले की मात्रा में पानी में मिलाकर पीने से मनुष्य दीर्घायु होता है, उसका वीर्य शुद्ध होता है। उसकी धारणा शक्ति, स्मरण शक्ति, बुद्धि, बल और कांति बढ़ती है। वाणी शुद्ध होती है, हृदय की गति को बल मिलता है। यह शरीर में रहने वाले ओज नामक दिव्य तत्व की वृद्धि करती है। इसके सेवन से स्त्रियों के ऋतु दोष और पुरुष के वीर्य दोष मिटते हैं।

अधिक पढ़ने से गाने से, या भाषण करने से जिनका बल या स्मरणशक्ति कमजोर हो गई हो उन लोगों को इससे बड़ा लाभ होता है। वह अकाल मृत्यु के पंजे से बच जाता है। उन्माद, अपस्मार, इत्यादि रोग इसके सेवन से नष्ट हो जाते हैं।

ब्राह्मी रसायन—छांह में सुखाई हुई ब्राह्मी का चूर्ण ५ तोला, मुलैठी का चूर्ण ५ तोला, शंखाहूली का चूर्ण ५ तोला, गिलोय का चूर्ण ५ तोला और सोने की भस्म आधा तोला। इन सब चीजों को पीसकर चूर्ण कर लेना चाहिये। इस चूर्ण को १ माशे से लेकर ३ माशे तक की मात्रा में असमान शहद और घी के साथ खाने से स्मरण शक्ति के अन्दर बहुत वृद्धि होती है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बाँस

नाम—संस्कृत—बहुपल्लव, धनुर्द्रुम, बृहत्तृण, धातुष्य, दृढग्रन्थ, दृढकांड, दुरारुह, कमठ, कंटकी, कंटालु कीचक, मृत्युबीज, मस्कर, वंश, वेणु, यवफला, इत्यादि। हिन्दी—बांस, कांटा बांस, मगर बांस, मलबांस, कंटक। बंगाली—बांस, बेहुर बांस। बम्बई-दोंगी, कलक, मांडगे। मध्यप्रान्त-कंटक। गुजराती—बांस, तीन कोर। मराठी-कलक, बाबू। संथाल—मट। फारसी-नाइ। पंजाब-नल, मगर, मगेरी। उर्दू-बांस। तामील—अब्बल, अबु, वेणु। तेलगू—वोंगू, बोंगू वेद्दरू। अंग्रेजी—Spiny Bamboo, Thorny Bamboo। लेटिन—Fambusa Arundinacea (वांबूसा अरंडीनेसिया)।

वर्णन—बांस भारतवर्षमें सभी दूर जंगल और पहाड़ों की तलहटियों में उत्पन्न होते हैं। इसके पौधे एक दम सीधे और लम्बे २ चले जाते हैं। कहीं २ इनकी ऊंचाई ४०।५० फीट तक हो जाती है। इस सारे पौधे पर ढाई २ फुट के अन्तर पर पेरियां बनीं रहती हैं। इन पर डालियां और पत्ते बहुत कम लगते हैं। पहाड़ों पर की तलहटियों में बांसों की बहुत लम्बी चौड़ी झाड़ियां रहती हैं। एक २ झाड़ी में हजारों बाँस निकलते हैं। जब वर्षा ऋतु में बादल गरज जाते हैं तब इनकी पेरियां फूटती हैं। बांसों की दो जातियां होती हैं। एक नर और एक मादा। नर बांस ठोस होते हैं और मादा बाँस पोले होते हैं। जब स्वाति नक्षत्र का पानी मादा बाँस के अन्दर गिरता है तब वह जम कर बंशलोचन का रूप धारण कर लेता है। बाँस के सूखने पर बंशलोचन उसमें से निकाल लिया जाता है। बंसलोचन का वर्णन हम इस भाग में पहिले कर चुके हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत—राजनिघंटु के मत से दोनों प्रकार के बांस (बांस और रंध्र-बाँस) खट्टे, कसेले किंचित् कड़वे, शीतल और मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह, बवासीर, पित्त, दाह और विकार को हरने वाले होते हैं।

रन्ध्र बांस अग्नि को दीपन करने वाला, अजीर्ण नाशक, रुचि कारक, पाचक, हृदय को हितकारी तथा शूल और गुल्म को नष्ट करने वाला होता है।

बाँस के अंकुर, चरपरे, कड़वे, खट्टे, कसैले, हलके, शीतल तथा रक्त पित्त, दाह और सुजाक में लाभदायक होते हैं।

बाँस के चाँवल कसैले, मधुर, पौष्टिक, बलबर्धक तथा कफ, पित्त, विष और प्रमेह को दूर करते हैं। कभी कभी बाँसों के ऊपर जौ के समान फल आते हैं। इनमें से चांवल के समान दाने निकलते हैं। इन्हीं को बाँस के चावल कहते हैं।

बाँस की प्रधान क्रिया गर्भाशय के ऊपर होती है। इससे गर्भाशय का संकोचन होता है और इसीलिये इसके कोमल पत्तों का काढ़ा स्त्रियों को प्रसूति के समय पिलाया जाता है। जिससे उनके गर्भाशय की गंदगी बिलकुल साफ हो जाती है और गर्भाशय असली स्थिति में आ जाता है। ढोरों को भी बच्चा जनने के पश्चात् इसके पत्ते खिलाये जाते हैं।

प्रसूति के सिवाय दूसरे दिनों में भी जब किसी स्त्री को मासिक धर्म साफ न होता हो तब इसके पत्तों का अथवा इसकी गठानी का काढ़ा इसी प्रकार की दूसरी औषधियों के साथ मिलाकर दिया जाता है।

प्रमेह और सुजाक में भी बाँस के पत्ते और अनंत मूल का काढ़ा बनाकर देने से लाभ होता है।

बांस के अंकुर और नारू तथा दूसरे कृमि रोग—सन् १९२३ में इंडियन साइंस कांग्रेस का अधिवेशन हुआ था। उस कान्फ्रेन्स में ऑल इंडिया इन्स्टिट्यूट ऑफ हायजिन एन्ड पब्लिक हेल्थ के डायरेक्टर लेफ्टनेंट कर्नल ए. डी. स्टूअर्ट और बी. एन. मूर्ति ने बाँस के अंकुरों के सम्बन्ध में एक अनुभव पूर्ण निबन्ध पढ़ा था जो उसी साल के जून महीने के इंडियन मेडिकल गजट में प्रकाशित हुआ था। इन दोनों महाशयों का कथन है कि:—

'मिस्टर वॉट ने अपनी इकानामिक प्राडक्टस् ऑफ इंडिया नामक ग्रंथ में बाँस के गुणों को बतलाते हुए लिखा है कि इसके कोमल अंकुरों का पुल्टिस नारू के ऊपर बांधने से नारू निकल जाता है। ऐसा जिन स्थानों में नारू की बीमारी अधिक है वहाँ के लोग मानते हैं। वाट साहब के इस कथन को देखकर हमने बाँस के कोमल अंकुरों को मँगा कर उनके प्रयोग किये। ये कोमल अंकुर १ से १॥ फीट तक ऊँचे थे। हमने इनके ऊपर की छाल को निकाल कर उसके कोमल हिस्सों का ही रस निकाला था और जितना वह रस था उतना ही उसमें पानी मिला दिया था। इन प्रयोगों के जो परिणाम आये वे निम्नांकित हैं।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

(१) नारू के जंतु—बांस के अंकुरों के रस में नारू के जंतुओं को डालने पर वे बारह साढ़े बारह मिनिट में मर गये। उनकी गुंछली डालने की खासियत थोड़े ही समय में खतम हो गई और अन्त में बिलकुल सीधी हालत में ही मरे। फार्मेलीन अथवा कपूर के प्रवाही में भी इन जंतुओंको डालने से ये जन्तु मर जाते हैं मगर इनकी गुंछली डालने की आदत नहीं मिटती और ये गुंछली डाली हुई हालत में ही मर जाते हैं।

(२) श्लीपद के जन्तु—बांस के अंकुरों के प्रवाही में श्लीपद रोगों के जन्तु १० मिनिट में मर जाते हैं।

(३) मक्खियों के अंडे—मक्खियां और उनके अंडे वंशकरीर के इस प्रवाही में ४५ मिनिट में मर जाते हैं। बड़ी मक्खियों के लिये इस प्रवाही में तर किया हुआ एक रुई का फोया एक ऐसे टेस्टट्यूब में जिसके अन्दर मक्खियां रक्खी गई थीं उसके नीचे भाग में रखने पर ७ मिनिट में वे मक्खियां मरने लगी थीं।

(४) मच्छर और उनके अण्डों पर प्रयोग—एक टेस्टट्यूब में मच्छरों को रखकर बांस के अंकुरों के प्रवाही में तर किया हुआ रुई का फोया उस ट्यूब के नीचे रखने पर ३ से ५ मिनिटके बीच में ये मच्छर मरने लग गये। इन अंकुरों के स्वरस को विना पानी मिलाये हुये उपयोग में लेने पर उसने १५ मिनिट में मच्छरों के अण्डों का नाश किया।

मच्छरों के ये अण्डे पोटासियम सायेनाइट के ५ प्रतिशत प्रवाही में २२ मिनिट में और हाइड्रोस्यानिक एसिड के १ से २ प्रतिशत तक के प्रवाही में १८ मिनिट में मरते हैं। इससे मालूम होता है कि वंशकरीर अर्थात् बांस के कोमल अंकुरों का स्वरस (जो अचार डालने के काम में आते हैं) हाइड्रोस्यानिक एसिड और पोटासियम साइनेट के समान जहरीली औषधियों की अपेक्षा भी अधिक कृमिनाशक शक्ति रखता है।

बांस के अंकुरों का स्वरस और पानी को समान भाग मिला कर एक चौड़ी रकाबी में भरकर हवा में खुली स्थिति में ही रखकर उसकी जन्तु नाशक शक्ति का निरीक्षण किया गया और बराबर २५ दिनों तक प्रति २४ घण्टोंके अन्तरसे उसके अन्दर कितने जन्तु मरे हैं इसकी जाँच की गई। इससे मालूम हुआ कि इस प्रवाही को रकाबी में भरकर रखने से २४ घण्टे बाद अर्थात् दूसरे दिन इस प्रवाही की जन्तुनाशक शक्ति सब दिनों की अपेक्षा अधिक तेज मालूम हुई और उसके बाद दिन प्रति दिन इसकी शक्ति क्षीण होती गई और छठे दिन तो इस प्रवाही में मच्छरों के अण्डों को मरने में ४ घण्टे १८ मिनट लगे।

इसके प्रयोगों से हम लोग इस अनुमान पर आये हैं कि बांसके अन्दर जो सायोजेनेटिक ग्लूकोसाइड रहता है उसके ऊपर बाँसमें रहने वाले फेन द्रव्य के असर से हाइड्रोस्यानिक एसिड उत्पन्न होता है और यही इसके कृमिनाशक धर्म का मूल कारण हो सकता है।

इस प्रवाही में रहने वाले हाइड्रोस्यानिक एसिड की वजह से ही अगर कृमि मरते हैं, यह माना जाय तो फिर हाइड्रोस्यानिक एसिड की अपेक्षा भी इसका असर इतनी जल्दी क्यों होता है यह शंका सहज में पैदा होती है। इसके समाधान में यह कहा जा सकता है कि हवा के संयोग से इस प्रवाही में जो हाइड्रोस्यानिक एसिड पैदा होता है वह कृत्रिम हाइड्रोस्यानिक की अपेक्षा विशेष तीक्ष्ण और स्थायी असर करता है।

इस प्रकार उपरोक्त दोनों अनुसन्धानकों ने यह शोध की कि गिनिवर्म अर्थात् नारू पर तथा दूसरे कृमि रोगों पर इस वनस्पति के प्रयोग बहुत सफल हो सकते हैं।

डाक्टर नाडकरनी अपने इण्डियन मटेरिया मेडिका नामक ग्रन्थ में लिखते हैं कि जखम और घावों में पड़े हुए कीड़ों को नष्ट करने के लिये बाँस के अंकुरों का पुल्टिस बहुत ही अक्सीर इलाज माना जाता है। पहले इन अंकुरों का स्वरस उन घावों पर टपकाया जाता है और उसके पश्चात् उनका पुल्टिस उनपर बांध दिया जाता है।

रासायनिक विश्लेषण—बांस की जलाई हुई राख में सेलेसिक एसिड २८ प्रतिशत, चूना ४ प्रतिशत, मेगनेसिया ६ प्रतिशत, पोटासियम ३४ प्रतिशत, सोडियम १२ प्रतिशत, फ्लोरिन २ प्रतिशत और गन्धक १० प्रतिशत पाया जाता है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह सर्द और खुश्क होता है और जला देने के बाद गरम और खुश्क हो जाता है। इसकी जड़ और छाल को जलाकर सिरके में मिलाकर बाल उड़ जाने के स्थान पर लगाने से बाल फिर जमने लग जाते हैं। इसको जलाकर दांतों पर मलने से दांत साफ होते हैं। बांस की जलाई हुई जड़ और छाल

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

समान भाग में हर्दी के साथ पीसकर बालों पर लगाने से बालों की जड़ें मजबूत हो जाती हैं और गिरे हुए बाल फिर जम जाते हैं। बांस के कोयले को पीसकर जखम पर भुरभुराने से जखम से बहता हुआ खून बन्द हो जाता है और जखम भर जाता है। इससे सूजन भी बिखर जाती है। बांस को सिरके के साथ पीसकर कमर और कुल्हों पर लगाने से दर्द आराम हो जाता है। बांस और उनके पत्तोंपर जो एक प्रकार की चिकनाहट जम जाती है उसको आँख में लगाने से आँख का जाला कट जाता है। बांस को पानी में जोश देकर पीने से रुका हुआ मासिक धर्म और पेशाब जारी हो जाता है। इसके कच्चे पत्तों को पानी में खूब मलकर साफ करके पीने से मुँह से खून का आना बन्द हो जाता है। इसके पत्तों को जलाकर सूखी और तर खुजली पर लेप करने से लाभ होता है। बांस की जड़ को जलाकर उसकी राख को पानी में घोलकर उसका नितरा हुआ पानी पीने से आमाशय और यकृत की गरमी शान्त होती है। चोट की वजह से अगर शरीर में कहीं दर्द हो तो इसकी बारीक छाल को छीलकर शक्कर के साथ लेने से लाभ होता है। बांस की जड़ को जलाकर चमेली के तेल में मिलाकर लगाने से सिर की गंज और दाद मिट जाते हैं। इसकेपत्तों का अर्क शहद के साथ पीने से खांसी में लाभ होता है।

प्रसूति के पश्चात् प्रसूति के गर्भाशय में जो गन्दगी बाकी रह जाती है वह इसके पत्तों का काढ़ा पीने से बिलकुल साफ हो जाती है।

बनावटें—रजः प्रवर्तक क्वाथ—बाँस की गठान अथवा कोमल पत्ते १ भाग, अमलताश की फली की छाल २ भाग, कपास की जड़ १ भाग गाजर के बीज १ भाग, मूली के बीज १ भाग, काले तिल १ भाग, गोखरू १ भाग- इन्द्रायण की जड़ १ भाग, कचरी के बीज १ भाग, सोंफ की जड़ १ भाग इन सब चीजों को मिला कर जौकुट कर लेना चाहिये फिर इसमें से १ तोला क्वाथ लेकर ३१ तोला पानी में औटाना चाहिये। जब आठ तोला पानी शेष रह जाय तब उसको छान कर उसमें १ तोला पुराना गुड़ मिलाकर प्रातःकाल पीना चाहिये। इस तोला प्रकार १ सप्ताह तक पीने से बहुत समय का रुका हुआ मासिक धर्म फिर शुरू हो जाता है। मगर यह क्वाथ बहुत उग्र होता है। इसलिये गर्भवती स्त्री और कोमल प्रकृति वाली स्त्रियों को यह नहीं पीना चाहिये।

रजःशोधक क्वाथ—बांस के कोमल, पत्ते, सोवा के बीज, अमलतास का गूदा, बायबिडंग, कलौंजी, मूली के बीज, हंसराज, अजमोद, मजीठ, अपामार्ग की जड़, तोदरी सुख, हरमल और इन्द्रायण की जड़ ये सब चीजें एक एक तोला, चित्रक की जड़ की छाल ८ माशे, कपास की जड़ की छाल और गाजर के बीज दो २ तोले। इन सब चीजों को लेकर जौकुट कर लेना चाहिये। इनमें दो तोला क्वाथ लेकर आधा सेर पानी में शाम को १ मिट्टी के बरतन में भिगो देना चाहिये। प्रातःकाल उसको औटाना चाहिये। जब १० तोला पानी बाकी रह जाय तब उसको उतारकर छान लेना चाहिये। इसमें से आधा क्वाथ लेकर उसमें १ तोला गुड़ मिलाकर १ मात्रा महायोगराज गुग्गुल के साथ सवेरे ले लेना चाहिये और बाकी का शेष क्वाथ उसी प्रकार शाम को योगराज गुग्गल के साथ ले लेना चाहिये जिस दिन मासिक धर्म हो उसी दिन से प्रारम्भ करके ४ दिनों तक लगातार इस क्वाथ को लेते रहने से मासिकधर्म के सब विकार दूर हो जाते हैं। जिस स्त्री को मासिक धर्म अनियमित रूप से होता हो, कष्ट के साथ होता हो उसके लिये यह अमृत के समान है। इसके प्रयोग से मासिक धर्म खुल कर साफ आता है। गर्भाशय के सब विकार निकल जाते हैं। जमा हुआ रक्त मासिक धर्म के साथ निकल जाता है और अशुद्ध रक्त के निकल जाने से स्त्री का गर्भाशय सन्तानोत्पत्ति के योग्य हो जाता है। (जंगलनी जड़ी बूटी)।

बांस छोटा

नाम—संस्कृत—वंश, वेणु, यवफला। बंगाल—कुरेल। बम्बई—बांस, कबान। हिन्दी—बांस, नरबांस, कोपार, बांसकबन, बांसखुर्द। गुजराती—नरबांस, न क्कोर बांस। तामील—कोनाइ, सिहमुंगिल। तेलगू—बेदुरु। इङ्गलिश—Male Bamboo। लेटिन—Dendrocalamus Strictus (डेंड्रोकेलेमस स्ट्रिक्टस)।

वर्णन—यह बांस नर जाति का होता है। इसकी लड़की ठोस और सख्त होती है, इसकी लाठियां बहुत अच्छी बनती हैं। इसके पत्ते २.५ से ५ सेंटिमीटर तक लम्बे होते हैं। यह वनस्पति सारे भारतवर्ष में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसकी गठानें शीतल, पौष्टिक और संकोचक द्रव्य की तरह उपयोग में ली जाती हैं।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बायविडंग

नाम—संस्कृत—कृमिघ्न, भस्मक, मोघा, विडंग, कृमिकंटक, कैराल, जन्तुघ्नी, मृगगामिनी, गर्दभ इत्यादि हिन्दी—बायविडंग, बेवरंग। बंगाल—भाइ बिरंग, बिडंग। बम्बई—वावरंग, काटकेन्नि। मध्यप्रान्त—बायविरंग। गुजराती-बाबिडंग। मराठी—वावडिंग, कारकेन्नि। पंजाब—बब्रुग। नेपाल—हिमलचेरी। फारसी—बिरंज केबुली। अरबी-बायबडग। तामील—वाय विलगम्। तेलगू—विदंगमु। लेटिन—Embelia Ribes (एम्ब्रेलिया रायबस)।

वर्णन—बायविडंग की मोटी झाड़ी होती है। इसकी डालियां खुरदरी और बहुत गांठों वाली होती हैं। इसके पत्ते २-३ इञ्च तक लम्बे और ऊपर से कुछ चमकदार होते हैं। इसके फूल सफेद होते हैं। इसके फल काली मिरच के समान होते हैं और वे गुच्छों में लगते हैं। जब वे सूख जाते हैं तब उन पर झुर्रियाँ पड़ जाती हैं और उनके अन्दर एक २ बीज निकलता है।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेद के मत से बायविडंग चरपरा, कड़वा, गरम, रुचि-कारक, हलका, जठराग्नि को दीपन करने वाला तथा वात, कंफ, मन्दाग्नि, अरुचि, भ्रांति, कृमिशूल, अफारा, उदररोग, प्लीहा, अजीर्ण, श्वास, खांसी, हृदय रोग, विष विकार, आम, मलस्तम्भ, मेदरोग और प्रमेह को दूर करती है।

बायबिडंग भारतीय चिकित्सा पद्धति के अन्दर अपने कृमिनाशक गुणों की वजह से एक बहुमूल्य वस्तु समझी जाती है। महर्षि सुश्रुतने अपनी संहिता में बड़ी से बड़ी कृमिनाशक और बड़ी से बड़ी जीवनी-शक्ति की रक्षा करने वाली दो औषधियों के संयोग से एक 'सर्वोपघात शमनीय' नामक औषधि का आविष्कार किया। इस औषधि की प्रस्तावना में उक्त महर्षि लिखते हैं कि—

'शरीरस्योपघाता ये दोषजा मानसास्तथा। उपदिष्टा प्रदेशेषु तेषां वक्ष्यामि वारणम्॥

अर्थात्—वात, पित्त, कफ वगैरह शारीरिक और सत्व, रज, तम वगैरह मानसिक दोषों की वजह से और प्रकृति क्षुब्ध आचरण से शरीर में नुकसान करने वाले जो २ उपद्रव पैदा होते हैं उन सब को यह औषधि निवारण करती है। यह औषधि इस प्रकार है।

उत्तम पके हुये बायविडंग लेकर उनके ऊपर के छिलकों को उड़ा कर जो मगज बाकी रहें उनको कूट कर बारीक चूर्ण कर लेना चाहिये। इस चूर्ण में उतने ही वजनका मुलेठी की जड़ का बारीक चूर्ण मिला देना चाहिये। इस चूर्ण में से प्रतिदिन सवेरे अपनी शक्ति के अनुसार चूर्ण लेकर ठंडे पानी के साथ खा लेना चाहिये। उसके ऊपर थोड़ा ठंडा पानी और पी लेना चाहिए। जब यह चूर्ण पच जाय तब उसके बाद देरीसे भोजन करना चाहिये। पथ्यमें सिर्फ साँठी चावल का भात घी तथा मूंग और आंवलेका यूष इतनी ही चीजें लेना चाहिये और भोजन दिनमें एक ही बार करना चाहिये।

इस प्रकार इस औषधि को एक महीने तक सेवन करने से सभी जाति के बवासीर नष्ट होते हैं। किसी भी व्याधि को उत्पन्न करने वाले, किसी भी जाति के और शरीर के किसी भी अंग में रहने वाले जन्तु इससे नष्ट होते हैं। स्मरण शक्ति बहुत बढ़ती है। प्रति वर्ष एक २ मास तक इस औषधि का सेवन करने से मनुष्य हमेशा निरोग रहता है और दीर्घायु होता है।

सुप्रसिद्ध वैद्य झण्डूभट्टजी ने सुश्रुत के बतलाये हुए उपरोक्त सर्वोपघात शमनीय प्रयोग का अनेक रोगियों पर अनुभव करके बतलाया कि इस औषधि में अग्निवर्धक, कृमिनाशक, रक्त शोधक, बात कफ नाशक और ज्ञान तन्तुओं के लिये शक्ति वर्धक ये सब गुण पाये जाते हैं। इससे अतिसार, संग्रहणी, अर्श वगैरह मंदाग्नि से होने वाले, आफरा, गोला, चूंकि, शूल, वगैरह बात और कफसे होने वाले, प्रमेह, उपदंश, भगन्दर, कण्ठमाला, कोढ़ वगैरह रक्त की अशुद्धि और कृमियों से उत्पन्न होने वाले, उन्माद, अपस्मार, अर्द्धाङ्ग इत्यादि ज्ञानतन्तुओं की निर्बलता से होने वाले और क्षय, खांसी, श्वास वगैरह फेंफड़ों की खराबी से होने वाले रोगों में इस प्रयोग से बहुत उत्तम लाभ होता है। इसके अतिरिक्त हैजा, मलेरिया, प्लेग, वगैरह जन्तु जन्य प्राणघातक रोगों के आक्रमण के समय इस प्रयोग का सेवन करते रहने से इन रोगों के आक्रमण का भय नहीं रहता।

जङ्गलनी जड़ी बूंटी के लेखक वैद्य शास्त्री शामलदास गौर लिखते हैं कि हमने भी इस सर्वोपघात शमनीय प्रयोग का कई रोगियों के ऊपर सफलता पूर्वक अनुभव किया है। इस प्रयोग में पहली वस्तु बायविडंग है जो सब

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

प्रकार के कृमियों को नष्ट करने में सर्वोत्तम वस्तु है और दूसरी वस्तु मुलेठी है जो प्राणतत्व की रक्षा करने में और आयु बढ़ाने में अपनी सानी नहीं रखती। इन दोनों उत्तम वस्तुओं के संयोग से यह योग बहुत ही विलक्षण हो गया है। जब कोई भी रोग बहुत हठीला हो गया हो और किसी भी उपाय से न मिटता हो तब रोगी को पहले १-२ महीने तक इस प्रयोग का सेवन करा कर पश्चात् रोग की कोई खास दवा देने से तत्काल लाभ मालूम होता है। पित्त के रोग में तथा पित्त प्रकृति वालों को यही प्रयोग द्राक्षा के क्वाथ अथवा नीमगिलोय के स्वरस के साथ देने से और वायु तथा कफ की प्रकृति वालों को भिलामे के क्वाथ के साथ देने से विशेष रूप से लाभदायक होता है। इस प्रयोग का यदि विधिपूर्वक उपयोग किया जाय तो क्षय की प्राणघातक व्याधि से ग्रस्त रोगी तथा भयंकर उपदंश के विष से अन्तिम स्थिति में पहुँचे हुए व्रण, नासर, भगंदर, कण्ठमाल, कुष्ठ, संग्रहणी, अर्द्धाङ्ग, इत्यादि के रोगी भी अच्छे हो जाते हैं।

डॉक्टर देसाई के मत से वायबिडंग उष्ण, दीपन, पाचन, कुछ आनुलोमिक और मूत्रल, उत्तम कृमिनाशक, बलकारक, मस्तिष्क और मज्जा तंतुओं को शक्ति देने वाली, रक्त शोधक और रसायन होती है। इसके लेने से पेशाब का रंग लाल होता है और उसकी अम्लता बढ़ती है। इस औषधि की क्रिया शरीर की सब ग्रंथिओं पर और प्रधान रूप से रस ग्रंथि पर होती है। यह शरीर की सारी जीवन-विनिमय क्रिया को उत्तेजन देती है।

मनुष्य के शरीर पर पारद का जैसा विलक्षण प्रभाव होता है वैसा ही वायबिडंग का होता है। वायबिडंग को लेने से भूख लगती है। अन्न पचता है। दस्त साफ होता है। वजन बढ़ता है। त्वचा की कांति दीप्त होती है। शरीर में तेज का संचार होता है और मन में प्रसन्नता पैदा होती है। बच्चों के लिए यह तो एक दिव्य औषधि है। जिन बच्चों को सूखे का रोग हो गया हो, खाया अन्न नहीं पचता हो, हाथ पांव पतले होकर के त्वचा ढीली हो गई हो, पेट बड़ा हो गया हो, ऐसे बच्चों के प्राण बचाने वाली औषधि वायबिडंग ही है और इसको अनन्तमूल के साथ देने से यह विशेष लाभदायक होती है। बचों के स्वस्थ रहने के लिये वायविडंग के दानों को दूध में उबालकर वह दूध पीने को दिया जाता है। गंडमाला में वायबिडंग को गूगल तथा मैंसिल और साम्हर सींगकी भस्म के साथ घी और शहद में मिलाकर देते हैं। इससे धीरे २ मगर अच्छा लाभ होता है।

मज्जा तंतु सम्बन्धी रोगों में (जैसे अर्धांग वायु, इत्यादि) वायबिडंग को लहसन के साथ में उबाल कर वह दूध पिलाया जाता है।

चर्मरोगों में बायबिडंग के भीतरी और बाहरी दोनों प्रयोग होते हैं। तरह २ के कुष्ठ रोग तथा चर्म रोग अन्न की पाचन क्रिया ठीक न होने की वजह से ही होते हैं बायविडंग पाचन क्रिया को सुधारता है और दस्त साफ लाता है। इसलिये कुष्ठ और चर्म रोगों पर इसका अनुकूल प्रभाव होना स्वाभाविक है। इसके अतिरिक्त त्वचापर इसकी उत्तेजक क्रिया भी होती है।

अग्निमांद्य, अरुचि, अजीर्ण, वमन, शूल, आफरा और बवासीर में बायविडंग मट्ठे के साथ दिया जाता है। अतिसार और संग्रहणी में बायबिडंग का क्वाथ बनाकर देते हैं। अजीर्ण रोग में कभी २ खांसी और श्वास पैदा हो जाता है। तब बायबिडंग को पीपल के साथ देते हैं। गोल और चपटे जंतुओं को निकालने के लिये १ तोला बायबिडंग का चूर्ण पानी अथवा दही के साथ देते हैं। इससे सब कृमि मरकर निकल जाते हैं। कृमियों को नष्ट करने के लिये जब इस औषधि को देना हो तब पहले अरंडी के तेल का जुलाब देकर आंतों को साफ कर लेना चाहिये और फिर खाली पेट इस औषधि को देना चाहिये और दूसरे दिन फिर जुलाब देना चाहिये। पीनस और आधा शीशी में बायबिडंग का चूर्ण सुंघाने से लाभ होता है।

डायमॉक के मतानुसार बायबिडंग की भारतवर्ष के अन्दर एक कृमिनाशक वस्तु की तरह बहुत भारी प्रशंसा है। खास करके टेपवर्म (चपटे कृमि) को नष्ट करने में तो यह औषधि बहुत प्रसिद्ध है। छोटे बच्चों को इसके चूर्ण की १ चाय के चम्मच के बराबर मात्रा दिन में दो बार दी जाती है। और बड़े लोगों को इसके चूर्ण की एक तोले तक की मात्रा दी जाती है। यह बहुत सूक्ष्म आनुलोमिक होती है। यह सुस्वादिष्ट, कुछ सुगन्धित होती है। यह कृमियों को मारकर बाहर निकाल देता है। रोगी को पहिले एक जुलाब देकर इस औषधि के लिये तैयार कर लेना चहिये। इसके फलों को दूध में उबालकर वह दूध पिलाने का आम रिवाज हैं और यह विश्वास किया जाता है कि इससे बच्चों के पेट में बादी और कृमि पैदा नहीं होते।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

इन्डियन फारेस्टर के अप्रैल १९१९ के अङ्क में यह घोषित किया गया कि बायबिडंग की जड़ का काथ तत्कालीन चलने वाले इन्फ्यूएंजा ज्वर पर बहुत ही लाभदायक सिद्ध हुआ है। इसको दिन में २ ३ बार देना चाहिये। ए० सी० परांजपे और जी० के० गोखले ने इस वनस्पति के अध्ययन का परिणाम बतलाते हुए कहा कि बायबिडंग बहुत प्राचीन काल से भारतवर्ष में कृमिनाशक वस्तु की तरह प्रचलित है। यह टेपवर्म्स को नष्ट करने की शक्ति अवश्य रखती है मगर गोलकृमि (Round Worms), हूकवर्म्स और व्हिप वर्म्स पर इसका कोई असर नहीं होता है। टेपवर्म के ऊपर इसका प्रभाव इसमें पाये जाने वाले इम्बेलिकएसिड या इम्बेलिन पर अवलंबित है। जोकि इसमें २-५ प्रतिशत से २-७ प्रति शत तक पायां जाता है। टेपवर्म्स के ऊपर इम्बेलिन के असर स्पष्ट रूप से देखे गये और यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि टेपवर्म्स को नष्ट करने के लिये इम्बेलिन एक बहुत उपयोगी और सुरक्षित औषधि है।

सखाराम अर्जुन का कथन है कि बायबिडंग का १ तोला चूर्ण सोती दफे दही के साथ दिया गया और उसी दिन सवेरे रोगी को अरंडी के तेल का जुलाब दिया गया जिसके परिणामस्वरूप ऐसे रोगियों के चपटे कृमि दस्त के साथ निकल गये।

यनानी मत—यूनानी मत से बायबिडंग गरम और खुश्क होती है। यह हलकी, भूख पैदा करने वाली, कृमियों को नष्ट करने वाली और पौष्टिक होती हैं। आमाशय और आंतों में होने वाले दर्द को यह मिटाती है। बायबिडंग के १ तोला बारीक चूर्ण को आध पाव मट्ठे में मिलाकर प्रातःकाल खाली पेट पिलाने से पेट के कीड़े मर जाते हैं। दूध में बायबिडंग के दाने डालकर गरम करके, छान कर छोटे बच्चों को पिलाने से उनका पेट फूलना बन्द हो जाता है। बायबिडंग को तम्बाकू के साथ चिलम में रखकर धुंआँ खींचने से आमाशय और आंतों में होने वाला बादी का दर्द मिट जाता है।

बायबिडंग नं० २

नाम—हिन्दी—बायबिडंग, भिंगी। बम्बई—आमटी, आंवट, बर्वटी बायबिडंग। नेपाल—अचल, कलइवोबोटी। लेटिन—Embelia Robusta (एम्बेलिया रोबुस्टा)।

वर्णन—इस बायबिडंग का पौधा भी असली बायबिडंग के पौधे से मिलता जुलता होता है। यह भी एक झाड़ीनुमा छोटा वृक्ष होता है। इसके पत्ते ६-३ सेंटिमीटर से ११-५ सेंटिमीटर तक लम्बे होते हैं। और ३-८ से ५-७ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं। इसके फूल हरापन लिये हुए पीले रंग के होते हैं। यह वनस्पति हिमालय में यमुना से पूर्व की ओर बंगाल तक और दक्षिण की ओर सीलोन तक होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—यह बायबिडंग कोष्ठवायु को नष्ट करने वाला, कृमिनाशक, बवासीर में लाभ पहुँचाने वाला, वेदनानाशक, सूजन को दूर करने वाला और रसायन होता है। इसके दूसरे धर्म बायबिडंग के समान ही होते हैं। मगर इसमें सूजन को नष्ट करने का गुण अधिक रहता है। गंडमाला में इसकी जड़ का अनन्तमूल के साथ घोट कर पिलाते हैं और ठण्डे पानी में इसको पीसकर गठानों पर लेप करते हैं। सड़े हुए दांत की पोल में इसके फलों को पीस कर थोड़ी हींग मिलाकर भरने से दांत का दर्द कम हो जाता है। इसकी जड़ की सूखी छाल का मंजन करने से भी दन्त वेदना कम होती है। इसके कोमल पत्ते का सोंठ के साथ काढ़ा करके कुल्ले करने से गले के छाले मिटते हैं। फुफ्फुस के परदे की सूजन में इसके फलं को मक्खन के साथ मिलाकर लेप करते हैं इसके बीजों के चूर्ण की फक्की लेने से अर्शरोग में लाभ होता है।

बाबुना

नाम—हिन्दी—बाबूना। गुजराती—बाबूना। फारसी, अरबी, उर्दू—बाबूना। इंगलिश—Willd Chamomile। लेटिन—Matricaria Chamomilla (मेट्रिकेरिया केमामिला)

वर्णन—यह अकलकरे वर्ग की एक वनस्पति होती है। जो अपने आप भी पैदा होती है और बोई भी जाती है। इसके पत्ते छोटे बारीक और कुछ लम्बे होते हैं। डालियां हरी, बारीक और नाजुक होती हैं। इनकी लम्बाई १ बालिश्त से १ हाथ भर होती है। इन शाखाओं में अनेकों छोटी २ उपशाखायें आती हैं। इसके फूलों की इकहरी

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

और दोहरी घुंडियाँ होती हैं। इकहरे फूल औषधि के काम में आते हैं जो पीले और सफेद होते हैं। इसके फूलों में खुशबू भी रहती है। मिश्र में सफेद फूल वाला एक बड़ी किस्म का बाबूना होता है। इसको कास्काश कहते हैं। औषधि प्रयोग में बाबूना के फूल ही विशेषरूप से काम में आते हैं इसके अतिरिक्त इसकी जड़ और इसका तेल भी औषधि के काम में आता है।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत से यह दूसरी दर्जे में गरम और खुश्क होता है। इसकी जड़ उत्तेजक पौष्टिक और शांतिदायक होती है। इसके फूल तीक्ष्ण स्वाद वाले और उत्तम सुगन्धित होते हैं। ये मस्तिष्क के लिये पौष्टिक और छाती के रोगों के लिये हितकारक होते हैं। ये रक्त शोधक, कामोद्दीपक, मूत्रल, पसीना लाने वाले और शांतिदायक होते हैं। मस्तक शूल, सुजाक, छाती का दर्द, गीली खुजली और नेत्र रोग में ये उपयोग में लिये जाते हैं। मूत्राशय और गुर्दे की पथरी को ये तोड़ देते हैं। इसका तेल कामोद्दीपक और दर्द को दूर करनेवाला होता है। यह हर प्रकार के दर्द को दूर करने के काम में लिया जाता है। यह सूजन को कम करता है और खाँसी तथा सीने की बीमारी में मुफीद है।

बाबूनी मस्तिष्क, काम शक्ति और शरीर के अंगों को ताकत देता है। यकृत के सुद्दों को खोलता है। पेशाब, पसीना और दूध ज्यादा पैदा करता है। शरीर को मुलायम करता है। पेट का दर्द, मसान का दर्द, पीलिया और सूखा खाँसी में लाभदायक है इसको चबाने से आँख धोने से मुँह के छाल मिट जाते हैं। इसका लेप सरदी के सिर दर्द की दूर करता है आँख में दर्द हो तो इसके काढ़े से लाभ होता है। इसके ३॥ माशे फूलों का फक्का देने से कुछ दिनों में पथरी टूट जाती है। सूजन को दूर करने के लिये यह प्रथम श्रेणी की औषधि है। इसका शराब सिरके के साथ औटाकर उसकी भाफ को कान के अन्दर पहुँचाने से नवीन बहरापन मिट जाता है। सख्त सूजन को बिखेरने के लिये इससे बढ़ कर दूसरी दवा नहीं है। तने हुए अंग पर इसका लेप करने से ढीलापन आ जाता है। इसके बीजों की मालिश कड़वे बादाम के तेल की मालिश से ज्यादा मुफीद है। पानी में जोश देकर इसका धुआँ दिमाग में पहुँचाने से नजला आराम होता है।

अगर आँख के काय पर नासूर हो गया है तो बाबूना को पीस कर लेप करने से फौरन अच्छा हो जाता है। बाबूने का चूर्ण उस पर भुरभुराने से भी लाभ होता है। बाबूने के सेवन से सीने की सफाई होता है और साँस लेने में सहूलियत पैदा होती है।

इसके काढ़े के टब में गर्भवती स्त्री को बैठाने से बच्चा आसानी से पैदा हो जाता है। आँवल निकल जाती है और हैजे को खून जारी हो जाता है।

डॉक्टरों के मतानुसार गुल बाबूना ताकतवर और क्रियाशील औषधि है। आमाशय की कमजोरी के वास्ते अच्छी दवा है। इसका तेज काढ़ा ठंढा करके आँखों पर लगाने से आंखों को शक्ति मिलती है और गरम काढ़ा पिलाने से वमन होती है।

बाबूने का तेल—बाबूने का तेल दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क होता है। इसकी मालिश शरीर के अंगों को ताकत देती है और दर्द को दूर करती है। इससे सरदी की सूजन बिखर जाती है और चोट और मोच में लाभ पहुँचता है। कमर का दर्द, गठिया, गृध्रसी, पैर की ऊंगली का दर्द और अंडकोष की सूजन में इसकी मालिश से कफ का बुखार भी जाता रहता है। इसको कान में टपकाने से बहिरापन दूर होता है। बाबूने के तेल की २-४ बूंद लाभ होता हैं। इसजी मालिश से बताशे में रख कर कुछ दिनों तक खाने से मनुष्य की काम शक्ति बहुत जाग्रत होती है।

बाबूने के फूल उत्तेजक, मोटापे को दूर करने वाले और शरीर संगठन की कमजोरी, हिस्टीरिया, अग्निमान्द्य और पार्यायिक ज्वरोंमें ये बहुत उपयोगी होते हैं। इनका गरम और तेज काढ़ा वमनकारक होता है और इनका सौम्य निर्यास पौष्टिक और ज्वरनाशक होता है। बादी के उदर शूल और काँलिक उदर शूल में इसका तेल बहुत ही प्रभावशाली वस्तु होती है।

गुजरात में इसका तेल संधिवात में मालिश करने के काम में लिया जाता है।

यूरोप के कई हिस्सों में इसके फूल बच्चों की बीमारी के लिये एक आश्चर्यजनक औषधि माने जाते हैं। ये ज्ञान तन्तुओं के लिये उपशामक और उदर की अन्नप्रणालो को ताकत देने वाले माने जाते हैं। कर्ण रोग, स्नायु शूल, पेट की अव्यवस्था और बच्चों के आक्षेप रोग में बहुत उपयोगी होते हैं।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

मात्रा—इसके फूल और इसकी जड़ की मात्रा १ तोले से १। तोले तक होती है।

मुजिर—इसका अधिक सेवन गले में और शरीर के भीतर अंगों में हानि पहुँचाता है।

दर्पनाशक—शहद और शरबत अनार, तेल का दर्पनाशक रोगन नीलोफर।

प्रतिनिधि—बिरज सफा और तेल का प्रतिनिधि मालकांगनी का तेल।

बाबूनागाव

नाम—हिन्दी—उर्दू—बाबूनागाव। पंजाब—बाबूना। लेटिन—Cotula Anthemoides (कोटूला-एन्थेमोइडस)।

वर्णन—यह बाबूने की जातिकी एक बनस्पति है। अन्तर इतना ही होता है कि बाबूने के बीज होते हैं और इसके नहीं होते हैं। बाबूने के फूल की तरह इसके फूल होते हैं। यह फूल गोल और पीला होता है। इसके आस पास छोटी और सफेद पत्तियाँ होती हैं। इसकी छोटी और बड़ी दो जातियां होती हैं। इसका फल बाबूने के फूलसे बड़ा और अधिक सुगंधित होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत से यह तीसरे दर्जे में गरम और दूसरे दर्जे में खुश्क होता है। इसके सब गुण बाबूना के गुणों से मिलते जुलते होते हैं। यह वायु को बिखेरने वाला, सुद्दों को निकालने वाला और पथरी को तोड़ने वाला होता है। कफ और वायु के दोषों को यह दस्त की राह निकाल देता है। इसकी छोटी जाति घर में रखनेसे मच्छर मर जाते हैं। इसको चौगुने जैतून के तेल या तिल के तेल में डालकर ४० दिन तक धूप में रक्खे फिर उस तेल को लकवा या अर्धांग वाले रोगी के शरीर पर मालिस करने से लाभ होता है। इस तेल की मालिस से रोम छिद्र खुल जाते हैं और पसीना आने लग जाता है।

शेख का कथन है कि इसकी लाल जाति धातुपतन को रोकती है। इसको सूंघने से बहुत नींद आती है। रात के वक्त बाबूनागाव, छिले हुये जौ और बाबूना को जोश देकर उस पानी में खसखस का तेल मिलाकर अनिद्रा रोग के रोगियोंके सिर पर धार देवें तो उनका रोग मिट कर उन्हें नींद आने लगती है। मालीखोलिया और मिरगी में भी यह लाभ पहुँचाता है क्योंकि इसमें वायु और कफ को साफ करने की ताकत रहती है। ६ माशे बाबूनागाव को ३० दिन तक लगातार पीने से मिरगी बिलकुल जाती रहती है। इसी प्रकार इसके ७ माशे फूलों को प्रति दिन २५ रोज तक शराब के साथ पीने से मिरगी चली जाती है। इसके पीने से लकवे में भी लाभ होता है। इसके फूलों को जला कर आंख के कोये के नासूर में भरने से नासूर मिट जाता है। नेत्र रोगों में भी यह मुफीद है।

बाबूनागाव पीलिया और जलोदर में लाभ पहुँचाता है। यकृत के सुद्दों (गांठों) को खोलता है और तिल्ली की सूजन को दूर करता है। अगर मूत्राशय और आमाशय में खून जम जाय और पेशाब रुक जाय तो इसको शराब के साथ देने से लाभ होता है। गुर्दे की पथरी को भी यह तोड़ कर निकाल देता है। इसको शराब के साथ लेने से गर्भवती स्त्री का गर्भ गिर जाता है। इसकी बत्ती को योनि में रखने से मासिक धर्म बहुत ताकत के साथ जारी हो जाता है और गर्भाशय और गांठ मिट जाती है। ताजा बाबूनागाव का लेप करने से लिगेंन्द्रिय, अंडकोष, जांघ और काम शक्ति को बहुत ताकत मिलती है। इसको दूध के साथ खाने से धातु और शक्ति बढ़ती है।

मुजिर—इसका अधिक सेवन गुर्दा, मसाना, तिल्ली और आमाशय को नुकसान पहुँचाता है तथा स्मरण-शक्ति को कमजोर करता है।

दर्पनाशक—गुर्दा और मसाने के लिये धनियाँ, तिल्ली और आमाशय के लिये अनीसून और धनियां, मस्तिष्क, के लिये गुलनीलोफर है। मात्रा—३ माशे से ६ माशे तक है।

बाकला

नाम—हिन्दी यूनानी—बाकला। लेटिन—Phaseolus Vulgaris (फेसिओलस व्हलगेरिस)।

वर्णन—यह एक दाना होता है जो लम्बी २ फलियों में पैदा होता है। यह मोटा सफेद और काले सिर वाला होता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में सर्द और तर होता है। इसके दाने की दोनों दालों के बीच में एक छोटी सी कड़वी वस्तु निकलती है वह गरम और खुश्क होती है। इसके दानों में सूजन को बिखेरने की कुछ शक्ति है। यह पेट में फुलाव पैदा करता है। वायु बढ़ाता है। और देरी से हजम होता है। अगर बिना छिले हुए बाकले को सिरके में पकाकर खावें तो वमन और दस्त आना बन्द हो जाता है। सिरके के साथ छिला हुआ बाकला खाने से गुर्दे की सफाई होती है। सोंठ के साथ लेने से काम शक्ति बढ़ती है। इसका क़ाढ़ा पीने से मासिक धर्म जारी होता है और भ्रूण गर्भाशय से निकल जाता है।

इसका काढ़ा पुराने दस्त और आंतों के जखम को आराम करता है। सिर पर किसी किस्म की चोट से सूजन पैदा हो गई हो तो बाकले को जौ के आटे के साथ लेप करने से मिट जाती है। कान के पीछे की सूजन पर इसको गेहूं, मेथीदाना और शहद के साथ लेप करने से फायदा है। स्त्रियों के स्तनों में दूध इकट्ठा हो जाने से या चाट लगने से सूजन पैदा हो जाय तो इसको शराब या सिरके के साथ पकाकर बांधना चाहिये। कण्ठमाला के ऊपर बाकला, जौ का आटा, फिटकिरी और जैतून का पुराना तेल मिलाकर लेप करने से बहुत लाभ होता है। बाकला के छिलके और ताजे पत्तों का लेप आग से जले हुए स्थान पर बहुत फायदा करता है। बिना छिले हुए बाकले को पानी में पीस कर मोटे बालों पर खिजाब की तरह लगाया करें तो बाल बहुत बारीक हो जायँगे। जहाँ के बाल गिर गये हों वहाँ पर बाकले के छिलकों को लगाने से बाल फिर से आने लगते हैं।

बाकले के आटे को पानी में भिगोकर उबटन की तरह लगाने से शरीर का रंग निखर जाता है। इसके हरे पौधे को जलाकर उसकी राख को चेचक और फोड़े फुन्सियों के काले दागों पर मलते रहने से वे दाग दूर हो जाते हैं। अंडकोष की सूजन और बदगांठ पर बाकले के आटे और जीरे को शराब में पका कर लेप करने से लाभ होता है। बाकले को शराब में पकाकर पागल कुत्ते के काटे हुए स्थान पर लगाने से लाभ होता है।

कुछ जानकर लोगों का मत है कि अगर किसी जगह की हड्डी टूट जाय तो इसके बिलकुल ताजा दानों को कूट कर उनका रस निकाल कर २। तोले की मात्रा में पीने से हड्डी जुड़ जाती है। इसके पौधे के पत्ते गिले अरमानी के साथ पीने से भी यही लाभ होता है। बाकले के दानों को अंजीर के साथ जोश देकर पीने से खांसी जाती रहती है। कफ में खून का आना बन्द हो जाता है और पेचिश में लाभ होता है।

मुजिर—बाकले का अधिक सेवन पेट में फुलावा पैदा करता है। सुस्ती, हृदय की धड़कन और सारे शरीर में तर तथा खुश्क खुजली को उत्पन्न करता है। इसके अधिक खाने से खराब स्वप्न दिखलाई देने लगते हैं। स्मरण शक्ति कमजोर हो जाती है। रंज और गम पैदा करता है। इसके ऊपर का छिलका मुँह में छाले पैदा करता है। इसके उपयोग से हलक में खुश्की पैदा होकर सूजन पैदा होती है इसलिये इस वस्तु का अधिक उपयोग कभी न करना चाहिये।

दर्पनाशक—सोंठ, जीरा, काली मिरच, पोदीना, सद्दाव इत्यादि। प्रतिनिधि—उड़द।

बाजरा

नाम—संस्कृत—बर्जरी, नालिका, नाली, नीलसस्य, साजक, अग्रधान्य, बर्जरिका, नीलफणा। हिन्दी—बाजरा, बाजरी, लहरा, कासजोनार। बम्बई-बाजरा। मराठी—बाजरी। पञ्जाब-बाजरा। बिहार-गहुमा, जाधारिया। इङ्गलिश—Spikedmillet (स्पाइक्ड मिलेट)। लेटिन—Penisetum Spicatum (पेनिसेटम स्पिकेटम)।

वर्णन—बाजरी का पौधा ज्वार के पौधे की तरह एक दम सीधा बढ़ता है। यह ज्वार के पौधे से कुछ पतला होता है। इस पौधे को पशु घास की तरह खाते हैं। इसके अन्दर एक लम्बा भुट्टा लगता है जिसमें बाजरी के दाने पड़ते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत से बाजरी वायु पैदा करने वाली, हृदय का हितकारी, पौष्टिक, कान्तिवर्धक, अग्निदीपक, गरम, रूखी, पित्त को कुपित करने वाली, स्त्रियों की कामवासना को बढ़ाने वाली तथा देर में पचने वाली होती है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

यूनानी मत—यूनानी मत से यह कब्जियत और खुश्की पैदा करती है। कमर और कामशक्ति को बल देती है। इसका हरीरा (अवलेह) बनाकर पीने से पित्त और वायु की वमन बन्द हो जाती है। इसका सत्त भी वायु और वमन को रोकता है। यह मासिक धर्म और पेशाब को साफ करती है और जलोदर में लाभ पहुंचाती है।

बाजरी का सेंक भी एक महत्वपूर्ण वस्तु है। इसकी पोटली बनाकर सेकने से सर्दी का सिर दर्द दूर हो जाता है। इसके सेक से सूजन भी बिखर जाती है, आमाशय में वायु-इकट्ठी हो जाने की वजह से अगर पेट फूल जाय तो इसकी पोटली का सेक करने से अच्छा हो जाता है। बवासीर के दर्द में भी इसका सेक लाभदायक होता है। अगर बाजरी को भून कर गरम सेक किया जाय तो पेट की मरोड़ी दूर हो जाती है। इसके सेक से अधिक पेशाब आना भी बन्द हो जाता है।

बाजरी को पीसकर नमक मिलाकर टिकिया बनाकर गुदा पर बांधने से कांच निकलना बन्द हो जाता है। यह टिकिया पेचिश में भी फायदा करती है और आंतों के सूखे हुए मल को निकालने में भी मदद करती है।

मुजिर—हमेशा बाजरे के खाने से फेफड़े को नुकसान पहुँचता है, गुर्दे में पथरी पैदा हो जाती है, खुश्क खून पैदा होता है और कभी २ गर्भवती स्त्री के गर्भ गिरने का भी भय रहता है। यह हजम होने में जरा कठिन होती है। जो लोग इसको हमेशा खाते हैं उन्हें चाहिये कि वे हमेशा गरम पानी से नहाते रहें। घी, दूध और मीठी चीजों का खूब सेवन किया करें।

दर्पनाशक—कचरी के वेल की कूंपल।

उपयोग—पागल कुत्ते का विष—बाजरी के सिट्टे में जो फूल लगते हैं उन फूलों को १ माशे की मात्रा में गुड़ में मिलाकर गोली बनाकर खिलाने से १ हफ्ते में पागल कुत्ते का विष नष्ट हो जाता है।

बादियान खताई

नाम—बम्बई—अनीसून, अनसफल। उर्दू—बादियान खताई। तेलगू—अनासपुग्गू। इङ्गलिश—Star-Anise। लेटिन—Illicium Anisatum (इल्लिसियम एनिसेटम)।

वर्णन—यह एक प्रकार का फल होता है जिसका रंग जायफल के समान होता है। हर एक फल में ७-८ परदे होते हैं। जिनमें इसके बीज रहते हैं। इन बीजों का स्वाद सौंफ के समान होता है इसीलिये इसको बादियान खताई कहते हैं क्योंकि सौंफ का फारसी नाम बादियान है। यह औषधि नेपाल और चीन की तरफ से हमारे देश में आती है। हमारे यहां के बहुत से लोग इसको चाय में डालकर पीते हैं क्योंकि इसको चाय में डालने से वह खुशबूदार हो जाती है।

गुण, दोष और प्रभाव—बादियान खताई दीपक और कोष्ठ वायु को शमन धरनेवाला होता है। बड़ी मात्रा में इसको लेने से वमन होती है और मनुष्य बेसुध हो जाता है। जुकाम, सरदी, खांसी, ज्वर अजीर्ण इत्यादि रोगों में यह विशेष रूप से उपयोगी होती है। शाकाहारी लोगों के अजीर्ण और कुपचन रोगों में इसके फलों का चूर्ण गुणकारी होता है। मरोड़ी युक्त आंतों के रोगों में और पेट के फूलने पर यह दिया जाता है। इसके फल में एक प्रकार का सुगंधित तेल पाया जाता है जो भभके के द्वारा प्राप्त होता है

यूनानी मत—यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क होता है। कोई २ इसे गरम और तर बतलाते हैं। इसको चाय में मिलाकर पीने से गरम प्रकृति वालों की खुश्की बढ़ जाती है। सर्द प्रकृति वालों के लिये यह फायदेमंद होता है। यह आमाशय को ताकत देता है, पाचन शक्ति को बढ़ाता है, आँतों के दर्द को दूर करता है, कफ को विखेर देता है और पेशाब अधिक लाता है। मात्रा—३ माशा है।

बारतंग

नाम—हिन्दी—बालतंग, बारतंग। बंगाल—बालतंग, वारतंग,। अंग्रेजी—Ribwort रिबवर्ट। लेटिन—Plantago Lanceolata (प्लेंटेगो लेंसिओलेटा)।

वर्णन—यह वनस्पति पश्चिमी हिमालय में काश्मीर से शिमला तक ५ हजार से आठ हजार फीट की

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

ऊँचाई तक पैदा होती है। यह एक बहु वर्ष जीवी क्षुप होता है। इसके पत्ते रुएंदार, छोटे डंखल वाले, शल्याकृति और कंगूरेदार होते हैं। इसके फूल डंडियों पर आते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—इसके पत्तों का ताजा रस जख्मों के ऊपर लगाया जाता है। इसके सूखे पत्तों का लेप सूजन, फोड़ों और जख्मों पर किया जाता है। इसके बीज शक्कर के साथ विरेचक औषधि की तरह उपयोग में लिये जाते हैं।

यूरोप में इसके पत्ते संकोचक माने जाते हैं और व्रणों पर भरने के लिये इनका लेप किया जाता है। जख्मों को धोने के काम में भी इनका उपयोग होता है। इसकी जड़ का चूर्ण वसंत कालीन ज्वर को दूर करने के उपयोग में लिया जाता है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में सर्द और खुश्क होता है। इसके पत्ते संकोचक होते हैं इसलिये ये खून के बहने को रोकते हैं। पुराने और नये जख्मों को भरने के लिये इससे दूसरी कोई अच्छी वस्तु नहीं है। इसके पत्तों का रस पीने से शरीर के भीतरी अंगों से होने वाला रक्तस्राव बन्द हो जाता है। इसके पत्तों को सांने पर लेप करने से कफ के साथ खून का आना रुक जाता है, ललाट पर इसका लेप करने से नकसीर का खून बन्द हो जाता है। इसकी जड़ के काढ़े से कुल्ले करने से मसूढ़ों से खून का आना रुक जाता है। मतलब यह कि हर प्रकार के रक्तस्राव को रोकने के लिये यह एक अद्‌भुत वस्तु है। इसके ताजे पत्तों को पीसकर उनका रस कान में निचोड़ने से गर्मी से होनेवाला कर्णशूल मिट जाता है। इसका सत यकृत और गुर्दे को ताकत देता है, तृषाशामक है। अपचन को दूर करता है। पेशाब और मासिक धर्म की जलन को रोकता है, खूनी बवासीर में मुफीद है पैत्तिक ज्वर, राजयक्ष्मा और सुजाक में लाभ पहुँचाता है। इसका पंचांग आंतों के जख्म को दूर करता है और पित्ती उछलने में मुफीद है।

हकीम गिलानी का कथन है इसका लेप खराब फोड़ों पर किया जाय तो वे फैलने नहीं पाते अगर जख्म को साफ करके, उसमें नया गोश्त पैदा करने और शान्ति देने की जरूरत हो तो इन पत्तों को बिना धोये उपयोग में लेना चाहिये। अगर किसी के बाल बहुत गिरते हों ती बारतंग के पत्तों का लेप करने से लाभ होता है। इसके पत्तों को कुचल कर, उनका रस निकाल कर कुल्ले करने से गर्मी से पैदा हुई गले की सूजन मिट जाती है। पत्तों का रस क्षय में भी लाभ पहुँचाता है। इसके बीजों की मगज कामोत्तेजक होती है।

मुजिर—इसका अधिक सेवन फेफड़े और तिल्ली को नुकसान पहुँचाता है।

दर्पनाशक—बनफ्सा, शहद और मस्तगी। **मात्रा**—पत्तों के रस की ४ तोले से ६ तोले तक।

बारतंग २ (लहूरिया)

नाम—हिन्दी—बारतंग, लहूरिया। उर्दू—बारतंग। बम्बई—बारतंग। कुमाऊँ—लहूरिया। काश्मीर—गुल, इसफ गुल। पंजाब—इसफगोल, गुल, करठे। इंगलिश—Waybroad वेब्रॉड। लेटिन—Piantago MaJor (प्लेंटेगो मेजर)।

वर्णन—यह इसफगोल के वर्ग की एक वनस्पति होती है। इसका पौधा वर्ष जीवी होता है। इसके पत्ते २.५ से १२.५ सेंटीमीटर तक लम्बे होते हैं। इसके बीज छोटे, लम्बे, गोल, भूरे रंग के और इसफगोल की तरह दिखलाई देते हैं। यह वनस्पति प्रधान रूप से ईरान में उत्पन्न होती है। हिमालय, आसाम, बरमा, कोकण, पश्चिमी घाट और नीलगिरि पर भी यह पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत इसका पौधा संधिवात और आंतों की मरोड़ को दूर करने के लिये उपयोगी है। इसके पत्ते व जड़ संकोचक होते और ज्वर में इनका उपयोग होता है। इसके बीज रक्त अतिसार को दूर करते हैं।

इसके बीज उत्तेजक, गरम और पौष्टिक माने जाते हैं। रक्तातिसार के लिये एक सफल औषधि समझी जाती है। इसफगोल के बदले में इसका उपयोग सफलता पूर्वक किया जा सकता है।

यूरोप में इसके पत्ते ठंडे, धातु परिवर्तक और मूत्रल माने जाते हैं। इसके ताजे पत्तों को बर्र, ततैया इत्यादि जानवरों के डंक पर रगड़ने से शांति मिलती है। जखमों से होने वाले रक्तस्राव को भी ये बन्द करते हैं। अतिसार

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

और बवासीर में भी इनका उपयोग होता है। इंगलैंडके अंदर इन पत्तोंका पुल्टिस बनाकर व्रण और जख्मोंपर बांधते हैं अथवा इसके गरम काढ़ेसे उनपर सेक करते हैं। इसके काढ़े को ठंडा करके मुखक्षत को मिटाने के लिये इसका उपयोग करते हैं। स्वीजर लैंड में इसके पत्ते दंतशूल को रोकने के लिये एक घरेलू औषधि की तरह काम में लिये जाते हैं। इसके पत्तों का काढ़ा आंखों को धोने के लिये भी एक उत्तम वस्तु मानी जाती है। इसमें रक्तस्राव रोधक तत्व भी रहते हैं।

इसके पौधे को दबा कर निकाला हुआ रस ऐसे क्षयमें (Tubcreular Consumption) जिस में कफ के साथ खून गिरता हो बहुत उपयोगी माना जाता है। इसकी जड़ और पत्ते पार्यायिक ज्वरों को दूर करने के लिये बहुत उपयोग में लिये जाते हैं।

बलूचिस्तान में इसके बीज खांसी को दूर करने के लिये बच्चों को दस्त देने के लिये उपयोग में लिये जाते हैं।

चीन और इंडोचीन में इसका पौधा रक्तस्राव रोधक और घाव को भरने वाला माना जाता है। इसके बीज अतिसार और रक्तातिसार की एक उत्तम औषधि माने जाते हैं। ये छाती के रोगों को दूर करने वाले, शांतिदायक माने जाते हैं और बच्चों के लिये भी उपयोग में लिये जाते हैं।

जापान में इसके बीजों का द्रव सत्व हूपिंग कफ को दूर करने के लिये दिया जाता है।

फिलिपाइन में इसके पत्तों को कुचल कर और मक्खन के साथ मिला कर मसूड़ों की सूजन पर लगाते हैं।

दक्षिणी अफ्रिका में वहां के मूल निवासी और वहाँ के बसने वाले यूरोपियन इस पौधे को औषधि की तरह बहुत उपयोग में लेते हैं। झुलू जाति के लोग इसके पत्तों को दबा कर निकाला हुआ रस मुंह और कान की बीमारियों में उपयोग में लेते हैं और इसकी जड़ के काढ़े का एनेमा नवजात शिशु की आँतों को साफ करने के लिये लगाते हैं। वहाँ के यूरोपियन इसके पत्तों का क्षय जनित ग्रंथियों पर लेप करते हैं। इसके पत्तों का ताजा रस वहां पर मलेरिया की एक मशहूर औषधि माना जाता है। ऐसा कहा जाता है कि मलेरिया के आक्रमण को तुरंत रोकता है और फिर नहीं पैदा होने देता।

डॉक्टर देसाई के मत से आमातिसार में इसफगोल की तरह ही इसका उपयोग किया जाता है। जब अतिसार गर्मी से होता है तब इसफगोल दिया जाता है मगर जब वह सरदीसे होता है तब इस वनस्पति का प्रयोग नहीं किया जाता है। इसकी जड़ और पत्तों का काढ़ा ज्वर के अन्दर उपयोगी माना जाता है।

बाग नेला

नाम—हिन्दी—बाग नेला। मद्रास—गोलगंडी। लेटिन—Tradescantia Axillaris (ट्रेडेसकेंटिया एक्सिलेरिस)।

गुण दोष और प्रभाव—कर्नल चोपरा के मत से यह वनस्पति कर्ण प्रदाह या कान की सूजन में लाभदायक है।

बाघ चूटा

नाम—हिन्दी—बाघ चूटा। बंगाल—बाग चूटा। तामील-कारिंदू, मुसक्कालि। तेलगू-इम्बुदी। लेटिन-Pisonia Aculeata (पिसोनिया एक्यूलिएटा)।

वर्णन—यह एक बड़ी जाति की बहुशाखा झाड़ी होती है। इसके पत्ते २-५ से ७-५ सेंटीमीटर तक लम्बे और १-३ से ३-८ सेंटीमीटर तक चौड़े होते हैं। इसके नर और मादा दोनों तरह के फूल लगते हैं। यह वनस्पति बरमा, अंडमान और गंजाम से गोदावरी तक पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इस वनस्पति की छाल और इसके पत्ते जलन युक्त सूजन और जोड़ों के दर्द पर उपयोग में लिये जाते हैं इसके रस में काली मिरच मिला कर बच्चों को उनकी फुफ्फुस सम्बन्धी शिकायतों को दूर करने के लिये देते हैं।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बाराहीकंद

नाम—संस्कृत—वाराही कंद, शूकर कंद, ब्राह्मी कन्द, कुष्ठनाशक, महावीर्य इत्यादि। हिन्दी—बाराही कंद, सूअर कंद, मिरवोली कंद, गेठी। मराठी—डुक्करकंद। गुजराती—वाराही कन्द, वणाबेल, एकल कन्द, नीवेल। लेटिन—Tacca Aspera (टेक्का एस्पेरा)।

वर्णन—यह एक बड़ी जाति की बेल होती है जो पहाड़ों पर पैदा होती है। इसके पत्ते नागरवेल के पत्तों के समान होते हैं। इसकी जड़ में एक कन्द रहता है जिस पर सूअर के बाल के समान बाल रहते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से बाराही कन्द चरपरा, कड़वा, बलकारक, पित्त जनक, रसायन, कामोद्दीपक, वीर्यवर्धक, भूख बढ़ाने वाला, मधुर, गरम, कांतिवर्धक, स्वर को शुद्ध करने वाला, आयुवर्धक तथा कोढ़, प्रमेह, त्रिदोष, कफवात, कृमि और मूत्रकृच्छ्र रोग को नष्ट करता है।

वाराहीकन्द वात, बवासीर और गुल्मरोग को नष्ट करता है।

प्राचीन चर्म रोगों पर इसका शरबत बनाकर देने से लाभ होता है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह धातुवर्धक, कामोद्दीपक, शरीर को मोटा करने वाला, सूजन को बिखेरने वाला, प्रमेह, पेशाबकी जलन और सुजाक में लाभ पहुँचानेवाला होता है। इसके सेवन से भूख बढ़ती है, चेहरे का रंग खिल जाता है और कुष्ठ में लाभ होता है।

बालू रेत

नाम—संस्कृत—सिकता, बालुका, शीतला इत्यादि। हिन्ही—बालू, बालूरेत। मराठी-बालू, रेती। गुजराती-रेती। फारसी—रेत। अंग्रेजी—Sand। लेटिन—Silica (सिलिका)।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेद के मत से बालू रेत, मधुर, शीतल, लेखन, तापनाशक तथा अग्निदग्ध, वृषणव्रण, उरक्षत, श्रम और कुष्ठ को नाश करती है। इसका सेक वात नाशक है।

बारलुमाए

नाम—हिन्दी, यूनानी—बारी लुमाए।

वर्णन—यह एक जाति का घास होता है। इसमें डालियां नहीं होतीं। चारों तरफ पत्ते लगे रहते हैं। इसके पत्तों का रंग सफेद होता है। इसके पत्ते इश्कपेंचा के पत्तों की तरह होते हैं। इन पत्तों के पास छोटे २ तार फूटते हैं। इनमें चने के दाने से कुछ छोटा फल लगता है। इस फल पर छोटा २ रुआं होता है। इसके अन्दर ऐसा चिकना और तरल पदार्थ रहता है कि अगर यह कपड़ों से लग जाय तो चिपक जाता है। यह कब्रों और खड़हरों में पैदा होता है। इसके पास अगर कोई दूसरा पौधा हो तो यह उससे चिपट जाता है। इसके फलों को इकट्ठे करके छाया में सुखा लेते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत—यूनानी मत से यह तीसरे दर्जे में गरम और खुश्क है। यह सूजन को उतारने वाली, बदगोश्त को काटने वाली और बहुत खुश्की पैदा करने वाली होती है। इसके फल को शरीर पर मलने से शरीर में गर्मी पैदा होती है। अगर सर्दी से शरीर में सुस्ती आ गई हो तो इसको जैतून के तेल में मिलाकर मालिश करनी चाहिये। मलेरिया ज्वर में दौरे के शुरुवात में इसको दे देने से ठण्ड का लगना रुक जाता है। शराब के साथ इसका ३॥ माशे की मात्रा में रोज देने से दमे में लाभ होता है। हिचकी मिट जाती है। और तिल्ली की सूजन बिखर जाती है। बच्चा पैदा होने के समय इसको खाने से बच्चा आसानी से पैदा होता है। (ख० अ०)

बाघनख

वर्णन—यह एक औषधि है जो शेर के नाखून की तरह मगर उससे कुछ चौड़ी होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—यह औषधि सांप और शेर के नाखून के विष में लाभदायक है। इसका तिला लिंगेन्द्रिय पर लगाने से लिगेन्द्रिय में बहुत ताकत पैदा होती है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बांब

नाम—हिन्दी, यूनानी—बांब।

वर्णन—यह एक छोटी जाति की वनस्पति है। जहां पानी के झाग जमे हुए हों और जमीन गीली हो उसपर यह फैली हुई रहती है। इसके पत्ते खुरफे के पत्तों की तरह मगर उनसे कुछ कम चौड़े होते हैं। इसके फूल धनिये के फूल के आकार के और रंग में सफेद, लाल, काले और पीले होते हैं। इसके बीज खुरफे के बीज से कुछ छोटे होते हैं। कई लोग इसको जल ब्राह्मी मानते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत-यूनानी मत से वनस्पति जिगर के सुद्दों को खोलती है। बुखार, खुजली, कुष्ठ और श्वेत कुष्ठ में यह लाभदायक है। यह पाचन क्रिया को बढ़ाती है, कंठमाला को दूर करती है। इसका शीत निर्यास ३ तोला, सफेद जीरा ६ माशा और शक्कर १ तोला। इन तीनों चीजों को अच्छी तरह मिलाकर पीवे और पथ्य में बिना नमक की रोटी खावे तो मूत्राशय और लिंगेन्द्रिय का जखम भर जाता है। अगर बाम्ब के पत्ते, जलपीपल के पत्ते और धतूरे के पत्तों को घी में पीसकर शेर के काटे हुए जखम पर लगावें, तो जखम भर जाता है। टूटी हुई हड्डी और चोट पर इसके पत्तों को कूट कर बांधें और अलसी का तेल शक्ति के माफिक पिलावें तो टूटी हुई हड्डी जुड़ जाती है।

बायकुम्भा

नाम—हिन्दी यूनानी—वायकुंभा।

वर्णन—यह एक मध्यम कद का वृक्ष होता है। इसका वृक्ष शहतूत की तरह होता है। पत्ते शहतूत के पत्तों से लम्बे होते हैं। इसके फल बसन्त ऋतु में आते हैं। ये खाकी रंग के सख्त होते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—यह वनस्पति समशीतोष्ण होती है। शरीर के दोषों को बिखेरती है। पेट को मुलायम करती है। आमाशय के दर्द और बवासीर में लाभदायक है। बच्चों के लिये विशेष रूप से हितकारी है। इस लिये इसको जन्मघुटी में मिला देते हैं।

बालपीम

नाम—हिन्दी, यूनानी—बालपीम।

वर्णन—यह एक जाति का पत्थर होता है। यह मुलायम, नाजुक, साफ और सफेद होता है। इसकी तीन जातियां होती हैं। पहली सफेद कुछ सुरखी लिये हुए शहद की तरह दूसरी सफेद दूध की तरह तीसरी खड़िया मिट्टी की तरह। पहली जाति सबसे उत्तम होती है और तीसरी जाति सबसे हलकी होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत—यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में सर्द और खुश्क होता है। वह सूजन को उतारने वाला, संकोचक और रक्तस्राव को रोकने वाला होता है। स्त्रियों के श्वेत प्रदर में यह लाभ पहुंचाता है। इसको पीसकर मंजन करने से दांतों से बहने वाला खून बन्द हो जाता है और दांत मजबूत होते हैं। ३॥ माशे बालपीमको ३॥ माशे मिश्री के साथ कुछ दिनों तक लेने से पुराना प्रमेह आराम हो जाता है। खजायनुल अदविया के लेखक इस योग को अपना अनुभूत बतलाते हैं।

बालखता

नाम—हिन्दी यूनानी—बालखता।

वर्णन—यह एक छोटी जाति की वनस्पति होती है। इसका पौधा जमीन पर फैला हुआ रहता है। इसकी डालियाँ पतली २ और लाल रंग की होती तथा आपस में एक दूसरे से उलझी हुई रहती हैं। इसके फूल-फल लाल और सफेद होते हैं।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत से इसकी जड़ तीसरे दर्जे में गरम और खुश्क तथा इसके दूसरे अङ्ग पहले दर्जे में गरम और खुश्क होते हैं। इसका जोश देकर उस पानी से कुल्ले करने से गले में चिपकी हुई जोंक छूट जाती है। इस काम के लिये यह बेजोड़ है। इसके पत्तों के लेप से चाहे कैसी ही सूजन हो बिखर जाती है। यह वनस्पति विशेषकर बाह्य प्रयोग के ही काम में आती है। भीतर प्रयोग में इसे नहीं लेना चाहिये।

बाल

नाम—हिन्दी—बाल, केश, रोम, इत्यादि।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत से मनुष्य के सिरके जले हुए बाल तीसरे दर्जे में सर्द और खुश्क होते हैं। इन बालों को जलाकर जख्मों पर भुरभुराने से जख्म सूख जाते हैं। इनकी राख को जैतून के तेल के साथ मिलाकर आग से जले हुए स्थान पर लगाने से लाभ होता है। इनकी राख को सिरके में पीसकर मसों में लगाने से मसे दूर हो जाते हैं। इनकी राखकी बत्ती योनि में रखने से श्वेत प्रदर में लाभ होता है। ऐसा कहा जाता है कि आदमी के बालों की धूनी देने से स्त्रियों का गर्भ गिर जाता है।

तालीफ शरीफ में लिखा है कि आदमी के सिरके बालों को जलाकर रोगन गुन में मिलाकर नाक में टपकाने से पागलपन जाता रहता है।

बाकेरीमूल

नाम—संस्कृत—घृतकरञ्ज। हिन्दी—बाकेरी मूल। बम्बई—बाकेरी मूल, बाकेरी चेंभातें बड़ भातें। गुजराती—बाकेरी नुभातू। बंगाल—उमुल कुचि। तेलगू—नूने गच्चा। बरमा—सनलेथे। लेटिन—Caesalpinia Digyna (केसलपिनिया डिगिना)।

वर्णन—बाकेरी मूल की कटकरंज के समान बड़ी और कांटेदार झाड़ी होती है। इसके पत्ते १५ से लेकर २३ सेंटीमिटर तक लम्बे होते हैं। इसके फूलों के लाल तुर्रे आते हैं। इन फूलों के ऊपर फलियां आती हैं। इस वनस्पति की जड़ के नीचे एक गठान रहती है। इस गठान को दक्षिण में बाकेरीचा भाता अथवा गड़ गठान कहते हैं। यह गठान रतालू के समान होती है। कई बार यह गठान बड़े कन्द के रूप में भी हाथ लगती है। मगर यह वस्तु बहुत दुष्प्राप्य होती है। क्योंकि बहुत गहराई पर होने की वजह से इसको निकालना बहुत कठिन होता है। फिर भी जब वर्षा ऋतु में सह्याद्रि पर्वत के अन्दर मोटी २ तड़ें फटती हैं तब यह कंद दिखलाई देता है। इस वनस्पति की विशेष उत्पत्ति बंगाल में और कोकण के अन्दर सह्याद्रि पर्वत में होती है।

यह बहुत दुष्प्राप्य होने की वजह से इसकी जगह नकली चीजें बाजार में बिकती हैं। इसलिये इसको लेते समय हमेशा इस बात का ख्याल रखना चाहिये कि यह कन्द वजन में बहुत ही हलका होता है। हाथ में आते ही ही इसके हलकेपन का अनुभव मनुष्य को होने लगता है और इसका कंद बहुत आसानी से टूट जाता है।

गुण, दोष और प्रभाव—बाकेरी मूल स्तम्भक, व्रणरोपक और बलकारक होती है। इसको अधिक मात्रा में देने से कुछ नशा आता है। भगन्दर, नाड़ीव्रण, नासूर, कारबंकल, वगैरह रोगों में इसका बहुत उपयोग होता है। इन रोगों में यह औषधि पेट में पिलाई जाती है और इसको ठंडे पानी में पीस कर इसका लेप भी किया जाता है।

इसकी जड़ में महत्वपूर्ण संकोचक तत्व रहते हैं। यह राजयक्ष्मा और कंठमाला के रोगमें घी, जीरा, शक्कर और दूध के साथ ४–५ रत्ती की मात्रा में मिलाकर दी जाती है। कंठमाला की गठानों पर इसका लेप भी किया जाता है। मधु प्रमेह के अन्दर भी इसका उपयोग होता है।

बरमा के कुछ भागों में इसकी जड़ को ठंडे पानी में मिला कर ज्वर के अन्दर पिलाई जाती है। इसके अन्दर कुछ नशीला असर भी रहता है।

मूत्र रोगों के ऊपर भी यह औषधि बहुत कामयाब सिद्ध हुई है। मूत्र का कम उतरना, रुक २ कर उतरना, मूत्र उतरते समय जलन होना, लाल, पीला अथवा धातु मिश्रित मूत्र का उतरना, मूत्र में धातु अथवा फास्फोरस

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

का जाना, स्वप्न दोष का होना इत्यादि रोगों में यह वनस्पति बहुत लाभदायक सिद्ध हुई है। इसके अतिरिक्त खूनी बवासीर, नाक और मुंह के मार्ग से होने वाला रक्तस्राव, शरीर की अंतर्दाह, हलका बुखार, सूखी अथवा गीली खुजली, प्रदर, व्रण, नासूर, भगंदर, उपदंश, अस्थिव्रण, कंठमाला और क्षय के समान भयंकर रोगों पर भी यह वस्तु लाभ पहुँचाती है।

इन सब कार्यों के लिये सबेरे और शाम प्रति बार ३ माशे यह वनस्पति लेकर पानी के साथ घिस कर उसमें ५ तोला गायका दूध अथवा ५ तोला ठंढा पानी मिलाकर पिलाना चाहिये। साधारण रोगों में इसका ४० दिन का सेवन पर्याप्त होता है परन्तु क्षय अथवा भगन्दर के समान भयंकर रोगों में इसको ६ महीने से लेकर १ वर्ष तक लगातार उपयोग में लेते रहना चाहिये। जिन रोगों में गर्मी का प्रभाव अधिक हो उनमें इस पेय के अन्दर थोड़ा घी, शक्कर और जीरे का चूर्ण भी मिला देना चाहिये। कण्ठमाला, व्रण, घाव, इत्यादि बाह्य रोगों में इस औषधि को पिलाने के साथ २ इसका बाह्य लेप भी करना चाहिए। (जंगली जड़ी बूटी)

बालुंज

नाम—संस्कृत—वरुणा। हिन्दी—बेगस, वेंस, बेशी, वेद, वेंद, बेंट, बिलसा, लेला। बंगाल—वोइशकी, पांनीजामा। बम्बई—बच, बेशी, वेद, बालुंज। मराठी—बालुंज, बितसा, बोच, बोचा। देहरादून—वेद, जल-माला। अवध—विलस। पंजाब—बेधा, वेद, बचेल, वेइस, मगशेर। सिंध—बेधा, बितसा, रुफेदा। तेलगू—एटीपाला। मध्यप्रान्त—धानी, धनई। लेटिन—Salix Tetoasperma (सेलिक्स टेटासपरमा)।

वर्णन—यह वेदमुश्क के वर्ग का एक वृक्ष होता है इसका झाड़ बहुत सुन्दर और बड़ा होता है। इसकी छाल काली, रेशेदार, चीठी, कड़वी तूरी और सुगंधित होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इस वनस्पति के गुण धर्म साधारणतया वेदमुश्क के ही समान होते हैं। यह ज्वरनाशक होती है।

बारक कांटा

नाम—बंगाल—वारक कांटा। नेपाल—लहारा, पीपल पाती। लेटिन—Pericampylus Incanus (पेरीकेफिलस इनकेनस)।

वर्णन—यह एक पराश्रयी झाड़ी होती है। जो बंगाल की उत्तरी सीमा पर पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसकी जड़ बहुत लम्बे समय से सांप पालने वाले कारबेलियोंमें सर्पविष को दूर करने को औषधि के रूप में प्रसिद्ध है। दूसरे विषैले कीड़ों के डंक पर भी इसकी जड़ का लेप करने से और उसको घोट कर पिलाने से उनका विष निस्तेज हो जाता है। ऐसा कहा जाता है कि किसी भी विष के साथ इस औषधि का रस मिला देने से उसका प्राणघातक धर्म नष्ट हो जाता है।

बालू का शाग

नाम—संस्कृत—बालू बालुका, सुगंधी, कुष्ठगंधी, कपित्थ, गंधत्वक्, एलवालुक, इत्यादि। हिन्दीं—बालुका शाग। बंगाल—बालुक। तामील—मनलि किराई। मद्रास—पेनी किराइ। लेटिन—Gisekia Pharnacoides (जिसेकिया फारनेसोआडिस)।

वर्णन—यह एक तरकारी होती है। इसके क्षुप छोटे और बहुशाखी होते हैं। इसके पत्ते मांसल, अखण्ड अंडाकृति और करीब १ इंच लम्बे होते हैं। इसके बीज काले रंग के होते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—बालू की तरकारी सुगंधित, कृमिनाशक और मृदु विरेचक होती है इसके पंचांग के स्वरस को १ औंस की मात्रा में एक औंस ठण्डे पानी के साथ प्रातःकाल निहारे पेट देने से पेट के अन्दर पड़ने वाले चपटे जाति के जंतु (Taenia) मर जाते हैं। इसका कृमिनाशक धर्म बहुत उत्तम है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

आयुर्वेदिक मत से यह वनस्पति कड़वी, चरपरी पाचक, कृमिनाशक, घाव की अच्छा करने वाली गीली खुजली में लाभदायक होती है और प्यास, नाक की सूजन, ब्रोंकाइटीज, हृदय पीड़ा, गलित कुष्ठ, श्वेत कुष्ठ, मूत्र सम्बन्धी रोग और भूख की कमी को दूर करती है।

बालसन

नाम—हिन्दी—बालसन। बम्बई—हब्बुल बालसन। लेटिन—Balsamodendron Opobalsamum (बालसेमोडेंड्रोन ओपोबालसेमम)।

वर्णन—यह एक छोटा झाड़ीनुमा वृक्ष होता है। इसके पत्ते एकके बाद एक लगे हुए रहते हैं। इसका गोंद काम में आता है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसका फल शान्तिदायक, कफनिस्सारक, उत्तेजक और संकोचक होता है। इसमें एक कड़वा तत्व और उड़नशील तेल पाया जाता है।

बालरक्षा

नाम—पञ्जाब—बालरक्षा। इङ्गलिश—Jersey Cudweed (जेंरसी कुडवीड)। लेटिन—Gnaphalium Luteoalbum (ग्नेफेलियम ल्यूटोएलबम)

वर्णन—यह एक छोटी जाति की वनस्पति होती है। इसके पत्ते बिना डंखल के होते हैं। ये २·५ से लेकर ३·६ सेंटिमीटर तक लम्बे और ·३ से १·३ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं। इसके फूलों के सिरे पीले रंग के होते हैं, यह वनस्पति सारे भारतवर्ष के गरम प्रान्तों में पैदा होती है।

इसके पत्ते संकोचक और घाव को भरने वाले होते हैं। बीमार के घर में इसके पौधे को जलाने से वहां की हवा शुद्ध होती है।

बाइस गूगल

नाम—बम्बई—बाइस गूगल। लेटिन—Balsamodendron Pubescens (बालसमोडेंड्रोन पबसेंस)।

गुण, दोष और प्रभाव—यह वनस्पति देहली में होने वाले विशेष जाति के फोड़ों पर काम में आती है।

बायलो

नाम—उड़िया—बायलो। तामील—पोलेवू। तेलगू—दूदिका, लोलूगा, नोलिका। लेटिन—Pterospermun Heyneanum (टेरोस्परमम हेनेनम)।

वर्णन—यह एक मध्यम कद का वृक्ष होता है इसके पत्ते १० से लेकर १५ सेंटीमीटर तक चौड़े होते हैं। इसके फूल सफेद और सुगन्धित होते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—इसके पत्ते श्वेत प्रदर को दूर करने के लिये उपयोग में लिये जाते हैं। इनका तम्बाकू की तरह धूम्रपान किया जाता है।

बादसाह सालप

नाम—संस्कृत—मुंजन। हिन्दी—बूनानी—बादसाह सालप। अंग्रेजी—Royal Salep रायल सालेप। लेटिन—Allium Macleani (एलियम मेकलेनी)।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

वर्णन—बादसाह सालप के नाम से बाफ कर सुखाया हुआ कंद ईरान से यहां पर आता है। इसका रंग भूरा अथवा कुछ कालापन लिये हुए होता है और इसके ऊपर खड़ी रेखायें रहती हैं। इसका आकार लहसुन के समान रहता है। यह पानी में बहुत देर तक रखने से फूल जाता है। इसका स्वाद कड़वा और तीखा होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—बादसाह सालप, सालम मिश्री के बदले में लिया जाता है। मगर यह स्वाद, धर्म और गुण में सालम मिश्री से हलका होता है।

बारीक भंवरी

नाम—मराठी—बारी भंवरी। गुजराती—गुलाबी गरियों, कंटालोगरियो। कच्छी—पोटियार। कोकण—रावण पुड़िया। अंग्रेजी–Travller's Midnight Lilies। लेटिन–Ipomaea Murieata (इपोमिया मुरीकेटा)।

वर्णन—यह एक बड़ी जाति की वर्षजीवी बेल होती है। इसकी शाखाओं बहुत बारीक और पतले कांटे होते हैं। इसके पत्ते चौड़े, पतले और नोकदार होते हैं। इसके फूल गुलाबी रंग के होते हैं और ये शाम को खिलते हैं। इसके फल गोलाई लिये हुये नोकदार होते हैं। ये ऊपर से चिकने होते हैं और हर एक फल में ४ बीज होते हैं। इसके बीज कालापन लिये हुए रङ्ग के होते हैं। इसके अंगों में एक प्रकार का दूधिया रस भरा हुआ रहता है।

गुण, दोष और प्रभाव—यह वनस्पति रेचक, सूजन को नष्ट करने वाली और पौष्टिक मानी जाती है। इसके पत्ता नारू के ऊपर तथा दूसरे फोड़े फुन्सियों की सूजन पर बांधे जाते हैं। इसके फूल के नीचे के जड़े डण्ठल का का गरीब लोग शाग करते हैं। यह पौष्टिक माना जाता है। इसके बीज रेचक होते हैं।

एचिसकेरीनेटा सांप के विष पर इसकी जड़ मनुष्य के पेशाब में पीस कर पिलाई जाती है। कोंकण के वैद्यों का मत है कि इस सर्प के विष को नष्ट करने के लिये यह एक विश्वसनीय वस्तु है। नारू के ऊपर इसकी जड़ों को पीस कर इसका लेप किया जाता है।

बिखमा

नाम—हिन्दी—बिखमा। लेटिन—Aconitum Palmatum (एकोनिटम पालमेटम)।

वर्णन—यह भी बच्छनाग के वर्ग का एक क्षुप होता है। जो नेपाल, सिकिम और दक्षिणी तिब्बत में १० हजार फीट से १६ हजार फीट की ऊँचाई तक पैदा होता है। इसकी जड़ें गठानदार और फीके उदी रंग की होती हैं। इनकी लम्बाई २ से ४ इञ्च तक की होती है। ये शीशे के समान बहुत भारी वजनदार होती हैं। इन जड़ों का भीतरी हिस्सा सफेद रंग का रहता है।

गुण, दोष और प्रभाव—बिखमा के अन्दर पालमेटीसाइन नामक उपक्षार पाया जाता है। इसके जड़ें विषैली और निर्विषैली दो प्रकार की होती हैं। इसकी निर्विष जड़ का धर्म अतीस के धर्म के समान होता है। यह कटु पौष्टिक, अग्निदीपक, संकोचक और पार्यायिक ज्वरों को दूर करने वाली होती है। दस्त, उल्टी, अतिसार, उदर शूल इत्यादि आंतों से सम्बन्ध रखने वाले रोगों में यह अच्छा लाभ पहुँचाती है।

जङ्गलनी जड़ी बूटी के लेखक लिखते हैं कि नेपाल होकर भूटान जाने के रास्ते पर बिखमा नामक वनस्पति के ४–५ फुट ऊंचाई के पौधे दिखलाई देते हैं। इन पौधों में यह तासीर रहती है कि इनके नजदीक होकर कोई मनुष्य चला जावे तो बेहोश हो जाता है और इसीसे इसकी जड़ें लाकर के लोग उन जड़ों को क्लोरोफार्म की तरह बेहोश करने के लिये सुंघाते हैं और ये जड़ें क्लोरोफार्म का काम बहुत सफलता के साथ करती हैं। क्लोरोफार्म से पैदा की हुई बेहोशी अगर कभी खतरनाक होती है तो उसको दूर करने के लिये डाक्टरों को अनेक उपाय करने पड़ते हैं। मगर इस वनस्पति से पैदा की हुई बेहोशी को दूर करने के लिये विशेष खटपट नहीं करनी पड़ती। क्योंकि प्रकृति के उसी भंडार में जहां यह बिखमा नामक बनस्पति पैदा होती है। वहीं विखमा के पौध के नजदीक ही एक निर्विषी नामक वनस्पति भी पैदा होती है जिसकी जड़ मनुष्य के नाक के आगे रखते ही मनुष्य की बेहोशी दूर होकर उसको होश आ जाता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बिसफेज

नाम—बम्बई—बिसफेज। लेटिन—Polypodium Vulgare (पोलोपोडियम व्हलगेर)।

वर्णन—यह एक छोटी जाति की वनस्पति होती है। इसके पत्ते कंगूरेदार और जड़ें बहुत होती हैं। ताजी हालत में इसकी जड़ का रंग हरा और सूखने पर भूरा हो जाता है। इसकी जड़ में कुछ सुरखी की झलक भी होती है। इसकी जड़की हर एक गांठ में बारीक २ रेशे लगे हुए रहते हैं। जिससे यह कन खजूरे की तरह दिखलाई देती है। अच्छी जड़ वह होती है जो मोटी और ताजी हो। ऊपर से सुर्ख और पीलापन लिये हुए हो। भीतर से पिस्ते के मगज की तरह हरी निकले। चबाने से उसका स्वाद कुछ, कड़वा और मीठी मालूम हो और जबान में में खिचावट पैदा करे।

गुण, दोष और प्रभाव—बिसफेज की जड़ कुछ कड़वी और कुछ कसैली होती है। इसमें कफ निस्सारक, वेदनानाशक और शोथघ्न ये तीन धर्म रहते हैं। इसका कफनिस्सारक धर्म अधिक जोरदार नहीं होता तो भी यह कफ और पित्त को बाहर निकाल देती है। इसमें एक दोष यह रहता है कि इसको अधिक दिन तक बड़ी मात्रा में सेवन करने से आमाशय में दाह पैदा हो जाता है।

पित्त प्रकोप में विसफेजको पित्तपापड़ा और हरड़ के साथ देते हैं। सूजी हुई संधियों पर और पीड़ा युक्त गठानों पर इसका लेप करने से लाभ होता है। इससे त्वचा में सुन्नता पैदा होती है।

यूनानी मत—यूनानी मतसे यह दूसरे दर्जे में गरम और तीसरे दर्जे में खुश्क होती है। यह हृदय को शक्ति देती है और प्रसन्नता पैदा करती है। दिल और दिमाग की खराबी को दस्त की राह निकाल देती है। इसको मिश्रीके साथ लेनेसे यह वायु और कफ तथा रक्तके दोषोंको दस्त की तरफ निकाल देती है। आमाशय के जमे हुए सुद्दों को बिखेर देती हैं। कुष्ठ और रक्त विकार में बहुत लाभ पहुँचाती है। माली खोलिया और गठिया में भी यह लाभदायक है। इसको अनीसून और मुलेठी के साथ जोश दे कर पीने से खांसी और दमे में लाभ होता है। शहद के पानी के साथ इसका जोशांदा (काढ़ा) बना कर पीने से कॉलिक उदर शूल मिटता है।

इसको अमलतास या तुरंजबीन के साथ लेने से बवासीर, आमाशय का पुराना दर्द और मृगी में लाभ होता है। ताजा विसफेज को ऊपर से छीलकर पानी और नमक में एक रात भिंगो कर फिर धोकर, पीसकर शहद में मिला कर अवलेह तैयार करें। इस अवलेह को प्रतिदिन चाटने से फोड़े और फुन्सियां दूर हो जाती हैं।

मुजिर—इसका अधिक मात्रा में सेवन मतली को पैदा करता है, सीने और गुर्दे को नुकसान पहुँचाता है और आमाशय में जलन पैदा करता है।

दर्पनाशक—हंसराज, गुलाब के फूल और छीपाहर्ड।

मात्रा—इसकी मात्रा के सम्बन्ध में मतभेद हैं। डाक्टर देसाई ने इसकी मात्रा ५ रत्ती से १० रत्ती तक बतलाई है मगर खजाइनुल अदविया में इसकी मात्रा ४॥ माशे से १० माशे तक बतलाई है जो कि बहुत अधिक मालूम होती है। जहां तक हो इसको कम मात्रा में लेना ही विशेष अच्छा है। क्योंकि इसकी प्रतिक्रियायें शरीर में खराब होती हैं।

बिल्ली लोटन

नाम—हिन्दी, यूनानी-बिल्ली लोटन। मराठी-कालाबल। अजमेर-बिल्ली लोटन, बेबरंग खताई, बदरंग बोया। नेपाल—निस्बो। लेटिन--Valeriana Officinalis (बेलेरिना आफिसीनेलिस)।

वर्णन—यह एक जाति का घास होता है जो खुशबूदार, हरा और कुछ कड़वा होता है। इस घास की खुशबू पर बिल्ली बहुत मोहित होती है और उसको देखते ही खुशी के मारे उस पर लेटती है। और बहुत तमाशे करती है। यह जटामासी और तगर के वर्ग की ही एक औषधि है।

यूनानी ग्रन्थकारों के मतानुसार बिल्ली लोटनकी दो जातियां होती हैं। एक दहोरी जाति जिसके पत्ते छोटे, मुलायम पतले और लम्बे होते हैं। इनके किनारे उभरे हुए रहते हैं। इसका फूल नीला और कुछ सुरखी लिये हुये

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

होता है जहां यह पैदा होती है वहां के लोग इसकी शाग बनाकर खाते हैं। इसके बीज अलसी के बीजों की तरह मगर कुछ छोटे होते हैं। इनका रंग खाकी होता है।

दूसरी बड़ी जाति होती है। इसकी खुशबू पहली जाति की खुशबू से कुछ तेज होती है। इसके पत्ते लम्बे नहीं बल्कि गोल होते हैं। इनका रंग हलका हरा होता है। इनको मलने से बिजौरे नीबू के समान खुशबू आती है।

देशी वैद्यों के मतानुसार इसकी सफेद, काली और पीली तीन जातियां होती हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत से यह पहले दर्जे में गरम और खुश्क होती है। यह वायु को नष्ट करती है और खून को साफ करती है। स्मरण शक्ति, कामशक्ति और आमाशय की शक्ति को बढ़ाती है, मस्तिष्क के सुद्दों को खोलती है। कफ की बीमारियों में लाभदायक है। सांस की तंगी को दूर करती है। बेहोशी, मरोड़, हिचकी और गुर्दे की बीमारी में मुफीद है। पागलपन, दहशत और बहम को दूर करती है। इसके काढ़े से कुल्ले करने से दांतों की बीमारियां आराम होती हैं।

जिन फोड़ों में पीब भरी हुई हो उन पर इसका लेप लाभ पहुँचाता है। वायु के कोप से जो खुजली हो जाती है उसमें यह लाभ पहुँचाती है। आँख के आस पास की सूजन भी इसके लगाने से दूर होती है। इसका लेप जोड़ों के दर्द को शान्त करता है। इसके सूंघने से स्मरण शक्ति तेज होती है। मस्तिष्क को शक्ति मिलती है और मस्तिष्क की खराबी दूर हो जाती है। इसके पत्तों को कूट कर शहद में मिला कर चाटने से सांस की तंगी और खांसी आराम होती है। स्त्रियों की छाती में अगर दूध जम जावे तो इसके लेप से बिखर जाता है। यकृत और पाचन क्रिया को यह शक्ति देती है तथा हिचकी और मतली को रोकती है। इसके खाने से खुशबूदार डकारें आती हैं। दिल की कमजोरी से अगर नींद नहीं आती हो तो इसके इस्तेमाल से नींद आना शुरू हो जाती है। इसके खाने से वायु के सब दोष दस्तों की तरफ से निकल जाते हैं। इसके हरे पत्तों का रस १०॥ माशे लेकर उसमें ३॥ माशे नतरून मिलाकर खाने से हिस्टीरिया, आंतों का जखम, मरोड़ और बवासीर में आराम होता है। इसकी ताजी जड़ को गर्भाशय में रखने से गर्भ गिर जाता है।

इसके बीजों को ४॥ माशे की मात्रा में लेने से मलेरिया बुखार में आराम होता है। इसके १३॥ माशे पत्तों को पीसकर शराब के साथ लेने से पागल कुत्ते और बिच्छू के जहर में लाभ होता है।

देशी चिकित्सकों के मतानुसार इसकी सफेद जाति तेज, गरम और खुश्क होती है। भूख पैदा करती है पाचन क्रिया व प्राणवायु को शक्ति देती है और इसकी पीली जाति मीठी, कड़वी फोड़ों को आराम करने वाली और सूजन को उतारने वाली होती है। यह कफ और वायु की बीमारियों को नष्ट करती है। कष्टप्रसूता स्त्री को बचा होने में मदद करती है। पीलिया, विष विकार, भूख की कमी, पेशाब की कमी, कामशक्ति की कमजोरी, रक्त के उपद्रव, दमा, खाँसी, दिल की कमजोरी, कुष्ठ, वमन, पेट की कृमि तथा दाद और खुजली में यह लाभदायक होती है।

कर्नल कीर्तिकर और मेजर बी० डी० वासूके मतानुसार इसकी जड़ उत्तेजक और आक्षेप निवारक होती है। यह आक्षेप-निवारक औषधि की तरह हिस्टीरिया, मृगी, हैजा और दूसरी विकृतियों में लाभ पहुँचाती है और एक उत्तेजक औषधि की तरह यह ज्वर की बढ़ी हुई स्थिति में जब शरीर में बहुत दुर्बलता पैदा हो जाती है और ताप-क्रम गिरने लगता है तब उपयोग में ली जाती है।

आक्षेप-निवारक औषधि की दृष्टि से यह हींग की अपेक्षा बहुत कमजोर होती है। अधिक मात्रा में इसको ले लेने पर यह सिर दर्द, मानसिक उत्तेजना और ज्ञानतंतुओं की क्रिया को अव्यवस्थित कर देती है। पार्यायिक ज्वरों में इसको सिनकोना की छाल अथवा दूसरी कटु पौष्टिक वस्तुओं के साथ लेने से लाभ होता है। इसके काढ़े से स्नान करने से तीव्र संधिवात में बहुत लाभ होता है।

मुजिर—इसको अधिक मात्रा में खाने और सूंघने से सिर दर्द पैदा होता है। पेशाब में जलन होती है। मस्तिष्क में अव्यवस्था पैदा हो जाती है और गरम प्रकृति वालों के यकृत को हानि पहुँचाती है।

दर्पनाशक—बबूल का गोंद, बादरंज बोया और धनियां।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

प्रतिनिधि—माल तुलसी या फरंज मुश्क।

मात्रा—चूर्ण की ३ माशे से ७ माशे तक, बीजों की ४ माशे से १ तोले तक।

बादरंज बोया

नाम—पंजाब—बिल्ली लोटन, बादरंज बोया, बेबरंग खताई। नेपाल—नियासबो। लेटिन—Nepeta Ruderalis (नेपेटा रुडेरेलिस)।

वर्णन—यह एक छोटी जाति की वर्षजीवी वनस्पति होती है। इसकी ऊंचाई १५ से लेकर ४५ सेंटीमीटर तक होती है। इसके पत्ते १·३ से लेकर ५ सेंटीमीटर तक लम्बे और १ से लेकर ३·८ सेंटीमीटर तक चौड़े होते हैं। यह वनस्पति पंजाब, मध्यभारत और दक्षिण में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—यह वनस्पति हृदय के लिये एक पौष्टिक वस्तु है और सब प्रकार के ज्वरों में इसका बहुत उपयोग होता है, इसके काढ़े से कुल्ले करने से गले के छाले मिटते हैं। नेपाल में यह वनस्पति सुजाक को दूर करने के लिये पिलाई जाती है।

बिदारी कंद

नाम—संस्कृत—भूकुष्मांडी, भूमिकुष्मांड, गजवाजिप्रिया, वाजेष्टां, गंधफल, इक्षुगंध, खण्डपलाश, क्षीरवल्ली पयस्विनी इत्यादि। हिन्दी—बिदारी कंद, बिलाइकंद, दूध बिदारी। बंगाल—शिमिय, बत्राजि। पंजाब—सुरल। गुजराती—खाकरवेल, बिदारी, बिदारीकंद। मराठी—बाघरा, भारड़ा, पिठानां। मारवाड़—घोड़ावेल। पंजाब—बादर, सुरल। तेलगू—दारीगुमोदी। लेटिन—Pueraria Tuberosa (पुरेरिया ट्यूबरोसा)।

वर्णन—वह एक बड़ी जाति की बेल होती है। इसके पत्ते बड़े २ लोबिया के पत्तों की तरह होते हैं और उसकी जड़ में १ बड़ा कंद होता है। जो सूरण कंद के बराबर होता है। इस कंद को काट २ कर टुकड़े करके सुखाये जाते हैं और वे ही टुकड़े बिदारीकंद के नाम से बाजार में बिकते हैं।

इण्डियन मेडिसनल प्लांट्स नामक ग्रंथ में इस बनस्पति का वर्णन दो नामों से किया गया है। दोनों जगह संस्कृत के नाम प्रायः वे ही हैं। मगर लेटिन नाम एक जगह पर पुरेरिया ट्युबरोसा और दूसरी जगह पर इपोमिया डिजिटेटा दिया गया है। दोनों वनस्पति के चित्र भी अलग २ दिये गये हैं। इससे मालूम होता है कि इस वनस्पति की भिन्न वर्ग की दो जातियाँ होती हैं जिनको संस्कृत ग्रन्थकारों ने एक ही मान कर लिखा है।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत से इसके फूल ठण्डे और कामोद्दीपक होते हैं। इसका कन्द मीठा, तेलयुक्त, ठंढा, कामोद्दीपक, पौष्टिक, मूत्रल, रसायन और कंठ को सुधारने वाला होता है। यह कुष्ठ, पित्त-विकार, शरीर को जलन, रक्त सम्बन्धी रोग, वात, अनैच्छिक धातुस्राव और मंदाग्नि को दूर करता है।

इसकी जड़ ज्वर के अन्दर तृषाशामक और शांतिदायक वस्तु की तरह दी जाती है। इसकी जड़ को कुचल कर संधियों की सूजन दूर करने के लिये बांधी जाती है।

मुंडा जाति के लोग इसकी जड़ को ज्वर और संधिवात में शरीर के ऊपर रगड़ते हैं।

नेपाल में यह वामक और पौष्टिक वस्तु की तरह उपयोग में ली जाती है और वहां पर यह औषधि स्तनों में दूध बढ़ाने वाली भी मानी जाती है।

बिदारीकन्द नं० २ (बिलाईकन्द)

नाम—संस्कृत—भूकुष्मांड, भूमिकुष्मांड, गंधफल इत्यादि। हिन्दी—बिदारीकंद, बिलाई कंद। बंगाल—बिलाईकन्द, भुइकुमड़ा, भूमिकुमड़ा। बांबे—भुइकोला। मराठी—भुइकोला, बिदारीदन्द। तामील—नीलाप्पुचेनी, पलमौदिक। तेलगू—भूचक्रगदा। उदू—बलाईकन्द। इङ्गलिश—Giant Potato। लेटिन—Ipomaea Digitata (इपोमिया डिजिटेटा)।

वर्णन—बिदारीकंद की बड़ी बेल हिन्दुस्तान में सभी जगह पैदा होती है। इसके फूल बैगनी, घंटाकृति और पत्ते कंगूरेदार होते हैं। जमीन के अन्दर इसका बड़ा कंद रहता है जो कालापन लिये हुए भूरे रंग का और ऊबड़खाबड़

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

होता है। इस कन्द को काटने से इसके भीतर से सफेद रंग का रस निकलता है। इसके छोटे टुकड़े करके सुखाकर बिदारीकन्द के नाम से बेचे जाते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत से बिदारीकंद, मीठा, शीतल, वीर्यवर्धक, स्निग्ध, पौष्टिक, धातुवर्धक, बलकारक, कफजनक, दुग्धवर्धक, भारी, रसायन, मूत्रल, स्वर को शुद्ध करने वाला, रूखा, गर्भस्थापक, स्वादिष्ट तथा पित्त, वात, रुधिर-विकार, दाह और वमन को दूर करता है। इसके फूल वीर्यवर्धक, शीतल, रस और पाक में मधुर, कफकारक, वातवर्धक, भारी और पित्तनाशक होते हैं।

इसकी दूसरी जाति दूधबिदारी मधुर, अम्ल, कसैली, वीर्यवर्धक, कामोद्दीपक, दूध बढ़ाने वाली, चरपरी, रसायन, बलकारक, शीतल, मूत्रल, कफकारक, स्निग्ध, कांतिवर्धक, भारी, स्वर-शोधक तथा पित्तरोग, रुधिर विकार, पित्तशूल, वात, दाह और प्रमेह को दूर करने वाली होती है।

क्षीरविदारी की नालरहित और नालयुक्त दो जातियां होती हैं। इसकी नालरहित जाति में रोगनिवारक शक्ति (Immunity) विशेष रूप से रहती है और इसकी नालयुक्त जाति में जीवनी शक्ति (Vitality) बढ़ाने की ताकत विशेष होती है।

बिदारीकंद में पौष्टिक, आनुलोमिक, पित्त-निस्सारक, दुग्धवर्धक और स्नेहन इतने धर्म रहते हैं। इससे भूख लगती है, अन्न पचता है, दस्त साफ होता है और कान्ति तथा वजन बढ़ता है। कॉडलिवर ऑइल के समान अपवित्र वस्तुओं से शरीर में जो लाभ होते हैं वे ही बल्कि उनसे भी ज्यादा उत्तम इस वनस्पति से होते हैं। इसको लेते समय घृणा पैदा नहीं होती और न शरीर में किसी प्रकार की दुर्गन्ध आती है। प्रौढ़ मनुष्यों के लिये यह औषधि विशेष रूप से उपयोगी है।

शारीरिक अथवा मानसिक थकावट की वजह से जब वजन की कमी हो जाती है तब इस औषधि को दी जाती है। इससे जितनी जल्दी वजन बढ़ता है उतना दूसरी किसी भी औषधि से नहीं बढ़ता। यकृत् और प्लीहा की वृद्धि में इसका कच्चा चूर्ण दिया जाता है। जिससे पित्त का संचालन ठीक तौर से होने लगता है और दस्त साफ होता है। दूध बढाने के लिये इसको द्राक्षासव के साथ देते हैं।

रासायनिक विश्लेषण—बिदारीकंद के कन्द में आटा बहुत अधिक प्रमाण में रहता है। इसमें १० प्रतिशत शक्कर और बहुत थोड़ी मात्रा में जेलप के अन्दर पाई जाने वाली राल के समान मृदु विरेचक राल रहती है।

सुश्रुत के मतानुसार इसकी जड़ दूसरी औषधियों के साथ में साँप और बिच्छू के विष को दूर करने के उपयोग में ली जाती है। मगर वेस और महश्कर के मतानुसार सांप और विच्छू के विष पर यह निरुपयोगी है।

यूनानी मत—यूनानी मत से विदारीकंद तर और गरम होता है। कोई २ इसे सर्द और तर भी मानते हैं। इसके कन्द का चूर्ण भारी, कामोत्तेजक और पेशाब बढ़ाने वाला होता है। यह खून को साफ करता है और स्त्रियों के दूध को बढ़ाता है।

मात्रा—पौष्टिक और रसायन कार्य के लिये इसके चूर्ण को ३ माशे से ६ माशे तक की मात्रा में घी में मिलाकर उस घी को दूध में डाल कर उस दूध को औटाकर मिश्री मिला कर पीना चाहिये।

उपयोग—**दूध-वृद्धि**—विदारीकन्द के चूर्ण की फक्की दूधके साथ लेने से स्त्रियों का दूध बढ़ता है।

बच्चों की निर्बलता—१ माशे बिदारीकन्द के चूर्ण को शहद के साथ चटाने से बच्चों की निर्बलता मिटती है और इसी चूर्ण को पीपल के चूर्ण तथा शहद के साथ चटाने से बच्चों की पाचन-शक्ति बढ़ती है।

मासिक धर्म की अधिकता—बिदारीकन्द के चूर्ण को घी और शक्कर के साथ चटाने से मासिक धर्म में रज का अधिक जाना बन्द हो जाता है।

तिल्ली और यकृत की वृद्धि—विंदारीकन्द के चूर्ण की फक्की लेने से तिल्ली और यकृत की वृद्धि मिटती है।

पित्तशूल—इसके रस में शहद मिला कर पीने से पित्तशूल मिटता है।

भस्मक रोग—बिदारीकन्द के रस में दूध डालकर औटा कर पिलाने से या इसके रस में भैंस का घी मिला कर पिलाने से भस्मक रोग मिटता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बनावटें—महारसायन योग—विदारीकन्द को चूर्ण करके उसको विदारीकन्द के स्वरस से २१ बार तर कर के सुखा लेना चाहिये। इस चूर्ण में से ६ माशे चूर्ण प्रतिदिन गाय के दूध और मिश्री के साथ लेने से मनुष्य का बल, जीवनी शक्ति, रोगनिबारक शक्ति, ओज, कान्ति और काम शक्ति बहुत बढ़ती है और अनेकों स्त्रियों से रमण करने की सामर्थ्य मनुष्य में पैदा हो जाती है। यह आयुर्वेद का एक महारसायन योग है।

बिधायरा

नाम—संस्कृत—अजंत्री, अवेधी, छागला, छागलंत्रिका, दीर्घवल्लरी, दीर्घबालुका, जंतुका, भृंगा, कोटर-पुष्पी, रूक्षगंध, वृद्धदारुक, इत्यादि। हिन्दी—विधारा, काला विधारा। गुजराती—वरधारो। मराठी—वरधारा, बाकेरी। बंगाल—विधारका, वितरका। बम्बई—वरधारा। तेलगू—चन्द्रपुड़ी। लेटिन—Rourea Santaloides (रोरिया सेंटेलाइडस)।

वर्णन—यह एक दूसरे वृक्षों पर चढ़ने वाली झाड़ीनुमा वेल होती है। कोकण और त्रावणकोर में यह बहुत पैदा होती है। इसके पत्ते चन्दन के पत्तों की तरह होते हैं। इसके फूल छोटे, सफेद और सुगन्धित होते हैं। इसके बीज एक सेंटीमीटर लम्बे होते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से विधारा चरपरा, कड़वा कसैला, रसायन, गरम, मधुर, बुद्धिवर्धक, स्वर को शुद्ध करनेवाला, अग्निदीपक, कांतिवर्धक, पौष्टिक, कामोद्दीपक, रुचिकारक, हलका तथा उपदंश, पांडु रोग, क्षय, खांसी, प्रमेह, वातरक्त, आमवात, सूजन और कफ को दूर करने वाला होता है।

डाक्टर देसाई का कथन है कि इस वनस्पति की जड़ें और इसकी डालियों के टुकड़े दारुहल्दी के नाम से बिकते हैं मगर यह वनस्पति असली दारुहल्दी या असली विधायरा नहीं है। उनकेमत से समुद्र शोष (Argyreia Speciosa) ही असल विधायरा है। समुद्र शोष का वर्णन हम आगे के भागों में यथास्थान करेंगे।

इसकी जड़ एक कटु पौष्टिक वस्तु की तरह उपयोग में ली जाती है। यह संधिवात, स्कर्वी मधु प्रमेह और फुफ्फुस-सम्बन्धी शिकायतो में उपयोगी होती है। उपदंश रोग में यह एक धातु-परिवर्तक और पौष्टिक वस्तु की बतौर काम में ली जाती है। व्रण, फोड़े, फुन्सी और दूसरे चर्म रोगों पर बाह्य उपचार के काम में ली जाती है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह गरम और खुश्क होता है। कफ को दस्तों की राह से निकालता है। काम शक्ति को बढ़ाता है। वायु, कफ और रक्त के दोष को मिटाता है। कब्ज को दूर करता है। यह सुजाक और सूजन में मुफीद है। गठिया और गृध्रसी बात में लाभ पहुँचाता है। ३॥ माशा में इसको देने से जलोदर में फायदा होता है। विधायरे में चेप बहुत होता है इस चेप का सेवन करने से खून साफ होता है। शरीर संगठन की खराबी को दूर करने के लिये इसके चूर्ण को दूध के साथ लेते हैं।

उपयोग—मूत्रकृच्छ्र—इसके पत्तों को पानी में भिगोने से पानी गाढ़ा हो जाता है। इस पानी में मिश्री डाल कर पिलाने से मूत्रकृच्छ्र मिटता है।

गठिया—शतावरी के साथ विधायरे का क्काथ बनाकर पिलाने से गठिया मिटती है।

उपदंश—त्रिफला और विधायरे का क्काथ बना कर पिलाने से उपदंश में लाभ होता है।

श्लीपद—इसके चूर्ण को कांजी के साथ पीने से श्लीपद में लाभ होता है।

स्मरण शक्ति की कमजोरी—विधायरे की जड़ के चूर्ण को शतावरी के स्वरस की ७ भावना देकर उसमें से १ तोला चूर्ण प्रतिदिन घी के साथ चाटने से बुद्धि और स्मरण-शक्ति बढ़ती है।

बिजिदक

नाम—अफगानिस्तान—बिजिदक। अंग्रेजी—Hairy Cress। लेटिन—Lepidium Draba (लेपिडि-यम ड्राबा)।

वर्णन—इस वनस्पति की खेती पंजाब में होती है। यह एक जाति का घास होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसके बीज पेट के अन्दर रहने वाली गेस को निकालने के काम में लिये जाते हैं। थे एक बार में ७ या ८ की मात्रा में दिये जाते हैं।

यूरोप में इसका पौधा रक्तातिसार को नाश करने के काम में लिया जाता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बिलिंबी

नाम—संस्कृत—कर्कटी वृक्ष। हिन्दी—बिलिंबी, बेलंबू। दक्षिण—वेलंबू। बंगाल—बिलंबी। गुजराती—बिलंबू। तेलगू—बिली बिली, बिलु वी, गोमारकू। तामील—पिलिंबी। इंगलिश—Bilimbi। लेटिन—Averrhoa Bilimbi (एव्हेराहा बिलिंबी)।

वर्णन—यह एक छोटी जाति का वृक्ष होता है जो विशेष रूप से मलाया में पैदा होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—यह वनस्पति-संकोचक, अग्निवर्धक और ज्वरनाशक होती है। इसके फलों का शरबत प्यास को बुझाने वाला, ज्वर के प्रकोप को कम करने वाला और भीतरी रक्तस्राव तथा बवासीर के मामूली केसों में लाभ पहुँचाने वाला होता है। इसके फलों की कढ़ी बवासीर और स्कर्वी रोग में एक उत्तम पथ्य होती है।

फ्रेंच गायना में इसके फलों का शरबत या इसके फलों का काढ़ा यकृत के प्रदाह तथा शरीर के किसी दूसरे प्रदाह को दूर करने के काम में लिया जाता है। यह ज्वर, अतिसार और पित्तज उदरशूल में भी लाभदायक होता है।

बिजाई

नाम—मलाया—बिजाई। लेटिन—Mangifera Caesia (मेंगिफेरा केसिया।)।

वर्णन—यह एक आम की जाति के वर्ग का मध्यम कद का वृक्ष होता है। इसकी ऊंचाई १८ मीटर तक होती है। यह वृक्ष मलाया प्रायद्वीप में विशेष रूप से पैदा होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसका रस त्वचा के ऊपर लगाने से तीव्र प्रदाह पैदा करता है और सूजन पैदा कर देता है। इसकी जड़ का निर्यास रेगास (Regas) नामक प्राणी के विष को नष्ट करने के लिए दिया जाता है।

बिशोनी

नाम—संस्कृत—कंथालू, कंथापुङ्खा, कंथापुंखिका। राजपूताना—बिशोनी। लेटिन—Tephrosia Petrosa (टेफ्रोसिया पेट्रोसा) T. Spinosa (टेफ्रोसिया स्पिनोसा)।

वर्णन—यह सरपुंखे की जाति की एक छोटी वनस्पति होती है। यह राजपूताना, जोधपुर और जैसलमेर में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसका पौधा गरम, तीक्ष्ण स्वादवाला कृमिनाशक और पीड़ा दूर करने वाला होता है। इसमें सरपुंखे के समान ही सब तत्त्व रहते हैं। मगर यह उससे कुछ कमजोर होता है।

इसके पत्तों को पानी में उबालकर खाने से उपदंश की बीमारी में लाभ होता है।

बिरमाव

नाम—मराठी—बिरमोव। लेटिन—Flemingia Tuberosa (फ्लेमिंगिया टयुबरोसा)

वर्णन—यह एक छोटी जाति का क्षुप होता है बरसात में कोकण के अन्दर बहुत पैदा होता है। इसके पत्ते तीन २ के गुच्छों में लगते हैं। इसके फूल किरमची रंग के होते हैं। इसकी हर एक फली में एक गोल और काला बीज रहता है। इसकी जड़ में एक कन्द रहता है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसका कंद मीठा और संकोचक होता है। यह रक्तातिसार और श्वेत प्रदर में द्राक्षासव के साथ देने से लाभ पहुँचाता है।

इसके तरुण पत्ते ज़हरीले होते हैं। इनको पीस कर मस्तकशूल में ललाट पर लेप करते हैं। इसके फूलों के बहार के समय में मधुमक्खियां जो शहद इकट्ठा करती हैं वह सिक्किम में जहरीला माना जाता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बनावटें—महारसायन योग—विदारीकन्द को चूर्ण करके उसको विदारीकन्द के स्वरस से २१ बार तर कर के सुखा लेना चाहिये। इस चूर्ण में से ६ माशे चूर्ण प्रतिदिन गाय के दूध और मिश्री के साथ लेने से मनुष्य का बल, जीवनी शक्ति, रोगनिवारक शक्ति, ओज, कान्ति और काम शक्ति बहुत बढ़ती है और अनेकों स्त्रियों से रमण करने की सामर्थ्य मनुष्य में पैदा हो जाती है। यह आयुर्वेद का एक महारसायन योग है।

बिधायरा

नाम—संस्कृत—अजंत्री, अवेधी, छागला, छागलंत्रिका, दीर्घवल्लरी, दीर्घबालुका, जंतुका, भृंगा, कोटरपुष्पी, रूक्षगंध, वृद्धदारुक, इत्यादि। हिन्दी—विधारा, काला विधारा। गुजराती—वरधारो। मराठी—वरधारा, बाकेरी। बंगाल—विधारका, वितरका। बम्बई—वरधारा। तेलगू—चन्द्रपुड़ी। लेटिन—Rourea Santaloides (रोरिया सेंटेलाइडस)।

वर्णन—यह एक दूसरे वृक्षों पर चढ़ने वाली झाड़ीनुमा वेल होती है। कोकण और त्रावणकोर में यह बहुत पैदा होती है। इसके पत्ते चन्दन के पत्तों की तरह होते हैं। इसके फूल छोटे, सफेद और सुगन्धित होते हैं। इसके बीज एक सेंटीमीटर लम्बे होते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से विधारा चरपरा, कड़वा कसैला, रसायन, गरम, मधुर, बुद्धिवर्धक, स्वर को शुद्ध करनेवाला, अग्निदीपक, कांतिवर्धक, पौष्टिक, कामोद्दीपक, रुचिकारक, हलका तथा उपदंश, पांडु रोग, क्षय, खांसी, प्रमेह, वातरक्त, आमवात, सूजन और कफ को दूर करने वाला होता है।

डाक्टर देसाई का कथन है कि इस वनस्पति की जड़ें और इसकी डालियों के टुकड़े दारुहल्दी के नाम से बिकते हैं मगर यह वनस्पति असली दारुहल्दी या असली विधायरा नहीं है। उनकेमत से समुद्र शोष (Argyreia Speciosa) ही असल विधायरा है। समुद्र शोष का वर्णन हम आगे के भागों में यथास्थान करेंगे।

इसकी जड़ एक कटु पौष्टिक वस्तु की तरह उपयोग में ली जाती है। यह संधिवात, स्कर्वी मधु प्रमेह और फुफ्फुस-सम्बन्धी शिकायतो में उपयोगी होती है। उपदंश रोग में यह एक धातु-परिवर्तक और पौष्टिक वस्तु की बतौर काम में ली जाती है। व्रण, फोड़े, फुन्सी और दूसरे चर्म रोगों पर बाह्य उपचार के काम में ली जाती है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह गरम और खुश्क होता है। कफ को दस्तों की राह से निकालता है। काम शक्ति को बढ़ाता है। वायु, कफ और रक्त के दोष को मिटाता है। कब्ज को दूर करता है। यह सुजाक और सूजन में मुफीद है। गठिया और गृध्रसी बात में लाभ पहुँचाता है। ३॥ माशा में इसको देने से जलोदर में फायदा होता है। विधायरे में चेप बहुत होता है इस चेप का सेवन करने से खून साफ होता है। शरीर संगठन की खराबी को दूर करने के लिये इसके चूर्ण को दूध के साथ लेते हैं।

उपयोग—**मूत्रकृच्छ्**—इसके पत्तों को पानी में भिगोने से पानी गाढ़ा हो जाता है। इस पानी में मिश्री डाल कर पिलाने से मूत्रकृच्छ्र मिटता है।

गठिया—शतावरी के साथ विधायरे का क्वाथ बनाकर पिलाने से गठिया मिटती है।

उपदंश—त्रिफला और विधायरे का क्वाथ बना कर पिलाने से उपदंश में लाभ होता है।

श्लीपद—इसके चूर्ण को कांजी के साथ पीने से श्लीपद में लाभ होता है।

स्मरण शक्ति की कमजोरी—विधायरे की जड़ के चूर्ण को शतावरी के स्वरस की ७ भावना देकर उसमें से १ तोला चूर्ण प्रतिदिन घी के साथ चाटने से बुद्धि और स्मरण-शक्ति बढ़ती है।

बिजिंदक

नाम—अफगानिस्तान—बिजिंदक। अंग्रेजी—Hairy Cress। लेटिन—Lepidium Draba (लेपिडियम ड्राबा)।

वर्णन—इस वनस्पति की खेती पंजाब में होती है। यह एक जाति का घास होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसके बीज पेट के अन्दर रहने वाली गेस को निकालने के काम में लिये जाते हैं। थे एक बार में ७ या ८ की मात्रा में दिये जाते हैं।

यूरोप में इसका पौधा रक्तातिसार को नाश करने के काम में लिया जाता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बिलिंबी

नाम—संस्कृत—कर्कटी वृक्ष। हिन्दी—बिलिंबी, बेलंबू। दक्षिण—वेलंबू। बंगाल—बिलंबी। गुजराती—बिलंबू। तेलगू—बिली बिली, बिलु वी, गोमारकू। तामील—पिलिंबी। इंगलिश—Bilimbi। लेटिन—Averrhoa Bilimbi (एव्हेराहा बिलिंबी)।

वर्णन—यह एक छोटी जाति का वृक्ष होता है जो विशेष रूप से मलाया में पैदा होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—यह वनस्पति-संकोचक, अग्निवर्धक और ज्वरनाशक होती है। इसके फलों का शरबत प्यास को बुझाने वाला, ज्वर के प्रकोप को कम करने वाला और भीतरी रक्तस्राव तथा बवासीर के मामूली केसों में लाभ पहुँचाने वाला होता है। इसके फलों की कढ़ी बवासीर और स्कर्वी रोग में एक उत्तम पथ्य होती है।

फ्रेंच गायना में इसके फलों का शरबत या इसके फलों का काढ़ा यकृत के प्रदाह तथा शरीर के किसी दूसरे प्रदाह को दूर करने के काम में लिया जाता है। यह ज्वर, अतिसार और पित्तज उदरशूल में भी लाभदायक होता है।

बिजाई

नाम—मलाया—बिजाई। लेटिन—Mangifera Caesia (मेंगिफेरा केसिया।)।

वर्णन—यह एक आम की जाति के वर्ग का मध्यम कद का वृक्ष होता है। इसकी ऊंचाई १८ मीटर तक होती है। यह वृक्ष मलाया प्रायद्वीप में विशेष रूप से पैदा होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसका रस त्वचा के ऊपर लगाने से तीव्र प्रदाह पैदा करता है और सूजन पैदा कर देता है। इसकी जड़ का निर्यास रेगास (Regas) नामक प्राणी के विष को नष्ट करने के लिए दिया जाता है।

बिशोनी

नाम—संस्कृत—कंथालू, कंथापुङ्खा, कंथापुंखिका। राजपूताना—विशोनी। लेटिन—Tephrosia Petrosa (टेफ्रोसिया पेट्रोसा) T. Spinosa (टेफ्रोसिया स्पिनोसा)।

वर्णन—यह सरपुंखे की जाति की एक छोटी वनस्पति होती है। यह राजपूताना, जोधपुर और जैसलमेर में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसका पौधा गरम, तीक्ष्ण स्वादवाला कृमिनाशक और पीड़ा दूर करने वाला होता है। इसमें सरपुंखे के समान ही सब तत्त्व रहते हैं। मगर यह उससे कुछ कमजोर होता है।

इसके पत्तों को पानी में उबालकर खाने से उपदंश की बीमारी में लाभ होता है।

बिरमाव

नाम—मराठी—विरमोव। लेटिन—Flemingia Tuberosa (फ्लेमिंगिया टयुबरोसा)

वर्णन—यह एक छोटी जाति का क्षुप होता है बरसात में कोकण के अन्दर बहुत पैदा होता है। इसके पत्ते तीन २ के गुच्छों में लगते हैं। इसके फूल किरमची रंग के होते हैं। इसकी हर एक फली में एक गोल और काला बीज रहता है। इसकी जड़ में एक कन्द रहता है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसका कंद मीठा और संकोचक होता है। यह रक्तातिसार और श्वेत प्रदर में द्राक्षासव के साथ देने से लाभ पहुँचाता है।

इसके तरुण पत्ते जहरीले होते हैं। इनको पीस कर मस्तकशूल में ललाट पर लेप करते हैं। इसके फूलों के बहार के समय में मधुमक्खियां जो शहद इकट्ठा करती हैं वह सिक्किम में जहरीला माना जाता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बिना

नाम—संस्कृत--कुब्रक, तुव्री, सागरोद्भूत । काठियावाड़-चेरिया । हिन्दी—बिना । बंगाल--बानी, बिना । वम्बई-तिवर । कच्छ--तवर । सिंध—तिवर । तामील-कंडेल । तेलगू—इख्ति । अरबी-स्कोरा । इङ्गलिश—White mangrove । लेटिन—Avecennia Officinelis (एवीसिनिया आफिसिनेलिस) ।

वर्णन—इस वनस्पति के वृक्ष काठियावाड़ में समुद्र के किनारे पर बहुत पैदा होते हैं । इसके पत्ते आमने सामने लगते हैं । ये अखण्ड, लम्ब गोल और हमेशा हरे रहने वाले होते हैं । इसके फूल पीले रंग के होते हैं और शाखाओं के मुंह पर लगते हैं । इसके फल एक इञ्च भर लम्बे और चपटे होते हैं । इसकी छाल और बीज औषधि-प्रयोग के काम में आते हैं । अकाल के दिनों में काठियावाड़ के अन्दर गरीब लोग इस वनस्पति को समुद्र के किनारे से काट लाते हैं और ढोरों के घास के लिये इसको बेचते हैं । अकाल के दिनों में यह ढोरों के लिये बहुत उपयोगी वस्तु रहती है ।

गुण, दोष और प्रभाव—इस वनस्पति की जड़ कामोद्दीपक होती है । इसके बच्चे बीजों का पुल्टिस व्रण और फोड़ों को पकाने के लिये बांधा जाता है । इसकी छाल संकोचक होती है । मद्रास में यह बनस्पति चेचक के अंदर उपयोग मे ली जाती है ।

सुश्रुत के मतानुसार इसके फल तूरे, मीठे, हलके, उष्ण, तीखे, पकाने वाले और कृमिज्वर, कब्जियत, प्रमेह, उदावर्त, काढ गुल्म, उदररोग और अर्श को नष्ट करने वाले होते हैं ।

इसके बीजों का तेल गरम, मधुर, तूरा तथा पचने में कड़वा होता है । यह वमन और विरेचन के द्वारा शरीर के दोषों को हर लेता है और वात, कफ, कोढ़, चर्बी और कृमियों को नष्ट करता है ।

बिमा और इन्फ्लूएञ्ज़ा—सन् १६१६ के फरवरी मास के वैद्य कल्पतरु में इस वनस्पति के इन्फ्लूएञ्जा पर होनेवाले प्रभाव के सम्बन्ध म एक लेख निकला था उसका सारांश इस प्रकार है ।

मोरवी जिले के एक छोटे ग्राम में कुलमा जाति की एक स्त्री को भयंकर इन्फ्ल्यूएञ्ज़ा का आक्रमण हुआ । उसकी श्वास-नली में सूजन हो गई थी । छाती में कफ भर गया था । श्वास रुक २ कर चलने लगा था और कर्णनली (स्टेस्थसकोप) के द्वारा देखने पर उसके फेफड़ों में श्वासावरोध की आवाज बहुत खराब सुनाई दी । जिससे यह मालूम हुआ कि उसके फेफड़े भी कफ से भरे हुए हैं । देशी उपचार की बतौर इसके कफ निस्सारण के लिये अडूसे का क्वाथ, अलसी के पुलटिस का सेक, भारंग्यादि क्वाथ इत्यादि प्रयोग किये गये और बुखार के लिये उसको महासुदशन क्वाथ दिया गया है । मगर इन सब प्रयोगोंसे कोई लाभ नहीं हुआ और रोगी की स्थिति खराब होती गई । इतनेमें अकाल का टाइम होने से बैलों के घास के लिये एक आदमी चेरियाके पौधे (बिना) गाड़ा में भरकर ले आया । अचानक इस वनस्पति का १ पत्ता मैंने चबाया और उसमें मुझे क्षार का अंश मालूम हुआ तब मैंने उसी समय बनस्पति शास्त्र-नामक ग्रन्थ देखा तो इसमें इस वनस्पति में ज्वर और कफनाशक गुण बतलाये गये थे । तब मैंने इस वनस्पति के पत्तों को १० तोले की मात्रा में लेकर थोड़े से कूटकर ६ माशा नमक डालकर उनका काढ़ा बनाया और उसमें १ तोला शहद डालकर रोगी को पिलाया । आधे घंटे में पीले, दुर्गन्धित और चिकने कफ के गुच्छे खाँसी के साथ निकलने लगे और एक पहर भर में करीब सेर सवा सेर कफ निकल गया तब मैंने सब औषधियों को छोड़कर इसी वनस्पति के पत्तोंका काढ़ा दूसरी बार दिया । जिसका परिणाम यह हुआ कि उसका ज्वर जो १०४ डिग्री की स्थिति में था उतर गया और वह स्त्री अच्छी हो गई । इसी प्रकार एक सिंधी को भी जिसको भयंकर इन्फ्लूएञ्ज़ा था और छाती में कफ बोलता था उसको भी इसी के पत्तों का काढ़ा दिया जिससे कफ बाहर निकल कर उसका भी आराम हो गया ।

इन दो केसों के पश्चात् और भी कई केसों पर मैंने इसको अजमाया और संतोषजनक परिणाम पाया ।

बिंदा

नाम—हिन्दी—बिंदा, बिंदु, पांसरा । बंबई—बहमनी, भामिनी, देसाई, देसारी । कुमाऊ—बिंदा बिंड्ड । देहरादून—बिंदा । पंजाब—बरमेरा, वसूती, बरियाली, दशेनी, फिसबेकर, संद्रू, शकरदाना, सुवाली । संथाल—बरसापाकोर, भेंसा । लेटिन—Colebrookea Oppositfolia, Co. Ternifolia (कोलेब्रूकिया आपाजिटी फालिया) ।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

वर्णन—यह एक बहुशाखी छोटी जाति की झाड़ी होती है। इसके पत्ते हलके रंग के होते हैं और तीन तीन के गुच्छों में लगते हैं। इसके फूल भी गुच्छों में लगते हैं। यह वनस्पति कम ज्यादा परिमाण में सारे भारतवर्ष में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—संथाल लोग इसकी जड़ को मृगी रोग को दूर करने के उपयोग में ले लेते हैं।

स्टेवर्ट के मतानुसार इसके पत्ते जखम और रगड़ पर लेप किये जाते हैं।

गेंबल के मतानुसार इसकी डालियों और पत्तोंको पहाड़ी लोग उनकी टांगोंपर होनेवाले खराब फोड़ों पर लगाने के काम में लेते हैं।

बिही

नाम—संस्कृत—अमृतफल, खिवितिका। हिन्दी—बिही, बिलू, काश्मीर की नासपाती। काश्मीर—बम-सुतु, बंटसुंतु। उर्दू—बिही। अरबी—बिहीतुर्श, सफरजन्न। तेलगू—सीमादानिम्मा। तामील—खिमाई, मदालाई। इङ्गलिश—Quince Tree। लेटिन—Cydonia Vulgaris (सायडोनिया व्हलगेरिस)।

वर्णन—यह एक छोटी जातिका झाड़ीनुमा वृक्ष होता है। इसके वृक्ष काश्मीर, हिमालय, नेपाल, ईरान और अफगानिस्तान में होते हैं। इन वृक्षों के पत्ते सादे और ५ से लेकर १० सेंटिमीटर तक लंबे और ३.८ से ७.५ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं। ये गहरे हरे रङ्ग के होते हैं। इसकी छाल गहरे भूरे रङ्गकी होती है। इसके फूल सफेद या कुछ गुलाबीपन लिये हुए होते हैं। यह सेव या नासपाती के वर्ग की एक वनस्पति है।

इसके फल अमरूद के आकार के और पकने पर सुनहरी पीले रंग के और मनोहर गंध से सुगंधित होते हैं। इनका स्वाद कुछ खट्टा होता है। इस जाति के फलों में बहुत से बीज रहते हैं। इन बीजों को बिहीदाना अथवा मुगलाई बेदाना कहते हैं। ये बीज लम्बगोल, चपटे और कुछ ललाई लिए हुए भूरे रंग के होते हैं। ये बीज ही औषधि-प्रयोग के काम में आते हैं। ये बीज काश्मीर, अफगानिस्तान और ईरान से यहाँ पर आते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से इसके बीज मीठे, खट्टे, पौष्टिक, अतिसार और रक्तातिसार नाशक, कामोद्दीपक और वात-कफ को नष्ट करने वाले होते हैं।

यूनानी मत—यूनानी मत से इसका फल खट्टा, मीठा, पौष्टिक, संकोचक, मूत्रल, घाव को अच्छा करने वाला, कफनिस्सारक और ज्वरनाशक होता है। यह मस्तिष्क और यकृत को शक्ति देता है। भूख को बढ़ाता है, प्यास को दूर करता है। व्रणों में लाभ पहुँचाता है और दमे में मुफीद है। इसके बीज स्वाद रहित और घावको भरने वाले होते हैं। ये गले के छाले, मुखशोथ, अग्नि से जलना इत्यादि में लाभदायक है। खाँसी, ज्वर, शरीर के अन्तरदाह और आन्त्रिक उदरशूलको ये दूर करते हैं। तथा व्रणों को भरते हैं।

इसके मीठे और कुछ खट्टे फल अरब और ईरान के लोग फलाहार की तरह आम तौर से खाते हैं और वहाँ ये मस्तिष्क और हृदय को शक्ति देने वाले माने जाते हैं। इसके पत्ते, कलियाँ और छाल अपने संकोचक तत्वों की वजह से अरब लोगों के यहाँ घरेलू औषधि की तरह काम में लिये जाते हैं। भारतवर्ष में इसके बीज शीतल, कुछ संकोचक और तर माने जाते हैं। ये यहाँ के देशी चिकित्सकों की प्रेक्टिस में एक बहुत लोकप्रिय औषधि की तरह काम में लिये जाते हैं। इनका लुआब खांसी और आंतों की शिकायतों में एक शांतिदायक पदार्थ की तरह काम में लिया जाता है। बाह्यप्रयोग में यह छाले, फफोले और अग्नि से जले हुए तथा भाफ से झुलसे हुए स्थान पर लगाने के काम में लिया जाता है। इसके बीज अतिसार, रक्तातिसार, ज्वर और गले के छालों में एक शांतिदायक वस्तु की तरह दिये जाते हैं। इसके सूखे हुए फल ज्वरनाशक माने जाते हैं।

यूरोप के अन्दर पेट और आंतों की श्लैष्मिक झिल्लियों की पीड़ा को दूर करने के लिये बिहीदानों का उपयोग किया जाता है। ये गले की खुश्की से होने वाली खांसी और आमाशय की खराबी से होने वाले जुकाम में भी उपयोग में लिये जाते हैं। सुजाक, अतिसार और रक्तातिसार में भी इनका उपयोग होता है। इनका लोशन बनाकर उससे नेत्र रोगों में आँखे धोई जाती हैं।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

रासायनिक विश्लेषण—इसके बीजों की गुठलियों में कड़वी बादाम के समान गन्ध और स्वाद होता है और इनमें १५ प्रतिशत तेल निकलता है। इसके बीजों के छिलकों को पानी में भिगोने से एक लुआब तैयार होता है। इस लुआब में कई प्रकार के चूने के अंश रहते हैं। इसके बीजों को जलाने से ३॥ प्रतिशत राख पड़ती है। उस राख में २७ प्रतिशत जोखार, ३ प्रतिशत सज्जीखार, १३ प्रतिशत मेगनेसिया, ७। प्रतिशत चूना, २॥ प्रतिशत गंधसार, १ प्रतिशत लोह और २॥ प्रतिशत नमक रहता है।

बिहीदानों की फांट बनाकर सुजाक में देने से पेशाब की जलन कम होकर उसकी तादाद बढ़ती है। सूखी खांसी में इसकी फांट को पिलाने से और उससे कुल्ले करने से और उसको पेट में देने से लाभ होता है। पुराने अतिसार में इन बीजों का काढ़ा बनाकर देते हैं। आंतों की श्लेष्म त्वचा पर इसबगोल के लुआब की तरह इसके बीजों का लुआब भी लिपट जाता है। जिसके परिणाम स्वरूप आँतों पर अगर कोई व्रण हो तो उसको तकलीफ नहीं होती और वह जल्द भर जाता है। खौलते हुए चालीस तोला पानी में एक तोला बिहीदाना डालने से गाढ़ा लेप तैयार हो जाता है जिसका लेप अग्नि से जले हुए स्थान पर या जखम पर करने से शांति मिलती है।

बिच्छू

नाम—हिन्दी—बिच्छू। बंगाल—बाघनोकी। बम्बई—बिछू। मराठी—बिंछू। पंजाब—बिच्छू। इङ्गलिश—Davil's Claw। लेटिन—Mortinia Annua (मार्टीनिया एन्नुआ) M. Diandra (मा० डिएंड्रा)।

वर्णन—यह एक बहुत सुन्दर मजबूत और छोटी जाति की वनस्पति होती है। इसके पत्ते बड़े २ होते हैं। इसके फूल गुलाबी और गहरे बैंगनी रङ्ग के खराब गंधवाले होते हैं। इसका फल काला २ आंकड़ियों वाला, बिच्छू के सदृश होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत—इसका फल तीक्ष्ण स्वाद वाला और सूजन के अन्दर उपयोगी होता है। इसके पत्ते मृगी रोग में दिये जाते हैं। क्षयजनित कंठमाला की ग्रंथियों पर इनका लेप करने से लाभ होता है। इन पत्तों का रस अथवा निर्यास गले के छालों को दूर करने के लिये कुल्ले करने के काम में लिया जाता है।

बिच्छू के डंक पर इसके फल को पानी में पीस कर लेप करने से शांति मिलती है।

यद्यपि इस वनस्पति के सम्बन्ध में प्राचीन ग्रन्थों के अन्दर कोई खास बात नहीं पाई जाती है फिर भी कुछ ऐसे साधु-संत या वैद्य हैं जिन्होंने इस औषधि का अनुभव किया है। उनका कथन है कि यह वनस्पति डिजिटेलिस नामक विदेशी दवा की जाति की है और अगर इसको थोड़ी मात्रा में दी जाय तो यह हृदय की गति को बढ़ाती है परन्तु अधिक मात्रा में देने पर यह हृदय की गति को मंद करती है। इसके अतिरिक्त यह जीर्ण ज्वर को मिटाती है। कफ को पतला करके बाहर निकालती है। निमोनिया में इसको देने से फेफड़े की सूजन कम होती है और कफ छूट कर निकल जाता है। मूत्र-नाली के रोगों में इसको देने से मूत्रल असर होकर रोग दूर हो जाता है। सर्वांगशोथ में इसका बाह्य प्रयोग और अन्तःप्रयोग दोनों होते हैं।

इन सब कार्यों के लिये इसके पत्ते जब आश्विन और कार्तिक के महीने में पीले पड़ जाते हैं तब इकट्ठे करके छाया में सुखा लेना चाहिये और उनका चूर्ण करके रख लेना चाहिये। इस चूर्ण में से १ रत्ती से २ रत्ती तक चूर्ण शहद के साथ मिलाकर ६ घंटे के अन्तर से देना चाहिये।

बनावटें—सोमल और हरताल की भस्म-बिच्छू के पौधों को जलाकर उनको राख कर लेना चाहिये। इस राख को एक हांडी में आधे भाग तक भर देना चाहिये। फिर बिच्छू के १० पत्तों को लेकर उनको पीसकर लुग्दी बनाकर उसमें २ तोला शुद्ध सोमल अथवा २ तोला शुद्ध हरताल की डली रख देना चाहिये। उस लुग्दी को उस हांडी में रखकर बाकी को राख से उस हांडी के गले तक दवा दवा कर भर देना चाहिये फिर उसी हांडी को चूल्हे पर चढ़ाकर ५ घंटे की मंद, ५ घंटे की मध्यम और ५ घंटे की तीव्र आंच देना चाहिये जिससे उत्तम भस्म तैयार हो जाती है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

इस भस्म को एक चावल की मात्रा में भोजन के पश्चात् नागरबेल के पान में रखकर खाने से दमा, खांसी, कुष्ठ इत्यादि रोगों में बहुत लाभ होता है। लेकिन यह प्रयोग लगातार १० दिन से अधिक एक साथ जारी न रखना चाहिये और पथ्य में सिर्फ गेहूं, चावल, घी, शक्कर, दूध इत्यादि सौम्य वस्तुएं ही सेवन करना चाहिये।

(जंगली जड़ी बूटी)

बिंगली

नाम—पंजाब—बिंगली, बिगनी, बटकर, बिगू, ब्रिमलू, चोकू, काई, खड़ग, रोखू। देहरादून—खारा-कचरा। काश्मीर—ब्रिमिज। कुमाऊँ—खारक। सिन्ध—ताधा। इङ्गलिश—Europian Nettle Tree। लेटिन—Celtis Australis (सेल्टिस आस्ट्रेलिस)।

वर्णन—यह एक बड़ी जाति का वृक्ष होता है। इसकी ऊँचाई ३० मीटर तक होती है। इसकी छाल भूरी और मुलायम होती है। इसके पत्ते ७.५ से लेकर १५ सेंटीमीटर तक लम्बे और २.८ से ७.५ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं। इसके फूल छोटे और कुछ हरापन लिये हुए होते हैं। यह वनस्पति हिमालय में मरी से नेपाल तक ४ हजार फीट से ८ हजार फीट की ऊँचाई तक पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—स्टेवर्ट के मतानुसार इसका फल रजोरोध और कालिक उदर शूल को नष्ट करने के लिये दिया जाता है।

बिन्दीमुट्ठी

नाम—संथाल—बिंदी मुट्ठी। लेटिन—Fimbristylis Junciformis (फिंब्रीस्टेलिस जंसीफार्मिस)।

वर्णन—यह वनस्पति प्रायः सारे भारतवर्ष और सीलोन में होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—कैंप बेल के मतानुसार इसकी जड़ रक्तातिसार के अन्दर काम में ली जाती है।

बिष्णुकंद

नाम—संस्कृत—विष्णुकंद, बृहद् कंद, जलवासा, बहुसम्पुट, सुपृष्ठ, दीर्घवृन्त, इत्यादि।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत—राजनिघंटु के मतानुसार विष्णुकंद मधुर, शीतल, पित्त-नाशक, दाहनाशक, रुचिकारक और तृप्तिकारक होता है।

बिल्लौर

नाम—हिन्दी, यूनानी—बिल्लौर।

वर्णन—यह एक खनिज द्रव्य होता है। यह जमरूद से नरम और कांच से सख्त होता है। जितना ही मुलायम होता है उतना ही खराब होता है। हकीम अरस्तू के मतानुसार बिल्लौर कांच ही की एक जाति है। यह चमकदार और सफेद रंग का होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत—यूनानी मत से यह सर्द और खुश्क होता है। इसको घिसकर आँखों में आंजने से आँख का जाला कट जाता है। बच्चों के गले में लटकाने से उसकी नींद में चौंक पड़ने की आदत, रोना और कंपवात अच्छे हो जाते हैं। इसको पास में रखने से खराब स्वप्न नहीं दिखाई देते। इनको आँख में लगाने से आँख की खुजली मिट जाती है। स्त्रियों के स्तनों पर इसको लगाने से उनका दूध बढ़ता है। (ख०अ०)

बिजीमूंडू

नाम—मलयालम—बिजीमुंड्डु, मुंड्डु। लेटिन—Garcinia Dulcis (गार्सिनिया डलकिस)।

वर्णन—यह एक मध्यम कद का वृक्ष होता है। इसके पत्ते गहरे हरे रङ्ग के होते हैं। इसके फूल कुछ

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

हरापन लिये हुये पीले रंग के होते हैं। इसका फल ६.३ सेंटीमीटर तक लम्बा होता है। यह वनस्पति मलाया प्रायद्वीप में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसके तेल युक्त बीज मलाया प्रायद्वीप में प्राचीन अतिसार और रक्तातिसार नाशक औषधि की तरह काम में लिये जाते हैं।

विर्मकंवल

नाम—पंजाब—विर्मकंवल, कंवल। Saussurea Obvallata (सुसारिया ओबवेलेटा)

वर्णन—यह वनस्पति हिमालय में काश्मीर से सिकिम तक १० हजार फीट से १५ हजार फीट की ऊँचाई तक पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसकी जड़ कटी हुई जगह और कुचली हुई जगह पर लगाने के काम में आती है।

बीबीबूँटी

नाम—बिलूचिस्तान—बीबी, बीबीबूँटी, बुतग, केमार, सागीदोंतन। लेटिन—Pycnocycla Aucheriana (पिकनोसिसला अचेरियाना)।

वर्णन—यह एकवर्षजीवी वनस्पति होती है जो बलूचिस्तान, फारस और अरब में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—बिलोचिस्तान में इस वनस्पति के पत्ते बहुत शीतल और शान्तिदायक माने जाते हैं, वहां के लोग प्यास बुझाने के लिये इस वनस्पति के पत्तों को चबाते हैं।

बिकला [बिकंकत]

नाम—संस्कृत—बहुफला, ब्रह्मपादप, दंतकष्ट, गोपाघंटा, ग्रन्थला, हिमाका, कंटकारि, कंटपत्र, किंकरी, मधुपर्णी, मृदुफल, पदारोहिणा, पिंडारा, पृथुबीजा, रावण, स्रुवद्रुमा, विकंकत, व्याघ्रपदा, इत्यादि। हिन्दी—बेकल, किगनी, टोटर सेइनाड़, कंटाइ, किंकणी। गुजराती—बाकलो, विकारो। बम्बई—हरमेचा। बंगाली—बेचिगाछ। पंजाब—दजकर, खेराई, किगारा, मेराला, टालकर। पोरबन्दर—विकारो। मराठी—भारती, भारुली, बेफल, बेकर। अजमेर—काकरा। तामील—कंटजी। तेलगू—दंतोसी, दंती। मध्यप्रान्त—बेकल, गजाचीनी। लेटिन—Gymno Sporia Moutana, G. Spinosa (जिम्ना स्पोरिया मोटेना)।

वर्णन—बीकले के वृक्ष ५ से लेकर १५ फीट तक ऊँचे होते हैं। इसमें पीलापन लिये हुए हरे और बेंगनी रंग की अनेकों शाखाएँ ऊँची, नीची, टेढ़ी, मेढ़ी फैल जाती हैं। इन शाखाओं पर लम्बे और तीक्ष्ण नोंक वाले कांटे रहते हैं। इसके पत्ते हलके हरे रंग के ऊपर की तरफ से चौड़े और डण्ठल की तरफ से सकड़े होते हैं। वे कंगूरेदार और करीब १॥ से लेकर २॥ इञ्च तक लम्बे और १ से लेकर १॥ इंच तक चौडे होते हैं। जाड़े के दिनों में इन पर कुछ सफेद रंग के छोटे २ फूल आते हैं। इसके फल शुरू में कुछ पीलापन लिये हुए हरे, फिर वैगनी रंग के और पकने पर काले हो जाते हैं। इन फलों का आकार काली मिरची के दानों के समान होता है और जब ये पकते हैं तब ये बीच में से फट जाते हैं और इनमें से दो २ तीन २ बीज निकल जाते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से बेकल खट्टा, मीठा, पाक में मधुर, लघु दीपन, कामलारोग को नष्ट करने वाला, खून को साफ करने वाला, पाचक और पित्त नाशक होता है।

बेकल मीठा, खट्टा, कसेला, शीतल तथा कफ, पित्त, रुधिर विकार और कामला रोग को दूर करता है। दाह, शोष, व्रण और बवासीर को भी यह दूर करता है। इसका फल मीठा और सर्वदोषनाशक होता है। यह त्रिदोष नाशक होता है और आँख की फूली को दूर करता है।

सुश्रुत के मतानुसार इसकी जड़, डाली, छाल और पत्तों से तैयार किया हुआ क्षारागद नामक प्रयोग सांप के विष को दूर करता है। इसकी छाल को सरसों के तेल में मिलाकर लगाने से सिर की जुएँ और लीकें मर जाती हैं।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

इसके पत्तों को पानी के साथ औटा कर उस पानी को छान कर उसमें शक्कर डालकर पीने से खून की खराबी, बवासीर, पांडु, कामला और सूजन दूर होती है। बिगड़ा हुआ पित्त सुधर जाता है। जठराग्नि प्रदीप्त होती है। इससे भूख खूब लगती है और खाया हुआ अन्न अच्छी तरह से पचता है।

इसके पत्तों का रस निकाल कर आँख में आँजने से आँख का फूला जल्दी नष्ट हो जाता है।

इसके पत्तों को साफ कर रतुआ नामक रक्त रोग में बांधने से बहुत लाभ होता है।

वुब्वुर बूंटी

नाम—बंगाल—बुब्बुर बूँटी। अंग्रेजी--Burma Beon । लेटिन—Phaseolus Lunatus (फेसिओलस लूनेटस)।

वर्णन—यह एक ऊँची जाति का दो दो साल में होने वाला पौधा होता है। इसके ऊपर अनेकों छोटे २ हरापन लिये हुए पीले रंग के फूल आते हैं। इसके बीज सफेद होते हैं। इस वनस्पति का मूल उत्पत्ति स्थान ब्राझील है और भारतवर्ष में इसकी खेती की जाती है।

गुण, दोष और प्रभाव—यह वनस्पति संकोचक होती है। ज्वर के अन्दर इसके बीजों की दाल बनाकर पथ्य के रूपमें दी जाती है। इसकी एक जाति में कभी २ विषैले तत्त्व भी पाये जाते हैं।

इसके बीजों का रासायनिक विश्लेषण करने पर इनमें हाइड्रोसायनिक एसिड, एक विषैला ग्लुकासाइड और फेसिओल्यूनेटिन (Phaseolunatin) नामक पदार्थ पाये जाते हैं।

बुन्दुक

नाम—अरबी—बुन्दुक । तामील—कचूरम। तेलगू —गच्च्य। इंग्लिश—Bezoar Nut। लेटिन—Caesalpinia Jayabo (केसलपिनिया जयाबो) C. Bondue।

वर्णन—यह कंट करंज या तनगच के वर्ग की एक वनस्पति होती है जो सीलोन, मलाया प्रायः द्वीप और वेस्ट इंडीज में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इंडोचायना में इसके कड़वे पत्ते एक ऋतुस्राव नियामक औषधि की तरह काम में लिये जाते हैं और इसकी जड़ रक्तातिसार को रोकने के लिये दी जाती है।

बुहरना

नाम--हिन्दी—बुहरना। पंजाब—बुइ, गिडी, फटमैर, सुतेइ । लेटिन—Pulicaria Crispa। (पुलीकेरिया क्रिस्पा)।

वर्णन—यह क्षुद्र जाति की वनस्पति पंजाब, बंगाल, सिंध और गंगा के ऊपरी मैदानों में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—स्टेवर्ट के मतानुसार यह वनस्पति बैलों की चोट, रगड़ और घावों के ऊपर घाव भरने वाली औषधि की तरह लेप की जाती है।

बुई [फुटकंदा]

नाम—पंजाब—बुई, अगझान, अवनीबूँटी, जांडी, कंडियारी, लान, फुटकन्द। लेटिन—Otostegia Limbata। (ओटो स्टेगिया लिंबेटा)।

वर्णन—यह एक छोटी जाति की वनस्पति होती है। जो पंजाब की छोटी पहाड़ियों में और झेलम के पश्चिम में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसके पत्तों का रस बच्चों के मसूड़ों पर लगाया जाता है और मनुष्यों तथा जानवरों के नेत्र रोगों में इसका उपयोग किया जाता है।

बुशान

नाम—बुशान, बिस, चम्मा, चंगमा, चंग, कलचान, मलचांग, मदाना, मूर। अफगानिस्तानबेदीस्याह। काश्मीर—विविर। लेटिन—Salix Alba (सेलिक्स एल्बा)।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

वर्णन—यह एक बड़ी जाति का वृक्ष होता है। इसकी नवीन डालियों पर रेशमी रुएं रहते हैं। इसके पत्ते नवीन हालत में रेशमी रहते हैं। इसके फूल पीले रंग के होते हैं। उत्तरी पश्चिमी हिमालय में इस वनस्पति की खेती की जाती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसकी छाल पौष्टिक, संकोचक और ज्वरनाशक होती है। इसका काढ़ा ज्वर के अन्दर होने वाले जोड़ों के दर्द में दिया जाता है। अतिसार, रक्तातिसार में भी इसका उपयोग किया जाता है।

बुराचूचा

नाम—बंगाल—बुराचूचा। लेटिन—Cyperus Iria (साइप्रस इरिया)।

वर्णन—यह एक छोटी जाति की वनस्पति होती है जो अक्सर चावल के खेतों में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसका पौधा पौष्टिक, उत्तेजक, अग्निवर्धक और संकोचक होता है।

बुकी

नाम—पंजाब—बुकी, बदकेई, माटी, नारी, स्किनंग, त्रोटका। लेटिन—Equisetum Debile (इक्वीसेटम डेबाइल)।

गुण, दोष और प्रभाव—इसका पौधा एक शीतल औषधि की तरह उपयोग में लिया जाता है और झेलम के आस पास के प्रान्तों में यह सुजाक के अन्दर दिया जाता है।

बुइ छोटी

नाम—पंजाब—बुई, बुइ छोटी, कौरेरो। लेटिन—Kochia Indica (कोचिया इंडिका)।

यह एक ऊंची जाति की सीधी वर्षजीवी वनस्पति होती है। इसकी डालियां और शाखायें सफेद रुएँदार होती हैं। यह वनस्पति उत्तरी पश्चिमी भारत और दक्षिण में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इस वनस्पति का पौधा हृदय को उत्तेजित करने वाला होता है और यह ऐसे रोगियों को जिनका हृदय दुर्बल और अव्यवस्थित रहता है। तथा साथ में ज्वर भी रहता है उनके लिए इस वनस्पति का उपयोग किया जाता है।

बुलु

नाम—नेपाल—बुलु, सेनुचिमाल। लेटिन—Rhododendron Cinnabarium (रोडोडेंड्रोन सिनेबेरियम)।

वर्णन—यह एक बड़ी जाति की झाड़ी होती है। इसकी छाल पतली और ललाई लिये हुये भूरे रंग की होती है। इसके फूल केसरिया रंग के अथवा गहरे लाल रंग के होते हैं। यह वनस्पति सिकिम और भूटान में १० हजार फीट से लेकर १२ हजार फीट की ऊंचाई तक पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसके पत्ते पशुओं और बकरों के लिये जहरीले होते हैं। इसका तम्बाखू की तरह किया हुआ धूम्रपान, आंखो की सूजन और चेहरे की सूजन पैदा करता है।

बुंदार

नाम—बम्बई—बुंदार। लेटिन—Eupatorium Cannabinum (यूपेटोरियम केनेबिनम)।

वर्णन—ये वृक्ष हिमालय के मध्य भाग में समशीतोष्ण कटिबन्ध में बहुत पैदा होते हैं। इसके पत्ते कुछ रुएंदार, हाथ के पंजे की आकृति के, कटी हुई किनारों वाले और शल्याकृति होते हैं। इसके फूल झूमकों में आते हैं और इन फूलों में उग्र गंध रहती है। इस वनस्पति का सभी भाग कड़वा रहता है।

गुण, दोष और प्रभाव—यह वनस्पति साधारण मात्रा में मूत्रल और पसीना लाने वाली होती है। बड़ी मात्रा में यह वामक और भेदक होती है। कामला, रक्तपित्त, दुष्ट व्रण और फोड़ों की सूजन में इसकी फाँट बनाकर

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

पिलाते हैं और इसी फाँट से व्रण को धोते हैं। इसकी फांट एक सेर भर खौलते हुए पानी में एक औंस इसके पत्ते डालकर आधे घंटे तक उस बरतन का मुँह बन्द करके फिर उसको छान कर बनाई जाती है। इसको दो औंस की मात्रा में दो दो घंटे के अन्तर से दिया जाता है।

बूयोनून

नाम--यूनानी—बूयोनून।

वर्णन—इसका पौधा तीन बालिश्त के करीब ऊँचा होता है इसके पत्ते अजमोद के पत्तों की तरह, फूल सोया के फूल की तरह और बीज अजवायन खुरासानी की तरह होते हैं। इसकी डालियों और पत्तों से सत निकाला जाता है।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क होती। यह वायु को नष्ट करती है। खुश्की बढ़ाती है। शरीर में संचित दोषों को निकालती है। मगर यह बहुत तेज होती है। इसलिये जहां तक बने इसका प्रयोग कम करना चाहिये। शहद के पानी के साथ इसका प्रयोग करने से इसकी तेजी कम हो जाती है। गुर्दे, मसाने और तिल्ली के दर्द में यह बहुत लाभदायक है। इसके सेवन से पेशाब की रुकावट और बूंद २ पेशाब आना बन्द हो जाता है। इसके सत को योनि में रखने से गर्भ में मरा हुआ बच्चा निकल जाता है। इसको शराब और नमक के साथ पीसकर गले में लेप करने से गले की सूजन उतर जाती है।

मुजिर—यह सिरदर्द और मतली पैदा करती है।

दर्पनाशक—उन्नाब और ताजा दूध।

प्रतिनिधि—कुंदर। मात्रा—पत्ती की ४ नग तक और बीजों की १॥ माशे तक (ख० अ०)।

बुरांस

नाम—पंजाब—बुरांस, अर्दवाल, आरू, ब्रास, ब्रोश्रा, चचिश्रोन, च्यू। गढ़वाल—बुरांस। अलमोड़ा—ब्रोस। नेपाल—भोरांस, धोनास। पश्चिमी हिमालय—बुरांस, च्यू। लेटिन—Rhododendron Arboreum (रोडोडेन्ड्रोन आर्बोरियम)।

वर्णन—वह एक छोटी जाति का हमेशा हरा रहने वाला वृक्ष होता है। इसके पत्ते ७.५ से १५ सेंटिमीटर तक लम्बे और ३ से लेकर ५.५ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं। इसके फूल गहरे लाल और गुलाबी रङ्ग के होते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—इसके तरुण पत्ते जहरीले होते हैं। यह वनस्पति काश्मीर से भूटान तक ५ हजार फीट की ऊँचाई तक होती है।

बूरक

नाम—हिन्दी, यूनानी—बूरक।

वर्णन—यह एक वनस्पति का फल होता है। इसका आकार सुद्दाब के फल की तरह होता है। इसको पानी में जोश देकर कुल्ले करने से मुंह की बदबू मिट जाती है। इसके काढ़े को पीने से पेट के कीड़े मर जाते हैं।
(ख० अ०)

बूभालसी

नाम—हिन्दी यूनानी—बूभालसी।

वर्णन—गिलानी ने अपने शरह कानून में लिखा है कि यह एक बहुत अप्रसिद्ध औषधि है। इसकी जड़, गोंद और सत उपयोग में लिये जाते हैं। इसका गोंद अत्यधिक प्रभावशाली वस्तु होती है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत से यह तीसरे दर्जे में गरम और खुश्क है। यह सूजन को बिखेरती है। फोड़ों की सफाई करती है, हड्डी के दोषों को दूर करती है। छाती में जमे हुए कफ को निकाल देती है इसका धूम्रपान करने से फेफड़ेके फोड़ों में लाभ पहुँचता है। इसके लेप से बढ़ी हुई तिल्ली आराम हो जाती है। (ख० अ०)

बूर्जिदान

नाम—यूनानी—बूर्जिदान।

वर्णन—यह एक जाति की जड़ होती है। इसकी लम्बाई १ उङ्गली के बराबर होती है। अन्दर से ठोस और सख्त होती है। इस पर बहुत सी लकीरें पड़ी हुई रहती हैं। बहुत से लोग इसे शतावरी समझते हैं मगर यह शतावरी से अलग होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में गरम और खुश्क होती है। इसकी क्रिया बुरंजान के समान होती है। यह काम-शक्ति को उत्तेजित करती है। जलोदर में लाभ पहुँचाती है। आमाशय से कीड़ों को निकाल देती है। बदन को मोटा करती है। जोड़ों के दर्द में लाभ पहुँचाती है। बवासीर में लाभदायक है। कफ और सरदी की बीमारियों को दूर करती है। स्त्रियों के लिये विशेष रूप से लाभदायक है।

मात्रा—इसके चूर्ण की मात्रा ६ माशे से १ तोले तक है। (ख० अ०)

बूस

नाम—यूनानी—बूश।

वर्णन—यह एक जाति का घास होता है। इसके पत्ते, मेंहदी के पत्तों की तरह और बीज भांग के बीजों की तरह मगर उनसे कुछ छोटे और पीलापन लिये हुए होते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत से यह दूसरे दर्जे में सर्द और तर है। कुछ लोगों के मत से यह सर्द और खुश्क होती है। इसको गुलाब और सिरके साथ लेप करने से गरमी का सिर दर्द आराम होता है। गरमी से होनेवाले फोड़े-फुन्सियों पर इसका लेप करने से बहुत जल्दी आराम होता है। मकोय के पत्तों के रस में पीसकर इसको आँख पर लेप करने से गरमी से दुखती हुई आँख आराम हो जाती है। (ख अ०)

बेकरियो

नाम—गुजराती—बेकरियो। शोलापुर—बरबेद। लेटिन—Indigofera Glandulosa (इन्डिगोफेरा ग्लैंड्यूलोसा)।

वर्णन—यह नील की जाति का एक पौधा होता है। इसके पत्ते नीले या सरपंखे के पत्तों की तरह होते हैं। इन पत्तों में सुन्दर बारीक काले रंग के छींटे होते हैं। इसके फूलों की मनोहर गुच्छियाँ लाल रंग की होती हैं। इसकी फलियां चौधारी होती हैं तथा बीज लम्बे, गोल और काले तथा भूरे रंग के होते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—गुजरात के अन्दर इसके बीज बेकरियों के नाम से मशहूर हैं। यह एक उत्तम पौष्टिक और बाजीकरण औषधि की तरह प्रसिद्ध है। जाड़े के दिनों में इसका पाक बनाकर सेवन करने का गुजरात में बहुत रिवाज है।

बेलांतर

नाम—संस्कृत—वेल्लतरु, दीर्घमूल, वीरद्रु, बहुवारक, क्षुधाकुशल-संज्ञक, वीरवृक्ष। हिन्दी—वरवेल, बिलवान्तर, बेलान्तर। मराठी—बेल्लतूर। तेलगू—बेणुतुरुचेट्ट। तामील—बिढ़ात्तर।

वर्णन—बेलांतर के वृक्ष मारवाड़ देश में तथा नर्मदा नदी और दूसरी नदियों के तट पर होते हैं। इस पर कांटे होते हैं। इसके पत्ते खेजड़े के समान और छोटे होते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत—निघंटु रत्नाकर के मतानुसार बेलांतर चरपरा, गरम, अग्नि दीपक, रस और पाक में कडुआ, मलरोधक, वातरोगनाशक, मूत्रकृच्छ्र, पथरी, संधिशूल, योनिरोग और मूत्राघात को दूर करता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बेल

नाम—संस्कृत—बिल्व, श्रीफल, पूतिवात, शैलपत्र, लक्ष्मीपुत्र, गंधपत्र, शिवेष्ट, इत्यादि। हिन्दी—बेल, बिली, श्रीफल। बंगाल—बेल, बिल्व। बम्बई—बेल, बिली। मराठी—बेल। गुजराती—बिली। तामील—बिलूबम। तेलगू—बिल्वमु। उर्दू—बेल। अरबी—सफरजले। अंग्रेजी—Bael fruit tree। लेटिन—Aegle Marmelos (इगल मारमेलोस)।

वर्णन—बेल का वृक्ष मध्यम आकार का होता है। इसकी शाखाओं में कांटे होते हैं। पत्ते त्रिदल या एक डण्ठल में तीन-तीन लगते हैं। फूल सफेद और सुगन्धित होते हैं। इसके फल गोल, स्वादिष्ट और सख्त छिलके वाले होते हैं तथा उनमें बहुत से बीज होते हैं और उन बीजों में गोंद होता है। ग्रीष्मऋतु के आरम्भ में इसके पुराने पत्ते गिरकर नये आने लगते हैं। भारतवर्ष के प्रत्येक खण्ड में बेल का वृक्ष पाया जाता है। यह वृक्ष शिवजी को बहुत प्रिय होता है। और इसके पत्ते अर्थात् बिल्वपत्र हमेशा शिवजी को चढ़ाने के काम में लिये जाते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मतसे बेल मीठा, हृदयको बल देने वाला, गरम, कसैला, रुचिकारक, अग्निदीपक, संकोचक, रूखा, पित्तकारक, कड़वा, चरपरा, भारी, पाचक तथा वातातिसार और ज्वरको नष्ट करने वाला होता है।

बेल का कच्चा फल स्निग्ध, भारी, रुचिकारक, जठराग्नि को दीप्त करने वाला, मलरोधक, पाचक, कड़वा, हलका, गरम, कसैला तथा शूल, आमवात, संग्रहणी और कफ के अतिसार को दूर करने वाला होता है।

बेलका तरुण फल संकोचक, कसैला, खट्टा, स्निग्ध, चरपरा, तीक्ष्ण, गरम, हलका, दीपन, पाचक, हृदय को हितकारी तथा कफ और वात को नष्ट करने वाला होता है।

बेल का पका हुआ फल दाह पैदा करने वाला, मधुर, भारी, कसैला, मलरोधक, कड़वा, गरम, त्रिदोषकारक, दुष्पच्य और वातकारक तथा मन्दाग्नि को उत्पन्न करने वाला होता है।

बेल की जड़ मधुर तथा त्रिदोष, वमन, शूल को नष्ट करने वाली, हलकी तथा मूत्रकृच्छ्र, वायु, कफ और पित्त का नाश करने वाली होती है। इसकी जड़ आर्य-चिकित्सा शास्त्र के सुप्रसिद्ध योग दशमूल क्वाथ का एक अंग है।

बेल के पत्ते कफ, वात, आम और शूल को नष्ट करते हैं तथा संकोचक और रोचक होते हैं। बेल का फूल अतिसार, तृषा और वमन को नष्ट करते हैं। बेल के बीजों का तेल गरम और वातविनाशक होता है। बेल का सूखा हुआ गूदा कफ, वात आम और शूल को नष्ट करता है।

यह एक ध्यान में रखने की बात यह है कि जहाँ दूसरे सब प्रकार के फल पकी हुई अवस्था में गुणकारी होते हैं वहां बेल कच्चा ही अधिक गुणकारी होता है। पका हुआ बेल अनेक प्रकार के दोषों को उत्पन्न करता है।

बेल की लकड़ी चन्दन के समान पवित्र मानी जाती है। दशमूल के काढ़े में भी यह डाली जाती है। इसके पत्तों को पीसकर आँख में लगाने से आँख का रोग आराम हो जाता है तथा पत्तों का अर्क बालकों के लिये दस्तावर और कफ का नाश करने वाला होता है।

बेल की जड़ में शामक धर्म रहता है और यह मज्जा तन्तुओं के ऊपर अपना शामक धर्म बतलाती है। इससे कुछ नशा सा मालूम होता है। इसके हरे फलों का गूदा स्निग्ध, दीपन, संकोचक और आंतों को शक्ति देने वाला होता है। इसके पके हुए फलों का गूदा आनुलोमिक होता है। इसके पत्ते कटु, पौष्टिक, आनुलोमिक, सूजन को नष्ट करने वाले, ज्वरनाशक, कफनिस्सारक, व्रणशोधक और व्रणरोपक होते हैं।

डाक्टर देसाई के मतानुसार बेल की जड़ दशमूल के अन्दर डाली जाती है। वात रोगों में यह लाभ पहुँचाती है। हृदय की धड़कन, उदासीनता, निद्रानाश, उन्माद और माली खोलिया, इत्यादि मज्जा तन्तु-सम्बन्धी रोगों में इसकी जड़ दी जाती है। विषम ज्वर के अन्दर इसकी जड़ का क्वाथ दिया जाता है। वीर्य पतला होने पर इसकी जड़ की छाल और जीरे को पीसकर घी में मिलाकर देते हैं। विषैले कीड़ों पर इसकी जड़ का लेप

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

किया जाता है। इसकी जड़ को चावलों के मांड़ में उबाल कर उसमें शक्कर मिलाकर बच्चों को उल्टी और दस्त बन्द करने के लिये देते हैं।

आंतों के विकारों में अथवा मंदाग्नि रोगों में जब कि मनुष्य को कभी तो कब्जियत हो जाती है और कभी अधिक दस्त लगने लगते हैं, ऐसी अव्यवस्थित स्थिति में इसके पके हुये फलों का शरबत देने से बहुत फायदा होता है।

इसके कच्चे फलों को रक्तातिसार और जीर्णातिसार में दिया जाता है। जो रोगी पाचन क्रिया के बिगड़ने से अशक्त हो गया हो, मगर जिसको ज्वर न हो उसको यह वस्तु बहुत लाभ करती है। कच्चे बेल का फल, बड़ी सौंफ और बच इन तीनों चीजों का क्वाथ प्राचीन आमातिसार में विशेष रूप से लाभदायक होता है। रक्तपित्त के रोगी मनुष्योंको अतिसार होने की हालत में यह औषधि विशेष रूप से लाभदायक होती है। इसके ताजे फलों का गूदा कबाबचीनी के साथ दूध में मिलाकर देने से प्राचीन सुजाक में लाभ होता है। तिल्ली के तेल में इसके कच्चे फलों का गूदा ८ दिनों तक रखकर उस तेल को अग्निदग्ध स्थान पर लगाने से शांति मिलती है। इसके ताजे पत्तों का स्वरस ज्वर, सूजन, खांसी और नेत्राभिष्यन्द रोग में लाभदायक होता है। इससे दस्त साफ होकर ज्वर हलका पड़ जाता है। अग्निमांद्य से होने वाले दमे में कफ निकालने के लिये इसके पत्तों का क्वाथ बनाकर देते हैं। कफ ज्वर में इसका स्वरस देते हैं। जल शोथ और कब्ज पर मिरच के साथ इसका स्वरस दिया जाता है। व्रणों के ऊपर इसके ताजे पत्तों को पीसकर बांधने से बहुत लाभ होता है।

बिल्व पत्र और मधुमेह—मधुमेह के अन्दर बिल्व पत्र बड़े लाभदायक सिद्ध हुये हैं। प्रतिदिन सबेरे कोमल बिल्व पत्रों को कूट कर उनका १ तोला रस निकाल कर लगातार कुछ दिनों तक पीते रहने से पेशाब से शक्कर जाना धीरे २ कम होकर अंत में बिलकुल बंद हो जाता है। जिस दिन इस औषधि को शुरू किया जाय उस दिन पेशाब की स्पेसिफिक ग्रेविटी और उस में जाने वाली शक्कर के तादाद की जाँच कर लेनी चाहिये और फिर १ महीने के बाद उसके पेशाब की जांच करवानी चाहिये। जब शक्कर की तादाद बिलकुल कम हो जाय तब रोगी को पथ्य के अन्दर धीरे २ छूट देते जाना चाहिये और जब तक पेशाब में शक्कर जाना बिलकुल बन्द न हो तब तक बिल्वपत्र का रस बराबर देते रहना चाहिये।

जंगलनी जड़ी बूटी के लेखक लिखते हैं कि मधु प्रमेह के एक भयंकर केस में प्रतिदिन सबेरे शाम दो वार बिल्व पत्र का रस देते रहने पर २ महीने में उसका बहुत ही उत्तम परिणाम दृष्टिगोचर हुआ। मधु प्रमेह की व्याधि बहुत भयंकर मानी जाती है मगर उसके ऊपर यह बनस्पति बहुत लाभदायक मालूम हुई है।

दूसरे प्रमेह और सुजाक में भी इसके बीजों का तेल बड़ा लाभ पहुँचाता है जिसकी विधि इस प्रकार है। आधे पके हुए बेल के फलों को लेकर उनको पानी डालकर उबालना चाहिये। जब उसके बीज उसमें से अलग हो जाएँ तब उन बीजों को उसमें से निकाल लेना चाहिये। उन बीजों का बारीक चूर्ण करके उनको त्रिफले के काढ़े की ७ भावनाएँ देनी चाहिये उसके बाद उस चूर्ण को पानी में डालकर उसका तेल निकलवा लेना चाहिये।

वमन-विरेचन इत्यादि से शरीर को शुद्ध करके पहले दिन इस तेल को ८ रत्ती की मात्रा में दूध में डालकर पी लेना चाहिये। फिर प्रति दिन आठ २ रत्ती तेल बढ़ाते हुये दसवें दिन १० माशा की मात्रा में पीते रहना चाहिये और जब तक यह दवा चालू रहे तब तक पथ्य में सिर्फ दूध और भात का ही प्रयोग करना चाहिये। इस प्रयोग के सेवन से प्रमेह और सूजाक का भयंकर रोग नष्ट हो जाता है। शरीर में शक्ति और नेत्रों में तेज की वृद्धि होती है। कान का बहरापन और दूसरे कितने ही प्रकार के वायु रोग भी दूर हो जाते हैं। इस तेल को उपयोग में लेने के पहिले अगर एक महीने तक जमीन में गाड़कर रक्खा जाय तो विशेष लाभ करता है।

बेलफल और अतिसार—कोमानका कथन है कि बेल के फल का द्रवसत्त्व रक्तातिसार और अतिसार के अनेक रोगियों पर आजमाया गया और उसका परिणाम बहुत सन्तोषजनक रहा। इसके फलों के गूदे का शरबत आंतों की सूजन के कुछ रोगियों को दिया गया और लम्बे समय तक लगातार लेते रहने के बाद उन रोगियों को उससे लाभ हुआ।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

इसके कच्चे फलों को काटकर उनको सूरज की धूप में सुखाया जाता है। इन सूखे फलों का चूर्ण संकोचक और अग्निवर्धक होता है। प्रवाहिका और रक्तातिसार के रोगों में बहुत लाभ पहुँचाता है। अक्सर करके यह प्राचीन अतिसार के रोगियों में जब कि दूसरी सब दवाएं असफल सिद्ध हो जाती हैं, बहुत कारगर सिद्ध होता है। विशेष तौर से प्राचीन प्रवाहिका रोग में इसका उपयोग बहुत ही उपयुक्त होता है। भोजन के समय में कुछ हेर फेर कर देने से, साधारण पथ्य में कुछ सुधार कर देने से तथा उसमें बेल के फल को शामिल कर देने से हमेशा बहुत लाभ दिखलाई देता है।

कर्नल चोपरा बेल के फल का वर्णन करते हुये लिखते हैं कि बेल का वृक्ष हिन्दू धर्मशास्त्र के अन्दर बहुत पवित्र माना गया है और हिन्दू लोग इसके पत्तों को भगवान शिव के ऊपर हमेशा चढ़ाते हैं। हिन्दू चिकित्सा शास्त्र के अन्दर भी इस वनस्पति के भिन्न २ अंग उपयोग में लिये जाते हैं। इसकी जड़ की छाल काढ़े के रूप में पार्यायिक ज्वर, हृदय की धड़कन (Palpitation of the Heart), माली खोलिया और पित्तोन्माद में उपयोग में ली जाती है। दशमूल के प्रसिद्ध योग में भी इसकी जड़ डाली जाती है। इसके पत्ते पुल्टिस के रूप में व्रण और सूजन के ऊपर बाँधे जाते हैं। इसका ताजा रस पानी के साथ मिलाकर जुकाम और हरारत में दिया जाता है। पक्के फल प्रवाहिका (Diarrhoea) और आंतों की बीमारी में दिये जाते हैं। रक्तातिसार और प्रवाहिका में इसके सूरज की धूप में सुखाये हुए कच्चे फल का चूर्ण दिया जाता है। भारतीय इतिहास में लम्बे समय से बेल फल के समान कोई भी औषधि यहां के निवासियों के द्वारा इतनी पसन्द नहीं की गई। इसकी दो जातियां बाजार में मिलती हैं। एक छोटी और जङ्गली जाति और दूसरी बड़ी और लगाई हुई जाति। इसका पूरा बढ़ा हुआ फल, जो कि पकने की सीमा के नजदीक पहुँच गया हो, वह औषधि के लिये विशेष उपयोगी होता है।

(१) इसका कचा और अर्धपक्व फल संकोचक, पाचक, अग्निवर्धक और प्रवाहिका रोग की चमत्कारिक औषधि मानी जाती है। इसका मूल कारण इसमें पाये जाने वाले टेनिन्स (उपक्षार) और लुआबदार पदार्थ हैं। प्राचीन प्रवाहिका रोग में यह विशेष रूप से उपयोगी कहा जाता है। आयुर्वेदिक चिकित्सक इसको कभी २ अफीम के साथ मिलाकर देते हैं। इसके फल का मुरब्बा बनाकर भी हिन्दू चिकित्सक प्रवाहिका और अतिसार चिकित्सा में देते हैं।

(२) इसका पका हुआ फल मीठा, सुगंधित और शीतल होता है। ताजी हालत में इसमें कुछ मृदुविरेचक तत्त्व रहते हैं। इसके सूखे फलों के गूदे का शरबत बनाया जाता है जिसमें कुछ हलके संकोचक तत्त्व रहते हैं।

रासायनिक विश्लेषण—कुछ वैज्ञानिकों के मतानुसार बेल के अन्दर टेनिकएसिड, एक उड़नशील तेल, एक कड़वा तत्त्व और एक चिकना और लुआबदार पदार्थ पाया जाता है। लेकिन फ्लूकीगर और हाँनबूरी ने इस मत की आलोचना करते हुए बतलाया कि इसके सूखे गूदे में प्रधान रूप से एक लुआब या रसदार पदार्थ पाया जाता है। वे इसके अन्दर टेनिन की कोई ऐसी महत्त्व पूर्ण तादाद नहीं प्राप्त कर सके जो कि इस औषधि के संकोचक तत्वों के साथ अपना सम्बन्ध स्थापित कर सके।

हेनरी और ब्राउन ने सन् १९२४ में इसके फल का दूसरी २ अनेक रक्तातिसारनाशक औषधियों के साथ परीक्षण किया। इसके सूखे गूदे को अलकोहल में औटाकर उसका एक्स्ट्रेक्ट बनाया।

इन सबसे नवीन अन्वेषण दत्त और दीक्षित ने सन् १९३० में इस वनस्पति के सम्बन्ध में किया। उन्होंने इसकी जड़, बीज, छाल, पत्ते और फलोंको पानी, अलकोहल इत्यादि कई गलाने वाली चीजों के साथ गलाकर, एक्स्ट्रेक्ट बनाकर उनके तत्त्वों का निश्चय किया। इसकी जड़, पत्तों और छाल में उन्होंने शक्कर को कम करनेवाले तत्त्व और टेनिन प्रधान रूप से प्राप्त किया। इसके फल के गूदे में मारशेलोसिन नामक एक पदार्थ प्राप्त हुआ। यह पदार्थ इसके अन्दर पाये जाने वाले तत्त्वों में सबसे अधिक महत्व पूर्ण तत्त्व है। इसके बीजों को कुचल कर उनका पेट्रोलियम ईथर में एक्स्ट्रेक्ट बनाया गया। उस एक्स्ट्रेक्ट में से एक पीले रंग का तत्त्व प्राप्त किया गया। इस तेल में बहुत ही उत्तम विरेचक तत्त्व होते हैं और १॥ ग्राम की मात्रा में लेने पर यह बहुत ही उत्तम विरेचक असर बतलाता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

यह विश्वास किया जाता था कि बेल प्राचीन प्रवाहिका और रक्तातिसार के हठीले दुःसाध्य रोगियों को आराम करने के लिए एक अमूल्य औषधि है। ऐसे रोगियों को, जिनको बुखार नहीं होता यह चूर्ण या मुरब्बे के रूप में दिया जाता है। पुराने समय में जब कि यह औषधि ब्रिटिश फरमाकोपिया के अन्दर सम्मत थी, भारत के पाश्चात्य चिकित्सकों के द्वारा भी इसका आमतौर से उपयोग होता था। उस समय इसकी तीन बनावटें प्रायः सब जगह उपयोग में ली जाती थीं।

(१) **एक्स्ट्रेक्ट**—जो कि इसके ताजे कच्चे फलों से बनाया जाता था। यह आधे से लेकर १ ड्राम की मात्रा में दिन में कई बार दिया जाता था।

(२) **लिकिड एक्स्ट्रैक्ट**—जो कि इसके सूखे हुए कच्चे फलों के टुकड़ों से तैयार किया जाता था। यह एक से लेकर दो ड्राम की मात्रा में दिया जाता था।

(३) **इसके सूखे हुए गूदे का चूर्ण**—जो कि एअरटाइट बोतलों में रक्खा जाता था और आधे से लेकर १ ड्राम तक की मात्रा में दिया जाता था।

लेकिन आज के दिन में मुश्किल से ऐसा कोई लिटरेचर मिलता है जो एमेबिक डीसेंट्री पर बेल के फल की उपयोगिता को साबित कर सके। तीव्र और नवीन रक्तातिसार में जब कि आंतों की मरोड़ और खून तथा पाक का गिरना निश्चित रूप से होता हो उसमें इसका फल बहुत ही थोड़ा या नहीं के बराबर असर दिखाता है, हालां कि इसी प्रकार की परिस्थिति के लिये इसकी प्रधान रूप से सिफारिश की जाती थी। बेल के फल का फायदेमंद और अधिक प्रत्यक्ष असर प्राचीन अतिसार के ऊपर दिखाई देता है जब कि उसका रूप अधिक उग्र नहीं होता। ऐसी परिस्थितियों में इसको देने के पश्चात् खून का गिरना धीरे २ बन्द हो जाता है और दस्त वास्तव में अधिक गाढ़े और फेक्यूलेंट (Feculent) रूप में आने लगता है। अगर इसका लगातार कुछ दिनों तक उपयोग किया जाय तो दस्त से जाने वाला सफेद और चिकना पदार्थ भी बंद हो जाता है। प्राचीन रक्तातिसार के ऐसे रोगियों के लिये जिनको कभी दस्त लगने लगते हैं और कभी भयंकर कब्जियत हो जाती है, बेल का फल एक बहुत ही उपयोगी वस्तु है।

बेसेलरी रक्तातिसार की चिकित्सा में भी बेल एक उपयोगी सहायक द्रव्य सिद्ध हुआ है। एक्टन और नाबेल्स के मतानुसार ऐसे बीमारों के लिये खास कठिनाई यह होती है कि अगर उनकी कब्जियत दूर न की जाय तो उनकी आंतों के व्रण भली प्रकार दुरुस्त नहीं हो सकते। बेल का शरबत अगर उनकी खुराक में मिला दिया जाय तो वह ऐसी स्थिति में एक शांतिदायक औषधि का काम करता है। इसके ताजा फल का गूदा शक्कर और मक्खन अथवा दही के साथ मिलाकर अथवा मलमल के कपड़े में (बीजों को और लुआब को दूर करने के लिये) छानकर उपयोग में लिया जाता है।

संग्रहणी के केसों में भी बेल के फल की काफी तारीफ की गई है। कई बीमारों को खासकर संग्रहणी रोग के होने के पूर्व अथवा संग्रहणी रोग की प्रथम अवस्था में बेल फल निसन्देह बहुत मददगार होता है। इस कार्य में इसके ताजा फल की शक्कर के साथ अथवा इसके सूखे फल की भी सिफारिश की गई है।

अन्त में कर्नल चोपरा लिखते हैं जि बेल फल बहुत लम्बे समय से देशी औषधियों के अन्दर प्रवाहिका और रक्तातिसार की चिकित्सा में बहुत प्रसिद्ध है और कुछ समय पहले यह ब्रिटिश फरमाकोपिया में भी सम्मत माना जाता था। लेकिन टेनिन्स के अतिरिक्त इसमें और कोई ऐसे प्रधानतत्त्व नहीं पाये गये हैं जिनको इन रोगों की चिकित्सा में विशेष महत्त्व दिया जा सके। नवीन और तीव्र अतिसारों में इसका बहुत ही कम असर होता है। लेकिन प्राचीन रोगों में यह उनके लक्षणों को मिटाकर बहुत लाभ पहुंचाता है इसका कारण इसके अन्दर बड़ी तादाद में रहने वाला लुआब है जो शांतिदायक असर पैदा करता है। यह एमेबिक और बेसिलरी अतिसारों में कोई विशेष लाभ नहीं पहुँचाता है।

डॉक्टर मुडीन शरीफ का कथन है कि इसके फलों के गूदा को धूप में सुखाकर चूर्ण कर लेना चाहिये। यह चूर्ण पौष्टिक, अग्निदीपक और ज्वरनाशक होता है। यद्यपि अतिसार और रक्तातिसार के सभी रूपों में यह उपयोगी नहीं होता, फिर भी तीव्र मरोड़ के दस्तों में इस चूर्ण को देने से लाभ पहुँचता है। इसका पहिला असर यह होता है कि यह दस्त के साथ गिरने वाले खून को बन्द करता है, आँव को निकाल देता है और दस्त होने के

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

समय में बहुत अन्तर कर देता है। मगर यह दस्त के प्रमाण को कम नहीं कर सकता। इसलिये दस्त के प्रमाण को कम करने के लिये इसको अफीम के साथ देना चाहिये। इसके अतिरिक्त यह चूर्ण टायफाइड ज्वर, क्षय ज्वर (Hectic Fever) अथवा दूसरी किसी भी औषधि से न उतरने वाले और हमेशा समान रूप से शरीर में बने रहने वाले ज्वरों को उतारने में बहुत उपयोगी होता है। इस प्रकार के ज्वरों में जब गर्मी बहुत बढ़ी हुई रहती है तब इस चूर्ण को देने से वह एकदम कम हो जाती है। ऐसे ज्वरों में इसको ५ रत्ती से लेकर आठ रत्ती तक की मात्रा में २४ घंटे में ४ या ६ वक्त देना चाहिये। अतिसार के रोग में इसको १० से लेकर ३० रत्ती तक की मात्रा में चौथाई ग्रेन अफीम के साथ मिलाकर २४ घंटे में ४ से ६ वक्त देना चाहिये।

सर्जन ब्राउन का कथन है कि प्राचीन अतिसार के रोगों में यह बहुत उपयोगी औषधि है और अफीम के साथ देने से यह बहुत अच्छा काम करती है।

मेजर निकर का कथन है कि इसके फलों का बहुत लंबे समय तक सेवन करने से रक्तस्राव होने का डर रहता है मगर यदि इसको शक्कर के साथ लिया जाय तो यह भय नहीं रहता।

कोकण में इसके छोटे कच्चे फलों को सोया के बीज और सोंठ के साथ काढ़ा बनाकर बवासीर को दूर करने के लिये देते हैं। इसके पके फल मीठे, खुशबूदार और ठंडे होते हैं। इनका शरबत बनाकर बरफ के साथ सबेरे लेने से तबियत प्रसन्न होती है, दस्त साफ हो जाता है और मंदाग्नि की शिकायत मिट जाती है। इसके सूखे फल का गूदा संकोचक और रक्तातिसार नाशक होता है। इसकी जड़ की छाल काढ़े के रूप में पार्यायिक ज्वरों को दूर करने के लिये दी जाती है। यह दशमूल क्वाथ के अन्दर भी डाली जाती है। मलाबार कास्ट में यह पित्तोन्माद, मालीखोलिया और हृदय की धड़कन में काम में ली जाती है। इसके पत्तों का पुल्टिस नेत्राभिष्यन्द रोग में लगाया जाता है इसका ताजा रस जुकाम, और ज्वर की हरारत में लाभदायक माना जाता है। इसके पत्तों का ताजा रस काली मिर्च के साथ पीलिया और कब्जियत के साथ होने वाले सर्वाङ्गीण शोथ में दिया जाता है। बाहरी सूजन में इसके पत्तों का रस बात, पित्त और कफ की अव्यवस्था को दूर करने के लिये पिलाया जाता है। इसके पत्तों को दबाकर निकाला हुआ रस आंखों के दुखने पर तथा दूसरी नेत्र पीड़ाओं पर उपयोग में लिया जाता है। मलाबार में इसके पत्तों का काढ़ा दमे की शिकायतों को दूर करने के लिये उपयोगी माना जाता है। ज्वर की सान्निपातिक अवस्था (Delirium) में इसके पत्तों का गरम पुल्टिस ललाट के ऊपर बांधा जाता है।

कम्बोडिया में इसका फल राजयक्ष्मा और यकृत प्रदाह को दूर करने के काम में लिया जाता है।

सुश्रुत, वाग्भट और योगरत्नाकर के मतानुसार इसकी जड़, पत्ते और छाल सर्पविष को नष्ट करने में उपयोगी हैं।

यूनानी मत—यूनानी मत से इसका पका हुआ फल गरम और खुश्क होता है। यह पौष्टिक, संकोचक, मृदुविरेचक और हृदय तथा मस्तिष्क के लिये शक्तिवर्धक होता है। यकृत और छाती के लिये यह हानिकारक है।

उपयोग—अतिसार—इसके कच्चे फल के गूदे को सेक कर मिश्री के साथ खिलाने से पुराना अतिसार और आमातिसार मिटता है।

नंबर २—बेल का मुरब्बा खिलाने से पित्तातिसार मिटता है। आमातिसार में इसके चूर्ण को १। माशे से ४ माशे तक की मात्रा में दिन में तीन या चार बार देने से लाभ होता है।

नंबर ३—बेलगिरी, आम की गुठली, कत्था और ईसबगोल की भुस्सी शक्कर के साथ देने से अतिसार और आमातिसार में बहुत लाभ होता है।

नंबर ४—बेल के कच्चे और साबित फल को भोभल में भूनकर उसको छिलके सहित कूटकर उसका रस निकाल कर मिश्री मिलाकर देने से पुराना आमातिसार मिटता है।

नंबर ५—बेल के गूदा को गुड़ के साथ खाने से रक्तातिसार मिटता है।

नंबर ६—बेल का गूदा और आम की गुठली में शक्कर और शहद मिलाकर चटाने से वमन और अतिसार मिटता है।

ज्वर—शीत ज्वर और ऐसा ज्वर जिसका कारण मालूम न हो, बेलगिरी के चूर्ण की फक्की देने से दूर होता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

मूत्रकृच्छ्र—इसके ताजे फल के गूदे को पीसकर दूध के साथ छानकर उसमें शीतल चीनी का चूर्ण भुरभुरा कर पिलाने से पुराना मूत्रकृच्छ्र मिटता है, मूत्र वृद्धि होती है और मूत्रेन्द्रियों की झिल्ली सिकुड़ जाती है।

विसूचिका—विसूचिका के आक्रमण के समय इसके फल के शरबत को पीते रहने से रोग के आक्रमण का भय कम रहता है।

सर्पविष—इसकी जड़ विषैले सर्प के विष को दूर करने के लिये लाभदायक है।

खराब फोड़े—इसके पत्तों को बिना पानी के पीस कर टिकिया बनाकर खराब फोड़ों पर बांधने से लाभ होता है।

मसूड़े का रोग—इसके ५ तोला शरबत में ५ तोला दूध मिलाकर पिलाने से मसूड़ों के असाध्य रोग में लाभ होता है।

मंदाग्नि—इसका पका हुआ फल मंदाग्नि और ज्वर में लाभ पहुंचाता है।

ज्वर—इसकी जड़ की छाल का क्वाथ पिलाने से रह रह कर आने वाला ज्वर छूट जाता है।

पागलपन—इसकी जड़ की छाल का क्वाथ बनाकर पिलाने से हृदय का अधिक धड़कना और पागलपन मिट जाता है।

आँख का दुखना—इसके पत्ते का पुल्टिस बांधने से आँख का दुखना और अधिक पीड़ों का आना मिट जाता है।

संग्रहणी—इसके कच्चे फल को सेक कर उसके १ तोला गूदा में शक्कर मिलाकर खिलाने से संग्रहणी में लाभ होता है।

वमन—इसकी छाल के काढ़े में शहद मिलाकर पिलाने से त्रिदोष का वमन बन्द होता है।

गर्भवती स्त्री का वमन—इसके फल के गूदे को पीस कर चावल के पानी के साथ मिलाकर पिलाने से गर्भवती स्त्री का वमन बन्द होता है।

कामला रोग—इसके पत्तों के रस में काली मिरच का चूर्ण भुरभुरा कर पिलाने से पांडु, शोथ, वद्ध कोष्ठ, अर्श और कामला रोग मिटता है।

कानों का बहिरापन—बेलगिरी को गोमूत्र के साथ पीसकर उसको जल और दूध के साथ तेल में सिद्ध करके उस तेल को कान में टपकाने से कान का बहरापन मिटता है।

बनावटें-बधिरता नाशक तेल—बेल के गूदा को बीज वगैरह निकाल कर ५ तोला की मात्रा में लेकर पानी के साथ पीसकर लुग्दी बना लेना चाहिये। यह लुग्दी ५ तोला, निर्गुंण्डी के पत्तों का रस ५ तोला, वरुन के पत्तों का रस ५ तोला, अपामार्ग के बीजों का चूर्ण २॥ तोला, तिलवन का रस २॥ तोला, बकरी का मूत्र २२ तोला, सेंधानमक २॥ तोला और बादाम का तेल १० तोला लेकर इन सबों को हलकी आँच से औटाना चाहिये। जब रस और मूत्र का भाग जलकर तेल मात्र शेष रह जाय तब उसको उतार कर छान लेना चाहिये। इस तेल को हमेशा कान में डालते रहने से बहिरापन दूर होता है।

पुराने और दुर्गन्धित घी को सुधारने का उपाय—घी जब पुराना होकर खराब हो जाता है और खाने योग्य नहीं रहता तो उसको सुधारने के लिए जितना घी का वजन हो उसका चौथाई हिस्सा दही में डाल कर, उस दही से चौथाई वजन की बेल के ताजे पत्तों की पिसी हुई लुग्दी उसमें डाल कर हलकी आँच से पकाना चाहिये। जब घी कड़कड़ाने लगे तब वैसे ही उसे नीचे उतार कर ठंडा करके छानकर मिट्टी की बरनी में भर लेना चाहिये। यह घी ताजा घी के समान सुगन्धित और स्वादिष्ट हो जाता है।

बेल के पत्तों रस निकालने की विधि—बेल के पत्तों में से सिर्फ आषाढ़ और श्रावण में ही रस निकलता है। अगर दूसरी ऋतुओं में इसका रस निकालना हो तो पुटपाक विधि से इसका रस निकालना चाहिये अर्थात् इसके पत्तों को सिल पर पीस कर उनका गोला बना लेना चाहिये और उस गोले के ऊपर बड़ के पत्तों को ताजा लपेट कर कपड़मिट्टी करके भाड़ में डाल देना चाहिये जब वह गोला लाल हो जाय तब उसको निकाल कर ठंडा होने पर कपड़मिटटी और बड़ के पत्तों को दूर करके उस गोले को कपड़े में दबाकर उसका रस निकाल लेना चाहिये।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बेलि

नाम—हिन्दी—बेलि। बम्बई—रानलिंबू, नारिंगी। मराठी—कावट, नाई बेल, टांडशा। मारवाड़—कारा, केरी। छोटा नागपुर—बेलसियान। तामील—बिल्लूग्हामारम, कुरंगू। तेलगू—टोरेलेजा। उड़िया—भेंटा। लेटिन—Limonia Crenulata (लिमोनिया क्रेन्यूलेटा)।

वर्णन—यह एक छोटी जाति का झाड़ीनुमा वृक्ष होता है। इसके पत्ते २.५ से लेकर १० सेंटीमीटर तक लम्बे होते हैं। इसके फूल हर एक डंठल पर गुच्छे में लगते हैं। इसके फल छोटे २ और बहुत खट्टे होते हैं। यह वनस्पति पश्चिमी और दक्षिणी भारत, पंजाब, शिमला, कुमाऊं, बिहार, बंगाल और आसाम में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसके पत्ते मृगी रोग की एक उत्तम औषधि माने जाते हैं। इसकी जड़ विरेचक, पसीना लाने वाली और कालिक उदर शूल तथा हृदय शूल के अन्दर उपयोगी मानी जाती है। इसके सूखे फल पौष्टिक, आंतों के विक्षोभ को दूर करने वाले, चेचक के संक्रमण को रोकने वाले तथा हठीले और विनाशक ज्वरोंको रोकनेवाले होते हैं। इसमें अनेक प्रकारके विषोंको नष्ट करने के लिए चमत्कारिक गुण रहता है इस कार्य में यह वस्तु बहुत प्रसिद्ध है और अरब के तथा दूसरे देशों के व्यापारी एक व्यापारिक वस्तु की तरह इसका व्यापार करते हैं।

मलाबार में इसके छोटे फल पौष्टिक द्रव्य के रूप में बहुत लिए जाते हैं और इसका लाल रंग का लुआब सर्प विष और दूसरे जहरीले प्राणियों के विषों को दूर करने के लिए एक दर्पनाशक पदार्थ की तरह उपयोग में लिया जाता है।

महस्कर और केश के मतानुसार इसका फल सर्प विष का दर्पनाशक नहीं है।

बेफोल

नाम—संथाल—बेफोल। तेलगू—चेषटट्ट। लेटिन—Desmodium Polycarum (डेसोमोडियम पोलीकारम)। Hedysarum Purpuereum (हेडीसेरम परपूरिम)।

वर्णन—यह एक छोटी जाति की झाड़ीनुमा वनस्पति होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—संथाल जाति के लोग इस पौधे को मूर्छा और आक्षेप को दूर करने के काम में लेते हैं।

बेकरा

नाम—हिन्दी—बेकरा, भेकल, चेरारा, धातीला, झाटेला, कारंगा। पंजाब—बेइफुल, बेकली, भेकल, चंबा, गरांड्ड, गुरिडा, खारन बुरा, फुलवारा, अरुंद। गढ़वाल—भेकल। कुमाउं—भेकला, चिरारा। लेटिन—Prinsepia Utilis (प्रिंसेपिया यूटिलिस)।

वर्णन—गुण, दोष और प्रभाव—यह एक झाड़ी होती है। इसकी शाखाएं हरी और फूल सफेद होते हैं। इस वनस्पति में एक प्रकार का तेल रहता है। यह चर्मदाहक पदार्थ के रूपमें संधिवात और अधिक थकावट की वजह से होने वाले दर्द पर लगाने के काम में लिया जाता है।

बेदीना

नाम—संस्कृत—नागबल्ली, श्रीवती। हिन्दी—बेदीना, बेबिन। बम्बई—बेबना, भूतकेशा। मराठी—भूतकेश, लवसाद, सर्वाध। नेपाल—असारी। तामील—वेलाइ, इलाइ, वेलिमदनदाह। लेटिन—Mussaenda Frondosa (मुसेंडा फ्रोंडोसा)। M. Glabrata (मुसेंडा ग्लेवरेटा)।

वर्णन—यह एक पराश्रयी झाड़ी होती है। इस पर नारंगी रंग के तुर्रे आते हैं। इसके पत्ते और फूलों में बहुत लुआब रहता है। औषधि में इसकी जड़ और फूल काम में आते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—इस वनस्पति की जड़ की कफ नाशक और पौष्टिक तथा फूल मूत्रल, शोथ नाशक,

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

व्रण शोधक और चर्म रोग नाशक होते हैं। इसकी जड़ को ३ माशे से ६ माशे की मात्रा में पांडु रोग और श्वेत कुष्ठ में देते हैं। पीलिया में इसके २ तोला सफेद पत्तों को दूध के साथ देते हैं।

इण्डोचायना में इसके फूल मूत्रल और छाती के रोगों के लिये हितकारक माने जाते हैं तथा खांसी, दमा, पार्यायिक ज्वर और जलोदर में दिये जाते हैं। बाह्य प्रयोगों में व्रणों को शुद्ध करने के लिये इनका लेप किया जाता है।

बेरबंज

नाम—गढ़वाल—बेरवंज। हिन्दी—काहू, कान, कौ। फारसी—जैतून। उर्दू—जैतून। पंजाब—कान्न, काओ, कोहू। सिंध—खान, खाऊ। लेटिन—Olea Cuspidata (ओलिया कास्पिडेटा)।

वर्णन—यह एक हमेशा हरा रहने वाला मध्यम कद का वृक्ष होता है। इसकी छाल नवीन हालत में बहुत मुलायम और पुरानी हालत में सख्त और ऊबड़-खाबड़ हो जाती है। इसके फूल कुछ सफेद रंग के होते हैं। यह वृक्ष जैतून के वर्ग का होता है और उत्तरी पश्चिमी हिमालय तथा काश्मीर में दो हजार फीट से लेकर छः हजार फीट की ऊँचाई तक होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत—इसकी जड़ बिच्छू के डंक पर लगाने के लिए एक उत्तम वस्तु है। इसकी राख संधिवात और मस्तिष्क सम्बन्धी बीमारियों में काम आती है। इसका फल पौष्टिक, ऋतुस्राव नियामक, पित्त प्रकोप में लाभदायक, यकृत की शिकायतों को दूर करने वाला और गीली खुजली, प्यास, आँखों की जलन, दन्त शूल, इत्यादि रोगों में लाभदायक है। इसका तेल खराब स्वाद वाला, विरेचक, पौष्टिक और आंतों के दर्द, यकृत की शिकायतों, जोड़ों के दर्द, संधिवात, कटिवात और पुराने जखमों में उपयोगी होता है। इसके हरे फलों से प्राप्त किया हुआ तेल संकोचक और बुड्ढे लोगों के लिये उत्तम पौष्टिक वस्तु होता है।

लास बेला में इसके पत्ते सुजाक को दूर करने वाले माने जाते हैं और इसका गोंद नेत्र रोगों के अन्दर उपयोगी समझा जाता है।

इसके फलों से निकाला हुआ तेल चर्म दाहक होता है। इसके पत्ते कड़वे और संकोचक होते हैं और बुखार तथा कमजोरी में पार्यायिक ज्वर नाशक औषधि की तरह इनका उपयोग किया जाता है।

बेदमुश्क

नाम—संस्कृत—पिठिका। हिन्दी—वेद मुश्क। पंजाब—वेद मुश्क। उर्दू—वेद मुश्क। फारसी—विद-इ-बलखी। अरबी—खिलाफ। लेटिन—Salix Caprea (सेलिक्स केप्रिया)।

वर्णन—यह एक छोटी जाति का १५ से २० फुट तक ऊंचा वृक्ष होता है। इसके पत्ते गहरे हरे, बड़े, लम्बे, गोल, चिकने, नोकदार और कंगूरे वाले होते हैं तथा फल पीले और सुगन्धित होते हैं एवं पत्तों के पहिले आते हैं। रुहेल खण्ड में इस वनस्पति की खेती होती है और भारत के उत्तर और पश्चिम में भी पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसका पौधा तीक्ष्ण और कटु स्वादवाला एवं मस्तिष्क के लिये शीतल होता है। यकृत की सूजन और यकृत् में भी यह उपयोगी होता है। प्यास, पित्त प्रकोप और मस्तक शूल में यह बहुत लाभ पहुँचाता है। यह कामोद्दीपक भी होता है। इसके पत्तों का रस संकोचक, कफ निस्सारक, मृदु विरेचक, ज्वर में लाभदायक और शरीर के कंपन को दूर करने वाला होता है। स्नायु शूल, नेत्र रोग, तिल्ली की वृद्धि इन सब रोगों में यह काम आता है। इसका फल पित्त प्रकोप और चोट लगने की वजह से हुई आंखों की सूजन में लाभ पहुँचाता है। परसिया से आने वाले लोगों ने भारतवर्ष में इस वनस्पति के फूल और इसके अर्क का प्रचार किया। उसके पश्चात् मुसलमान और फारसी लोगोंने इसका उपयोग करना आरम्भ किया। वे लोग इसकी मस्तक सम्बन्धी और हृदय सम्बन्धी रोगों एवं हर प्रकार की अस्वस्थता में एक घरेलू औषधि की तरह उपयोग में लेते हैं। रोगन बेदमुश्क इसके बाष्पीकरण से पैदा किया जाता है और खाँसी के लिए यह एक उत्तम औषधि मानी जाती। इसके पत्तों का काढ़ा ज्वर के अन्दर उपयोगी समझा जाता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

डायमॉक के मतानुसार वेदमुश्क के उड़ाये हुये अर्क की औषधि के बतौर बहुत प्रशंसा है। यह अग्निदीपक, उत्तेजक और कामोद्दीपक होता है। मस्तकशूल और नेत्र रोगों पर इसका बाहरी लेप किया जाता है। इसकी लकड़ी की राख कफ के साथ खून जाने की बीमारी में लाभदायक होती है। इसको सिरके के साथ मिलाकर खूनी बवासीर के ऊपर लगाया जाता है। इसकी डालियाँ और पत्ते संकोचक होते हैं और इनका रस तथा गोंद नेत्रों की ज्योति बढ़ाने के लिए काम में लिया जाता है।

डॉक्टर देसाई के मतानुसार वेदमुश्क की छाल संकोचक, शीतल, ज्वर नाशक और जलन को शांत करने वाली होती है और इसके फूल रोचक होते हैं इसकी छाल का काढ़ा विषम ज्वर, पित्तज्वर, नवीन आमवात और कफ क्षय में देते है। इसको देने से ज्वर के अन्दर होने वाली अन्तर्दाह और सिर दर्द कम होता है। कफक्षय रोग में इसको देने से फेफड़े से होने वाला रक्तस्राव कम हो जाता है। संधिवात में इसको देने से संधियों की सूजन और उनकी वेदना शान्त हो जाती है। साधारण ज्वर में तथा अजीर्णरोग में इसके फूलों का अर्क भूख बढ़ाने के लिये देते हैं। इसके ४ भाग फूलों के अर्क को १ भाग तिल्ली के ताजे तेल में मिलाकर हलकी आंच पर औटाने पर जब पानी का भाग जल जाय तब उस तेल को छानकर खांसी और कफ क्षत में देते हैं। हृदय की धड़कन को मिटाने के लिये भी इसके फूलों का अर्क एक उपयुक्त वस्तु है। नेत्राभिष्यंद और सिर दर्द में भी यह फूल लाभदायक है। इसकी लकड़ी की राख फेंफड़े के रक्तस्राव को मिटाने के लिये दी जाती है। इसको सिरके में मिलाकर बवासीर के ऊपर लेप करते हैं।

बेंगन

नाम—संस्कृत—अंगना, वेरा, भंटाकी, चित्रफला, दीर्घवार्ताकी, हिंगुली, कंटालू, कण्टपत्रिका, बेंगना, वर्तका, वार्ताकु, वृतफला, इत्यादि,। हिन्दी—बेंगन, बेगुन, भट्ठा, बादजान। बंगाल—बार्ताकु, बेगुन, बोंग, कुली बेगुन, हिनपोली, महोटी। बम्बई—बेगन, बेंगन। मध्यप्रान्त—बन भट्टा। गुजराती—रींगणा, रीगणी, बेंगनी। मराठी—वांगी। तामील—अचेटी। तेलगू—हिंगुदी। उर्दू—बेंगन। अरबी—बादंजान, कहकाव। इंग्लिश—Brinjal, Eggplant। लेटिन—Solanum, melongena (सोलेनम मेलोंगेना)।

वर्णन—बेंगन तरकारी के काम में सारे भारतवर्ष के उपयोग में आता है इसलिये इसके विशेष वर्णन की आवश्यकता नहीं।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत—भाव प्रकाश के मतानुसार बेंगन, स्वादिष्ट, तीक्ष्ण, गरम, पाक में कड़ुवा, वात, कफ नाशक, ज्वर को निकालने वाला, अग्निदीपक, वीर्यवर्धक और हलका होता है। कच्चा बैगन कफ पित्त नाशक होता है। पका हुआ बेंगन पित कारक और भारी होता है। अंगारों पर भुना हुआ बेंगन कुछ पित्त कारक तथा कफ, मेद और वातको नष्ट करने वाला, अत्यंत हलका और अग्निदीपक होता है। सफेद रंग का बेंगन बवासीर वाले मनुष्य के लिये विशेष हितकारी होता है।

राजनिघण्टु के मतानुसार बेंगन कड़ुआ, रुचिकारक, मधुर, पित्त नाशक, बलकारक, कमोद्दीपक, हृदय को हितकारी, पचने में भारी और वात रोगों में हानिकारक होता है।

बेंगन की जड़ चरपरी, कड़वी, गरम, अग्निवर्धक, आँतों के लिये संकोचक और कृमिनाशक होती है। यह मुंह की गंदगी को दूर करने वाली, हृदय की तकलीफों में लाभदायक और श्वेत कुष्ठ, ज्वर, दमा, ब्रोंकाइटीज, वमन तथा एक प्रकार की खुजली (Pruritus) में उपयोगी है। इसका फल कड़वा, चरपरा, कृमिनाशक और खुजली, श्वेकुष्ठ, ब्रोंकाइटीज, वात, कफ, दमा, ज्वर, वमन, शक्तिहीनता और नेत्र रोगों में लाभदायक है। इसकी जड़ अन्तःप्रयोग में लेने पर प्रत्यक्ष रूप से अपना उत्तेजक प्रभाव दिखलाती है। यह कष्ट प्रसूति और दन्तशूल में उपयोग में ली जाती है। यह ज्वर, कृमिजन्य शिकायतों और काँलिक उदरशूल में लाभदायक होती है। एक कफ निस्सारक द्रव्य की तरह यह खांसी और जुखाम में दी जाती है। पेशाब के समय होने वाली पीड़ा को दूर करने के लिये इसके रस या निर्यास को दिन में दो बार देते हैं। वमन को रोकने के लिये इसके पत्तों के रस को अदरख के ताजा रस के साथ देते हैं। इसके पत्तों और फलों को कुचल कर उसमें शक्कर मिलाकर खुजली पर लगाने के काम में लेते हैं।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

कोमान का कहना है कि इसकी जड़ का काढ़ा ब्रोंकाइटीज के रोगियों को जिनको ज्वर भी था, दिया गया मगर उससे कोई लाभ नहीं हुआ।

चरक, सुश्रुत और वाग्भट के मतानुसार इसकी जड़ और फल सर्प और बिच्छू के उपयोग में लिये जाते हैं। केस और मश्कर के मतानुसार सांप और बिच्छू के विष में यह बिलकुल निरुपयोगी है।

उपयोग—अनिद्रा—बेंगन के भुरते के रस में शहद मिलाकर पिलाने से नींद आ जाती है।

आंख का जाला—बेंगन की जड़ को पानी के साथ पीसकर आँख में आँजने से आँख का जाला कट जाता है।

धतूरे का विष—बेंगन के टुकड़ों को पानी में मसल कर उस पानी को पिलाने से धतूरे का विष उतर जाता है।

बेदाना

नाम—हिन्दी—फारसी—बेदाना। पंजाब—चाचर। उर्दू—अम्बर। अरबी—अम्बर बेरिस। लेटिन—Berberis Petiolaris, B. Vulgaris (बरबेरिस पेटियोलेरिस, ब० ह्लगेरिस)।

वर्णन—यह दारुहल्दी के वर्ग की एक वनस्पति होती है जो काश्मीर से लेकर नेपाल तक १२ हजार फीट की ऊँचाई तक पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—यूनानी मत— यूनानी मत से इसकी जड़ शीतल, पौष्टिक, पित्तनाशक और विरेचक होती है। मस्तिष्क सम्बन्धी बीमारियों में, खांसी, अर्द्धाङ्ग, लकवा, संधिवात और आधा शीशी में यह लाभदायक होती है।

पंजाब में इसकी जड़ की छाल एक मूत्रल पदार्थ की तरह उपयोग में ली जाती है। गरमी और प्यास को शांत करने के लिये तथा वमन प्रवृत्ति और जी मिचलाने को बन्द करने के लिये इसका उपयोग किया जाता है। यह संकोचक, तृषानाशक, ज्वर और पित्त को नष्ट करने वालो होती है। छोटी मात्रा में यह पौष्टिक और बड़ी मात्रा में विरेचक होती है। इसका काढ़ा अरुण ज्वर (Sclarat Fever) और मस्तिष्क सम्बन्धी विकृति में लाभदायक होता है।

बलूचिस्तान में इसकी जड़ को पानी के साथ उबालकर अन्तरंग चोट के दर्द को दूर करने के लिये पिलाते हैं।

बेलीपाता

नाम—बम्बई—बेलीपाता। बंगाल—बोला, चेलवा,। संस्कृत—बेला। तामील—निरष्यरुत्ती। तेलगू—इट्टागोबू। उड़िया—बेनिया। लेटिन—Hibiscus Tiliaceus (हिबिस्कस टिलियासेस)।

वर्णन—यह एक वृक्ष होता है। इसके पत्ते १० से लेकर १२.५ सेंटिमीटर तक लम्बे होते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—इसकी जड़ ज्वरनाशक होती है और मालिस तथा लेप करने की औषधियों में मिलाई जाती है।

फिलोपाइन में इसकी छाल का चूर्ण वामक द्रव्य की तरह दिया जाता है और पत्तों का निर्यास वृक्ष और जख्म को धोने के काम में लिया जाता है। कर्णशूल को मिटाने के लिये इसके फूलों को दूध में उबालकर कान में डालते हैं। त्वचा की शिथिलता को मिटाने के लिये ताजे फल का पीला रस त्वचा के ऊपर रगड़ा जाता है।

इंडोचायना में इसके पत्ते मृदुविरेचक और व्रण को भरने वाली औषधि की तरह काम में लेते हैं।

बेंदरली

नाम—मद्रास—बेंदरली। लेटिन—Lycopodium Clavatum (लिकोपोडियम क्लेवेटम)।

गुण, दोष और प्रभाव—कर्नल चोपरा के मत से यह वनस्पति मूत्रल, शान्तिदायक, कृमिनाशक और ऋतुस्राव नियामक होती है एवं संधिवात और फुफ्फुस सम्बन्धी खराबियों को दूर करती है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बेतिर

नाम--पंजाब—बेतिर, बंतर, थैलू, पुलु। सीमा प्रदेश—चेतिर, बिदेलगंज, बिल, गुग्गुल, थैलू। लेटिन—JuniPerus Recurva (जूनिपेरस रिकरवा)।

वर्णन—यह एक झाड़ीनुमा वनस्पति होती है। इसके पत्ते बरछी आकार के होते हैं और फल लंबे, गोल तथा गहरे बादामी रंग के होते हैं। ये पकने पर चमकने लग जाते हैं। इन में हर एक में एकबीज रहता है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसकी हरी लकड़ी का धुआँ तेज, वमन कारक होता है। इसके कारण से पैदा हुए वमन बहुत समय तक स्थायी रहते हैं।

बेलेडोना ❀

नाम--संस्कृत--प्राणनाशक, विष, द्राक्षाफला, निशाच्छायाप्रिया, कनीनिकाप्रसारक, युवतिश्रृङ्गार, कृष्णफला, करमर्दफला। हिन्दी—बेलेडोना, अंगूरशेफा, बुकभुना, लुकभुनी, संगअंगूर। बंगाल—येबरुज। बम्बई—गिरबूंटी। पंजाब—सूचि। फारसी—रुबाहतरबक। अरबी—उस्तसंग। इङ्गलिश—Belladonna Black Cherry। लेटिन – Atropa Belladonna (एट्रोपा बेलेडोना)।

वर्णन—इस वनस्पति का विषैला क्षुप हिमालय, काश्मीर, शिमला, कुमाऊँ, नैनीताल इत्यादि स्थानों में ६ हजार से १२ हजार फीट की ऊँचाई तक होता है। इसकी ऊँचाई ४ से ५ फुट तक होती है। इसके पत्ते अखण्ड, छोटे डण्ठल वाले और आमने सामने लगते हैं, फूल किरमची झांई लिये हुए हरे होते हैं और फल करोंदे के समान काले मगर उनसे कुछ बड़े होते हैं। इसकी जड़ करीब १ फुट लम्बी, एक दो इंच मोटी और मांसल होती है। इसकी जड़ की छाल फीकी और ऊदी रङ्ग की होती है। इसकी जड़ की रुचि तीखी होती मगर उसमें कोई गन्ध नहीं होती हैं। औषधि प्रयोग में इसके हरे या सूखे पत्ते काम में आते हैं। फूल आने के साथ ही पत्ते तोड़ लिये जाते हैं और उनका या तो अर्क निकाल लिया जाता या वे जल्दी से हवा में सुखा लिये जाते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—बेलडोना एक घातक विष होता है मगर सावधानी के साथ बहुत थोड़ी मात्रा में इसका उपयोग करने से यह अमृत के तुल्य काम करता है। इसमें अवसादक, संकोच विकास प्रतिबन्धक, श्वास कास नाशक, रक्त प्रतिबन्धक, मूत्रल, दुग्धनाशक, वेदनानाशक और हृदय को बल देने वाले धर्म मौजूद रहते हैं। इसके लेप से त्वचा में जड़ता पैदा होती है। यह वृद्ध मनुष्यों के लिये उपयोगी नहीं होता। बच्चों के लिये बहुत अच्छा रहता है। इस औषधि को बहुत छोटे प्रमाण देना चाहिये।

बेलेडोना और हृदय रोग—हृदयरोग के अन्दर इस औषधि का बहुत उपयोग होता है। हृदय के बाएं अधर पुट की गति को धीमी करने और उसी समय नाड़ी की गति को शिथिल करने की जब जरूरत पड़ती है। तब यह औषधि बहुत मूल्यवान साबित होती है। इससे बिना हृदय की शक्ति कम हुए इच्छित कार्य सिद्ध हो जाता है। यह हृदय को बल देने वाली दूसरी औषधियों के साथ भी दी जाती है। इससे हृदय के दोनों ही अधरपुटों की गति व्यवस्थित और धीमी हो जाती है। नाड़ी की तीव्रता कम होकर उसमें शिथिलता पैदा हो जाती है और हृदय का फूलना बन्द हो जाता है। हृदय रोगों में बेलेडोमा पेट में दिया जाता है। और इसकी जड़ को उबाल कर हृदय पर लेप किया जाता है। हृदय की पीड़ा, तेज धड़कन आदि अव्यवस्थाओं को नष्ट करने के लिये यह औषधि अफीम की अपेक्षा श्रेष्ठ है, लेकिन पीड़ा बहुत अधिक होने पर इसको अफीम के साथ मिलाकर दिया जा सकता है। हृदय के ऊपर इस औषधि की क्रिया बिलकुल स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है।

❀ **नोट**—इस वनस्पति का वर्णन अंगूर शेफा के नाम से इस ग्रन्थ के पहिले भाग में संक्षिप्त दिया गया है मगर इसका कुछ विशेष वर्णन प्राप्त होने के कारण यहां पर फिर से इसका वर्णन दिया जाता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बेलडोना और फुफ्फुस सम्बन्धी रोग—फुफ्फुस के रोगों में बेलडोना बहुत ही गुणकारी वस्तु है। श्वासनलिका के संकोच विकास को कम करने के लिये यह बहुत उपयोगी होता है। दमा, श्वास नलिका की सूजन और विशेष कर कुक्कुर खांसी को कम करने के लिये इसका उपयोग किया जाता है। इससे खांसी की त्रास और घबड़ाहट कम होती है। और इस कार्य के लिये यह अफीम की अपेक्षा बहुत श्रेष्ठ औषधि है। अफीम से खांसी का त्रास जरूर कम होता है, मगर उससे श्वासोच्छ्वास के केन्द्र स्थान में बहुत अशक्तता पैदा हो जाती है और कफ पड़ना कम हो जाता है, मगर बेलेडोना से श्वासोच्छ्वास के केन्द्र स्थान को उत्तेजना मिलती है, उसकी शक्ति बढ़ती है और खांसी का त्रास कम होने पर भी कफ पड़ने में कभी नहीं होती। कफ रोगों में जब कफ अधिक बढ़ गया हो, खांसने की शक्ति कम हो गई हो और हृदय अशक्त हो गया हो उस समय इस औषधि को देना बहुत लाभदायक होता हे।

बेलेडोना के प्रयोग से शरीर में पैदा होने वाले इन तत्वों की कमी हो जाती है। गरादर रोग में व कुछ मस्तिष्क सम्बन्धी रोगों में जब लार बहुत छूटती है तब इसको देते हैं। ज्वर में अथवा क्षय रोग में जब पसीना बहुत होता है तब उसको बन्द करने के लिये बेलेडोना को अकेले अथवा जस्त भस्म के साथ देने से पसीना छूटना बन्द हो जाता है। दूध बन्द करने के लिये अथवा दूध से उत्पन्न हुई स्तनों की सूजन को दूर करने के लिये यह बहुत उत्तम औषधि है। आमाशय के अन्दर जब अम्लरस अधिक पैदा होकर पाचन क्रिया में गड़बड़ी पैदा करता है तब बेलेडोना का उपयोग करने से लाभ होता है।

आंतों के रोगों में भी बेलेडोना का कभी २ उपयोग किया जाता है। इससे आंतों की क्रिया शक्ति बढ़ती है। मरोड़ों की कमी होती है, उदय शूल बन्द हो जाता है और कब्जियत नहीं होती। अतिसार में कफ को कम करने के लिये इसको देते हैं। पुरानी कब्जियत को मिटाने के लिये इसको एलुए के साथ देते हैं। जिस से मल विसर्जन करने वाली आंतों को उत्तेजना मिलती है।

बेलेडोना में रहने वाले तत्व पेशाब के मार्ग से बाहर निकलते हैं। बाहर निकलते समय ये पेसाब की तादाद को बढ़ा देते हैं, जिससे मूत्र मार्ग की वेदना और संकोच विकास की कमी होती है। फिर भी सिर्फ मूत्रल औषधि की तरह इसका उपयोम नहीं किया जाता। मूत्रेन्द्रिय को पीड़ा, स्वप्नदोष, मूत्रघात, नींद में मूत्र होना, वस्ति शोथ, कफ प्रमेह, गर्भाशय की पीड़ा, इत्यादि रोगों में बेलेडोना का भीतरी और बाहरी दोनों प्रकार से प्रयोग किया जाता है।

बेलेडोना और मस्तिष्क रोग—मस्तिष्क के उपर बेलेडोना की अवसादक क्रिया होती है। इसलिये जिन रोगों में मस्तिष्क की उत्तेजना को कम करके उसको शान्त करने की आवश्यकता होती है उसमें इसका प्रयोग किया जाता है। ज्वर के अन्दर वायु कुपित होकर सन्निपात के जैसे लक्षण हो जाते हैं तब इसका प्रयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त उन्माद, शराबखोरी से होने वाली अस्वस्थता, कंपवात और आधा शीशी रोग में भी इसका कभी २ उपयोग होता है। अफीम के विष को उतारने के लिये भी बेलेडोना का प्रयोग होता है।

बेलेडोना के बाह्य प्रयोग—अंतः प्रयोग की तरह बाह्य प्रयोग में बेलेडोना एक प्रभावशाली बस्तु है। इससे तैयार किया हुआ प्लास्टर, फोड़े फुन्सी, गठान, कण्ठमाला की गठानें, दूध की वजह से हुई स्तनों की सूजन, संधियों की सूजन इत्यादि रोगों पर लगाने से पीव की कमी हो जाती है अथवा कभी २ पीव पैदा ही नहीं होता। पीव और रक्त को प्रतिबन्ध करनेका इसका धर्म बहुत उत्तम है। आमवात, संधियों की सूजन इत्यादि रोगों में बेलेडोना प्लास्टर लगाने से सूजन को कम कर देता है और उसकी वेदना को मी रोक देता है। सूखे चर्म रोगों में इसका लेप करने से खुजली की कमी हो जाती है।

रासायनिक विश्लेषण--बेलेडोना के ताजे पत्तों में एट्रोवीन और हायोसायमीन नामक दो प्रकार के जहरीले द्रव्य पाये जाते हैं, मगर, पत्ते सूख जाने पर उसमें एक ही विषैला द्रव्य रह जाता है और दूसरा बहुत अंश में नष्ट हो जाता है। इसकी छोटीर जड़ों में सिर्फ एट्रोपीन ही रहता है और पुरानी जड़ों में एट्रोपीन के साथ

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

बहुत थोड़ी मात्रा में रहता है। इसमें पाया जाने वाला एट्रोपीन धतूरे में पाये जाने वाले विषैले द्रव्य धतूरीन के समान ही होता है। एक वर्ष के पौधे की जड़ में '४ प्रतिशत और २ वर्ष के पौधे की जड़ में '४५ प्रतिशत विष रहता है।

बेलेडोना की प्रतिक्रिया—बेलेडोना को अधिक मात्रा में खाने से उसके विषैले असर मनुष्य के शरीर में पैदा होते हैं, जिससे गले में खुश्की आती है, आवाज बैठ जाती है, आँखों की पुतलियां फैल जाती हैं, दृष्टि कमजोर हो जाती है, आदमी बकने लगता है और अन्त में वह बेहोश हो जाता है। इसके विष को दूर करने के लिये वही उपाय करना चाहिए जो धतूरे के विष को उतारने के लिये किया जाता है।

मात्रा—सूखे पत्तों के चूर्ण की पाव रत्ती से आधी रत्ती तक है।

बेर

नाम—संस्कृत—बदरी, अजाप्रिया, बालेष्टा, दीर्घबीजा, द्विपर्णी, कंटकी, राजबद्री, फलाशयशिरा, सूक्ष्मपत्रिका, शृगालकोली, इत्यादि। हिन्दी—बैर, बेर, बेरी। बंगाल—बोगरी। बांबे—बोर, बोरड़ी। गुजराती—बेर, बोर, बोरड़ी। मराठी—बेर, बेरा, भोर, बोर, बोरा। काठियावाड़—बोरड़ी। तामील—अड्डीडारम, बेदारी। तेलगू—बद्रामू, बद्री, गंगेरनु। उर्दू—बेर। अरबी—उन्नाबहिन्दी, नाबिग। फारसी—कनार नाबिक। इंगलिश—Indian Cherry, Indian Jujuba लेटिन—*Zizyphus Jujuba* (झिझीफस जुजुबा)।

वर्णन—यह एक मध्यम आकार का कांटेदार वृक्ष होता है। इसके पत्ते गोल, अंडाकार और ३ से लेकर ६'३ सेंटिमीटर तक लंबे और २'५ से लेकर ५ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं इसकी छाल कालापन लिये हुए भूरे रंग की, खरदरी और उबड़-खाबड़ होती है। इसकी शाखाओं पर बहुत तेज कांटे होते हैं। इसका फल गोल और अण्डाकृति की तरह होता है। प्रारम्भ में हरा, आधा पकने पर पीला और पूरा पकने पर लाल हो जाता है। बनारस के समीप रामनगर का बेर हिन्दुस्तान में सब से अच्छा होता है और यह वृक्ष हिन्दुस्तान में सब जगह पैदा होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से बेर की जड़ कड़वी और ठंडी होती है। यह कफ, पित्त विकार और मस्तकशूल में लाभदायक होती है। इसकी छाल बालतोड़ और स्फोटक व्रण को अच्छा करती है और रक्तातिसार तथा प्रवाहिका में लाभ पहुँचाती है। इसके पत्ते कड़वे और शीतल होते हैं, ये कफ, पित्त और अतिसार को दूर करते हैं। ये ज्वर नाशक और शरीर के मोटेपन को दूर करने वाले होते हैं। इसके पके हुए फल (सौबीर बेर) ठंढे, पचने में कठिन, कामोद्दीपक, पौष्टिक, मृदुविरेचक, ओज बढ़ाने वाले और पित्तनाशक होते हैं तथा शरीर की दाह, प्यास, वमन, रक्त रोग एवं क्षय रोग में लाभदायक होते हैं।

इसकी छोटी जाति (कोलबेर) खट्टी, स्वादिष्ट, मृदुविरेचक, वात और कफ को दूर करने वाली तथा शरीर में जलन पैदा करने वाली होती है।

इसकी एक और सबसे छोटी जाति (कर्कन्धू) खट्टी, कसैली, मीठी, कड़वी, तेल युक्त, पचने में भारी और वात तथा पित्त को दूर करने वाली होती है। इसका कच्चा फल वात को दूर करता है और कफ को पैदा करता है। इसका सूखा फल मृदुविरेचक, रक्त को साफ करने वाला और प्यास को दूर करने वाला होता है।

इसके बीज कसैले, कुछ मीठे, पौष्टिक, कामोद्दीपक, नेत्र रोगों को दूर करने वाले और कफ, दमा, प्यास, वात के वमन, शरीर की दाह, पित्त और श्वेत प्रदर में लाभ पहुँचाने वाले होते हैं।

बेर की मगज कसैली, मधुर, वीर्यवर्धक, कामोद्दीपक, तथा खांसी, श्वास, वात, वमन, तृषा, दाह और पित्त को दूर करती है।

बेर के पत्तों का लेप ज्वर और दाह को दूर करता है। इसकी छाल फोड़े को दूर करती है तथा इसकी गुठली की मगज नेत्र की पीड़ा को दूर करती है।

यूनानी मत—यूनानी मत से बेर की जड़ और छाल पौष्टिक होती है। इसके पत्ते कृमिनाशक, मुखशोथको

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

दूर करने वाले, मसूड़े से बहने वाले खून को रोकने वाले, जखम और उपदंश जनित व्रणों को भरने वाले, दमे को दूर करने वाले और यकृत की शिकायतों में लाभदायक होते हैं। इसके फूलों से १ उत्तम अंजन तैयार किया जाता है जो नेत्र रोगों में बड़ा लाभदायक होता है। इसका कच्चा फल प्यास को बढ़ाता है, कफ और पित्त को कम करता है और पित्तविकार और कफ के गिरने को कम करता है। इसका पका हुआ फल मीठा, खट्टा और पचने में भारी होता है। यह बड़ी मात्रा में अतिसार और प्रवाहिका रोग को पैदा कर देता है। ज्वर, जखम और व्रणोंमें यह बहुत उपयोगी है। इसके बीज संकोचक, पौष्टिक, हृदय तथा मस्तिष्क को शक्ति देने वाले और प्यास को दूर करने वाले होते हैं। इसके फल छाती के रोगों को दूर करने वाले और रक्तस्रावरोधक होते हैं। ये रक्त को शुद्ध करने के लिये दिये जाते हैं। इसकी छाल प्रवाहिका, अतिसार की एक औषधि मानी जाती है और जड़ काढ़े के रूप में ज्वर को दूर करने के लिये दी जाती है। इसकी जड़ का चूर्ण व्रण और पुराने जख्मों को दूर करने के काम में लिया जाता है, पत्ते प्लास्टर के रूप में पथरी को दूर करने के लिये दिये जाते हैं।

इसके नवीन पत्तों को गूलर के साथ कुचल कर बिच्छू के विष पर लगाया जाता है।

कंबोडिया में इसकी छाल एक संकोचक पदार्थ की तरह मसूड़ों की सूजन और रक्तातिसार में दी जाती है, पत्ते नेत्र रोगों में उपयोग में लिये जाते हैं और ज्वर नाशक स्नान और लोशन्स में भी डाले जाते हैं।

ईब्हर्स ने सन् १८७५ के अक्टूबर मास के इंडियन मेडिकल गजट में लिखा था कि मैंने बेर की जड़ को एक ज्वर नाशक पदार्थ की तरह उपयोग में लिया, मगर इसका असर बहुत ही मंदगति से हुआ। १७ बीमारों पर इसकी जड़ के क्वाथ से उपचार करना प्रारंभ किया गया। मगर ७-८ दिन तक लगातार देने पर भी यह औषधि ज्वर के सामयिक आक्रमण को न रोक सकी। मैं ख्याल करता हूँ कि इस औषधि में पार्यायिक ज्वरों को निवारण करने वाले तत्वों की अपेक्षा पौष्टिक तत्व ही अधिक रहते हैं।

उपयोग—पित्त विकार—बेर की गुठली की मगज का चूर्ण खिलाने से पित्त सम्बन्धी रोग मिटते हैं।

जी मिचलाना—बेर की मगज को लौंग के साथ मिश्री की चाशनीमें मिलाकर चटाने से खाली मतली और जी मिचलाना मिटता है।

ज्वर की तृषा—ज्वर में पित्त की तृषा को मिटाने के लिये इसकी मगज और मुलेठी का चूर्ण करके थोड़ा-२ मुंह में डालते रहना चाहिये।

पित्त ज्वर—धूप में सुखाये हुए बेर की जड़ को पानी में औटा कर उस पानी को पिलाने से पित्त ज्वर में लाभ होता है।

अतिसार—इसकी छाल का काढ़ा बनाकर पिलाने से अतिसार मिटता है। ज्वर मिटाने के लिये भी इसकी छाल का काढ़ा पिलाना चाहिये।

प्रलाप—ब्राह्मी के साथ इसकी जड़ की छाल का क्वाथ बनाकर पिलाने से प्रलाप मिटता है।

क्षत और फोड़े—पुराने क्षत और फोड़ोंपर इसकी छाल का चूर्ण भुरभुराने से लाभ होता है।

मूत्र पीड़ा—इसके पत्तों को पीसकर पेड़ू पर लगाने से पेशाब में होने वाली जलन और पीड़ा दूर हो जाती है।

बिच्छू का विष—गूलर और बेर के कोमल पत्तों को पीसकर लेप करने से बिच्छू का विष उतर जाता है।

दुष्ट व्रण—कारबंकल, विद्रधि और दूसरे फोड़ों को जल्दी पकाने के लिये बेर के कोमल पत्ते और कोमल डालियों को पीस कर गरम करके लेप करना चाहिये।

मुंह के छाले—बेर और बबूल की जड़ की छाल का हिमनिर्यास या क्वाथ बनाकर उससे कुल्ले करने से उपदंश या रस कपूर की वजह से अथवा और किसी भी वजह से होनेवाले मुंह के छाले मिट जाते हैं।

नकसीर—बेर के पत्तों को पीसकर कनपटी पर लेप करने से नक्सीर बंद होती है।

स्वरभंग—बेर के पत्तों की लुग्दी में सेंधा नमक मिलाकर उस लुग्दी को घी में तलकर खिलाने से स्वर-भंग, श्वास तथा खांसी मिटती है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

कुक्कुर खांसी—बेर के पत्तों पर मैंसल का लेप करके उनको धूप में सुखा लेना चाहिये। फिर उनको दूध में भिगोकर चिलम में रखकर उनका धूम्रपान करने से खांसी में लाभ होता है।

नासूर—बेर के पत्ते और नीम के पत्तों को पीसकर नासूर में भरने से नासूर मिट जाता है।

वीर्य की कमजोरी—बेर की गुठली की मगज को गुड़ के साथ मिलाकर खाने से वीर्य की कमजोरी मिटती है और वीर्य पुष्ट होता है।

अग्निदग्ध—इसकी कोमल कोंपोलों को दही के साथ पीसकर कई बार लगाने से अग्निजले का दाग मिटता है।

मसूरिका—बेर की गुठली के छिलके को पीसकर गुड़ में मिलाकर खाने से सब प्रकार की मसूरिका पक जाती है।

बैंत

नाम—इस वनस्पति का वर्णन दीर्घपत्रक के नाम से इस ग्रंथ के पाँचवें भाग में दिया गया है।

बौरीफल

नाम—नेपाल—बौरीफल, छलेगाच। आसाम—गँडेलीपोमा, बोसनिया पोमा। लेटिन—Dysoxylum Hamiltonii, Guarea Alliaria (डसोक्सिलम हेमिल्टोनी, गोरिया एलियेरिया)।

वर्णन—यह एक बड़ी जाति का वृक्ष होता है। इसके नवीन पत्ते मखमली होते हैं और ४' से लेकर ५' सेंटिमीटर तक लम्बे होते हैं। इसके फूल हरापन लिये हुए सफेद होते हैं। इसकी गन्ध बहुत तीव्र होती है। यह वनस्पति सिकिम, आसाम और सिलहट में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—लखीमपुर-आसाम में इसकी जड़ उदरशूल को दूर करने के लिये पिलाई जाती है।

बोकड़ी

नाम—संस्कृत—अजांत्री, छगलांत्री, मेषांत्री, वृषपत्रिका। हिन्दी—बोकड़ी। गुजराती—पुंगलबेल। मराठी—पुंगड़ी। बंगाल—छागला बेटें। तेलगू—गाड़िद गड़पर। लेटिन—Convolvulus Argentens (कनवोलवलस अर्जेंटन्स)।

वर्णन—यह वनस्पति विशेषकर बंगालमें पैदा होती है। इसका पौधा गुच्छे के समान होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसके सेवन से पुरुष का वीर्य बढ़ता है और स्त्रियों का बंध्यात्व नष्ट होता है। यह चरपरी होती है। इसको खाने से खांसी में लाभ होता है।

भंडा

नाम—पंजाब—भंड, भांड, भंडा। लेटिन—Geranium Nepalense (जेरेनियम नेपलेंस)।

वर्णन—यह वनस्पति, हिमालय के मध्यवर्ती भाग में तथा पारसनाथ, बिहार, नीलगिरी और सीलोन में पैदा होती है। यह वर्षजीवी और रुएंदार होती है, जड़ें बहुत लाल रङ्ग की होती हैं और वे ही औषधि प्रयोग में काम में आती हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—यह पौधा संकोचक और मूत्रल होता है। पंजाब में यह गुर्दे की कुछ खास बीमारियों मे काम में लिया जाता है।

भद्रक

नाम—बम्बई—भद्रक। मराठी—भद्रक,भद्राक्ष। तामील—वेली मुट्टागाम। लेटिन—Scaevola Frutescens (स्केइव्होला फ्रूटेसीन्स)।

वर्णन-यह एक झाड़ीनुमा पौधा होता है। इस पौधे की ऊँचाई १ से लेकर ३ मीटर तक की होती है। पत्ते ११·५ से लेकर २० सेंटीमीटर तक लम्बे और ३—८ से लेकर ६ सेंटिमीटर तक चौड़े होते हैं। इनके पीछे की

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

तरफ सफेद रङ्ग का रुआं होता है। इसके फूल सफेद होते हैं। यह वनस्पति भारत वर्ष के समुद्री किनारों पर पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसके छोटे २ फलों का रस आँखों का धुंधलापन नष्ट करने के लिये और दृष्टि की मन्दता को दूर करने के लिये आँखों में बूंद २ करके टपकाया जाता है।

भद्रदन्ती

नाम—संस्कृत—भद्रदन्ती। अंग्रेजी—Small physic Nut (स्माल फिजिक नट)। तामील—कदुनेर-बेलम। लेटिन—Jatropha Multifida (जट्रोफा मल्टिफिडा)।

वर्णन—यह वनस्पति दन्ती के वर्ग की किन्तु उससे कुछ छोटी होती है। इसका पौधा बहुत सुन्दर, झाड़ीनुमा और बगीचों में लगाने के काबिल होता है। बहुत से बगीचों में यह लगाई जाती है।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत से इसका फल चरपरा, गरम और विरेचक होता है। यह बवासीर, जखम, तिल्ली की वृद्धि और चर्म रोगों में उपयोगी होता है। इसके बीज कुछ मीठापन लिये हुए तेल युक्त, विरेचक, कामोद्दीपक, पौष्टिक और मोटापन को दूर करने वाले होते हैं। कफ और पित्त को बढ़ाने वाले, वामक तथा दाह को पैदा करने वाले होते हैं। इसके बीज जोरदार विरेचक होते हैं।

कंबोड़िया में इसके पत्ते, इसका दूधिया रस और इसके बीजों का तेल औषधि के उपयोग में लिया जाता है। इसके पत्ते गीली खुजलीपर उपयोग में लिये जाते हैं। दूधिया रस जखम और व्रणों पर लगाने के काम में लिया जाता है और बीजों का तेल गर्भस्रावक औषधि की तरह भीतरी और बाहरी प्रयोग में लिया जाता है।

भसमकंद

नाम—मध्यप्रान्त—भसमकन्द। बम्बई-लोथ। लेटिन—Sauromatum Guttatum (सोरोमेटम गटाटम)।

वर्णन—यह एक बड़ी जाति का कन्द होता है। इसका पौधा पंजाब, पश्चिमी हिमालय, छोटा नागपुर, बम्बई प्रेसिडेंसी और गङ्गा के मैदानों में पैदा होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसके कन्द का पुल्टिस बनाकर त्वचा की उत्तेजना देने के लिये बांधा जाता है।

भद्रवल्ली

नाम—संस्कृत—भद्रवल्ली। बंगाल—हापरमली। मद्रास—अर्बीमल्लिका। लेटिन—Echites Dichotoma (एचिटस डिकोटोमा)।

गुण, दोष और प्रभाव—इस वनस्पति का उपयोग गलित कुष्ठ में लाभदायक है।

भटवासू

नाम—संस्कृत—निष्पाव, राजशिंबी, शिंबी, श्वेतशिबिका, बल्लक। हिन्दी—भटवासू, भेटरासु, बबौंटी, राजशिंबी, सिम। गुजराती—ओलिया, वाल। मराठी—वाल, अनवेरा, पांढरेपावटा। बङ्गाल—भेटारसू, बबौंटी, वनशिम, गंचीशिम, धियासिम, लबलब, राजशिंबी। बम्बई—पावटी, वालपापड़ी। पंजाब—कालालोबिया, कटजंग। तामील—अवेराई, मोरचाई। तेलगू—अलसंदा, अन्नापा। अंग्रेजी—Hyacinth bean (हेकिंथबीन) लेटिन—Dolichos Lablab (डोलीकस लबलब)।

वर्णन—यह एक प्रकार का धान्य होता है। इसका पौधा वर्षजीवी होता है। यह दाल के वर्ग का एक अन्न होता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत से भटवासू मधुर, रूखा, पाक में खट्टा, भारी, वात पैदा करने वाला, कुछ दस्तावर, कसैला, स्तनों में दूध पैदा करने वाला, दाहजनक, गरम तथा विष, कफ, सूजन और वीर्य को कम करने वाला और रक्तपित्त को भी पैदा करता है।

राजनिघंटु के मतानुसार भटवासू मधुर, रूक्ष, पचने में खट्टा, भारी, गरग, सूजन पैदा करने वाला, पौष्टिक, कामोद्दीपक, कसैला तथा विष और दृष्टि को हरने वाला होता है।

इस अन्न में २४ प्रतिशत मांसवर्धक द्रव्य, ५७ प्रतिशत आटा, ९॥ प्रतिशत तेल और तीन प्रतिशत राख रहती है।

चायना में इसके बीज पौष्टिक और वादी को दूर करने वाले माने जाते हैं।

इन्डोचायना में इसके पत्ते विषनाशक, ऋतुस्राव-नियामक और कालिक उदरशूल को दूर करने वाले माने जाते हैं। बीज ज्वरनाशक, अग्निवर्धक और आक्षेप निवारक माने जाते हैं।

भांगरा

नाम—संस्कृत—भृंगराज, भृङ्ग, मेकराज, भृंगरज, कुंतलवर्धन, केशरंजन, पितृप्रिय, रंगक, अंगारक, मार्कव, इत्यादि। हिन्दी—भांगरा, भगरा। मराठी—माका, बांगरा, भृंगराज। बङ्गाल—किशोरी, केशराज, केसटी, भीमराज। गुजराती—भांगरो, कालो भांगरो, कालूगंथी। संथाल-लाल केसरी। सिन्ध—टिक। तामील—केकेशी, केवी शिलाइ, कृष्णलंगानि। तेलगू—गलागरा, गुंटकलगरा। उर्दू—भांगरा। लेटिन—Eclipta Prostrata (एकलिप्टा प्रोस्ट्रैटा)। Wedelia Calandulacea (वेडेलिया केलेंडयूलेसीइ)।

वर्णन—भांगरे के पौधे बरसात के दिनों में सब जगह पैदा होते हैं और तर जमीनों में ये बारहों मास रहते हैं। इसके पौधे आधे से लेकर दो फीट तक लम्बे होते हैं, कुछ पौधे तो सीधे खड़े रहते हैं और बाकी पौधे जमीन पर फैले हुए रहते हैं। इसकी शाखाएं हरी, चमकीली और कुछ काले रंग की छाया लिये हुए होती हैं। शाखाओं के ऊपर सफेद रंग के सख्त रुएं रहते हैं। पत्ते १ से लेकर ३ इञ्च तक लम्बे और आधे से लेकर १ इञ्च तक चौड़े होते हैं। इनको मसलने से इनसे कुछ कालापन लिये हुए हरे रंग का रस निकलता है जो थोड़े ही समय में काला पड़ जाता है। इसके फूल सफेद और फल काले होते हैं।

आयुर्वेदिक निघंटुओं में भांगरे की सफेद, पीली और काली ये तीन जातियाँ मानी हैं। सफेद जाति को भृङ्गराज, पीली जाति को पीत भृंगराज और काली जाति को नीलभृंगराज कहा गया है। लोगों का ख्याल है कि काली जाति वाले भांगरे धातुओं से सोना बनाने के काम में आते हैं और यह जाति बड़ी कठिनता से भाग्यशाली मनुष्यों को ही मिलती है, मगर आधुनिक वनस्पति शास्त्रियों का खयाल है कि भांगरे की काली जाति होती ही नहीं सिर्फ सफेद फूल वाले भांगरे की सफेद पंखड़ियां खिल जाने के बाद उसका नीला या काले रंग का जो हिस्सा रह जाता है उसी को लोग काले रंग का भांगरा समझते हैं। इसलिये औषधि शास्त्र में अभी तक जहां भांगरे का वर्णन आता है वहां सफेद जाति का ही भांगरा काम में लिया जाता है।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत से भांगरे का पौधा कड़वा, गरम, धातु परिवर्तक, कृमिनाशक और विषनाशक होता है। यह बालों के सौन्दर्य को बढ़ाने वाला, नेत्रों की ज्योति को तेज करने वाला और दांतों को मजबूत करने वाला तथा सूजन, हार्निया (आंत्रवृद्धि), नेत्र रोग, कफ, वात, खांसी, दमा, श्वेत कुष्ठ, पाण्डुरोग, हृदय रोग, चर्मरोग, खुजली, रतौंधी, उपदंश और विष को नष्ट करने वाला होता है। गर्भपात और गर्भस्राव को रोकने के लिये तथा प्रसूति के पश्चात् गर्भाशय में होने वाली वेदना को रोकने के लिये इसका उपयोग कियाजाता है।

यूनानी मत—यूनानी मत से इसका पौधा कड़वा और तीखा होता है। यह बालों के रग को बढ़ाता है, नेत्रों की ज्योति को तेज करता है। पौष्टिक, कफ निस्सारक, अग्निवर्धक और ज्वरनाशक होता है। तिल्ली के रोग, दन्तशूल, मस्तकशूल, ज्वर, यकृतशूल, आधा शीशी और मुखशोथ में यह बहुत उपयोगी होता है। इसके सेवन से सिर के चक्कर दूर हो जाते हैं।

भांगरे में अंग्रेजी औषधि टेरेक्सेकम की तरह पित्त को शुद्ध करने, बालों को बढ़ाने और दीर्घायु करने के गुण प्रधान रूप से रहते हैं।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

भांगरे का प्रधान उपयोग पौष्टिक, यकृत की बीमारी और तिल्ली की वृद्धि को दूर करने तथा भिन्न २ प्रकार के पुराने चर्म रोगों को दूर करने के लिये किया जाता है। यह बात आम तौर से प्रचलित और मानी हुई समझी जाती है कि इस वनस्पति का भीतरी और बाहरी उपयोग करने से बाल, लम्बे, मुलायम और भंवरे के समान काले रहते हैं।

बम्बई के रहने वाले लोग इस वनस्पति के रस को दूसरे सुगंधित द्रव्यों के साथ एक पौष्टिक और बाधा-नाशक वस्तु की तरह उपयोग में लेते हैं। नवजात शिशुओं का जुकाम दूर करने के लिये इसके रसकी दो बूंदे ८ बूंद शहद में मिलाकर चटाई जाती है।

इसका ताजा पौधा तिल के साथ पीस कर श्लीपद या हाथी पाँव को आराम करने के लिये उपयोग में लिया जाता है और इसका ताजा रस यकृत् की विकृति और जलोदर रोग में लाभदायक समझा जाता है। इसका अधिक मात्रा में उपयोग करने से वह अपना वामक असर दिखलाता है। यह शीतल, शूलनाशक और शोषक गुणों से युक्त रहता है। इसको थोड़े तेल में मिलाकर सिर पर लेप करने से सिर दर्द दूर हो जाता है।

इसके पत्तों का रस एक चाय के चम्मच की मात्रा में देने से पीलिया और ज्वर में लाभ होता है। इसकी जड़ को पेशाब की जलन दूर करने के उपयोग में लेते हैं।

कार्टर के मतानुसार इसके पत्तों के लेप की व्रण और छालों को अच्छा करने के लिये बहुत प्रशंसा है। इसकी जड़ को पेट की बीमारियों को दूर करने के लिये पेट के ऊपर बाँधते हैं। चायना में यह पौधा संकोचक माना जाता है और प्रसूति के बाद होने वाले रक्तस्राव और विटाल को रोकने तथा मसूड़ों को मजबूत करने के लिये इसका उपयोग किया जाता है। दंतशूल को मिटाने के लिये इसके पौधे को मसूड़ों पर रगड़ते हैं।

लारियूनियन में इसका पौधा दमे को दूर करने वाला और छाती के रोगों में लाभदायक माना जाता है। चर्म रोग और श्लीपद में इसका काढ़ा बाहरी उपचार के काम में लिया जाता है।

इण्डोचायना में इसका पौधा दमा और खांसी को दूर करने के लिये अत्यधिक उपयोग में लिया जाता है। इसके पत्तों का चूर्ण प्रसूति के बाद होने वाले रक्तस्राव को रोकने तथा रक्त को शुद्ध करने के लिये उपयोग में लिया जाता है।

कोमान के मत से इस पौधे की सफेद और पीली दो जातियां होती हैं। पीली जाति के पत्ते कुछ जोड़े होते हैं जो कि कफ की वजह से पैदा हुए पीलिया को दूर करने के काम में लिये जाते हैं। इस रोग में इसके ताजे पत्तों को अच्छी तरह से धोकर कुछ काली मिरच के दानों के साथ पीसकर उनकी नीबू के बराबर गोली बनाकर सवेरे खट्टे दही या मट्ठे के साथ देते हैं। मैंने इस औषधिको इस बीमारी को दूर करने के लिये अत्यन्त उपयोगी पाया। इसको ५-६ दिन तक देने पर रोगी को बहुत लाभ दृष्टिगोचर होता है। जरूरत पड़ने पर इसकी क्रिया को ठीक तौर से चालू रखने के लिये कुछ जुलाब देने की भी जरूरत पड़ती है। शरीर के अन्दर इस वनस्पति की क्रिया पोडो-फिलीन और टेरेक्सेकम की तरह होती है। इस औषधि का स्वरस विशेष रूप से औषधि के काम में लिया जाता है।

डॉक्टर देसाई के मतानुसार भांगरा कड़वा, गरम, दीपन, पाचक, वातनाशक, मृदुविरेचक, मूत्रल, बल-कारक, चर्मरोग नाशक, व्रणशोधक, व्रणरोपक और कांतिवर्धक होता है। आयुर्वेद में इसको रसायन और धातु परिवर्तक माना है और इस कथन में जरा भी अतिशयोक्ति नहीं है। इसकी प्रधान क्रिया यकृत के ऊपर होती है। इसके लेने से यकृत की विनिमय क्रिया सुधरती है। पित्त का संचालन व्यवस्थित रूप से होता है और आमाशय तथा पक्वाशय की पाचन क्रिया सुधरने से सारे शरीर में ओज और कांति की वृद्धि होती है। प्रतिदिन भांगरा खाने वाला मनुष्य बुड्ढे से जवान हो जाता है इस कथन में अतिशयोक्ति नहीं है। भांगरे का धर्म टेरेक्सेकम के समान अथवा उसकी अपेक्षा भी अधिक प्रभावशाली होता है। इसको बड़ी मात्रा में देने से यह वामक हो जाता है।

भांगरे का रस बिगड़ी हुई यकृत की क्रिया को सुधारने के लिये दिया जाता है। यकृत की क्रिया सुधरने पर कामला अपने आप मिट जाता है। यकृत वृद्धि और तिल्ली की वृद्धि कम हो जाती है। बवासीर, उदर सम्बन्धी रोग और अग्निमांद्य भी इससे मिट जाते हैं। कामला, बवासीर और पेट के रोग विशेष कर यकृत की क्रिया पर ही अवलंबित रहते हैं। इसलिये इन रोगों को मिटाने के लिये यकृत की क्रिया को शुद्ध करने वाली औषधियाँ ही देनी चाहियें और इस कार्य के लिये भांगरा बहुत उपयुक्त भी है। यकृत की क्रिया बिगड़ने पर शरीर में एक

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

प्रकार का विष हो जाता है जिसको आयुर्वेद में आम कहते है, जमा हो जाता है और इसकी वजह से आमवात, चक्कर मारना, सिर का दुखना, दृष्टिमांद्य और और तरह के चर्म रोग पैदा हो जाते हैं। इन सब रोगों में भांगरे को देने से बहुत लाभ होता है। क्योंकि इसका सीधा असर यकृत के ऊपर होता है और ये सभी रोग की खराबी से पैदा होते हैं। सब प्रकार के प्राचीन चर्म रोगों में भांगरे का भीतरी और बाहरी प्रयोग करने से लड़ा लाभ होता है। समय आने के पूर्व ही जिन लोगोंके बाल सफेद हो जाते हैं, उन लोगोंको भांगरेका सेवन कराने से और बालों पर भांगरे का लेप करने से उनके बाल काले, लम्बे और सुन्दर हो जाते हैं।

मद्रास में बिच्छू के डङ्क पर भांगरे का लेप किया जाता है और इसको पिलाया भी जाता है। अग्नि से जले हुए व्रणके ऊपर भांगरा, मरवा और मेंहदी के पत्तों को पीसकर लगाने से जलन शान्त हो जाती है और नवीन आने वाली चमड़ी शरीर के रङ्ग की हो आती है।

भांगरे के रस में हीराकसी को मिलाकर लेप करने से बाल काले हो जाते हैं।

भांगरा और बिच्छू का विष—योगरत्नाकर के कर्ता लिखते हैं कि बिच्छू के डंक पर इसके पत्तों को कुचलकर लेप करने से तथा इसके रस को नाक में टपकाने से बिच्छू का विष उतर जाता है। इसी का समर्थन करते हुई डॉक्टर नॉडकरनी लिखते हैं कि भांगरे के पत्ते बिच्छू के विष को दूर करने के लिये एक चमत्कारिक इलाज है। इसका उपयोग में लेने का तरीका यह है कि इसके पत्तों को पीसकर बिच्छू के डंक की वजह से जितने भाग में सूजन आ गयी हो अथवा जहां तक वेदना फैल गई हो वहाँ तक खूब अच्छी तरह से मसलना चाहिये। इस प्रकार मसलने से आस पास के सब भाग में से वेदना निकल कर डङ्क पर केंद्रीभूत हो जाती है। उसके बाद डंक पर इस औषधि को खूब अच्छी तरह मसलने से और इसकी लुग्दी को डंक पर बांध देने से भी वेदना निकल जाती है।

केस और महस्कर का कथन है कि हमने बिच्छू के डंक पर इसके पत्तों की पीसकर लेप किया और पुल्टिस के रूप में भी बांधा मगर उससे कोई लाभ नहीं हुआ।

मात्रा—इसके स्वरस की मात्रा १ ड्राम से २ ड्राम तक की होती है।

उपयोग उपदंश के व्रण—भांगरे के रस से अथवा भांगरे और जूही के पत्तों के रस को मिलाकर उस रस से उपदंश के व्रण को धोने से बड़ा लाभ होता है।

आधा शीशी—भांगरे का रस और बकरी का दूध समान भाग लेकर उसको गरम करके नाक में टपकाने से और भांगरे के रस में काली मिरच मिलाकर सिर पर लेप करने से आधा शीशी मिट जाती है।

नवजात शिशु का जुकाम—तत्काल पैदा हुए नवजात शिशु को अगर कफ का जोर हो जाय और उसके गले में कफ घड़ २ बोलने लगे तो भांगरे के स्वरस की दो बूँद निकालकर उसमें ८बूँद शहद मिलाकर उस मिश्रण को उँगली के द्वारा बचों के गले में पहुँचा देने पर सब कफ निकल पड़ता है। और बचों की चेतना जागृत हो जाती है।

धनुर्वात—भांगरे का रस १ तोला, तूँबी का रस ३ माशे, निर्गुंडी का रस १ तोला और अगस्त्य के पत्तों का रस ३ तोला इन सब रसों को मिलाकर इन सब रसों से चौगुना नारियल का स्वरस मिलाकर उस सब रस में थोड़ से चावल डालकर खीर बना लेना चाहिये। इस खीर में थोड़ा सा गुड़ मिलाकर प्रतिदिन दोनों टाइम खाने से धनुर्वात में लाभ होता है।

कामला—भाँगरे के रस में काली मिरच मिलाकर सबेरे दही के साथ लेने से ७ दिन में कामला आराम हो जाता है।

बचों का डिब्बा रोग—भांगरे के रस में घी मिलाकर ३ दिन तक देने से बचों का डिब्बा रोग आराम होता है।

पारे का विष—भांगरे का रस, अगस्त्य का रस और सोरा मट्ठे में मिलाकर उस मट्ठे को ४ तोले की मात्रा में खिलाने से शरीर के अन्दर फैला हुआ पारे का जहर मूत्र मार्ग से निकल जाता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

अग्निदग्ध—अग्नि से जले हुए स्थान पर दिन में दो बार भाँगरे के पत्तों और तुलसी के पत्तों का रस निकाल कर लगाने से जलन शान्त हो जाती है और शरीर पर किसी प्रकार का दाग नहीं पड़ता।

मेदरोग—प्रति दिन रात को सोते समय भाँगरे का स्वरस शरीर पर मसल कर रमा देना चाहिये। इस प्रकार ६ महीने तक लगातार करते रहने से शरीर की बढ़ी हुई चर्बी और उस चर्बी की वजह से जगह २ होने वाली गठानें दूर हो जाती हैं।

अग्निमांद्य और पाण्डु रोग—भाँगरे के पौधे को जड़ समेत लाकर छाया में सुखाकर उसका चूर्ण करके उस चूर्ण में समान भाग त्रिफले का चूर्ण मिलाकर दोनों का जितना सम्मिलित वजन हो उतनी ही उसमें मिश्री देनी चाहिये इस चूर्ण में से १ तोला चूर्ण उचित अनुपान के साथ खाने से पाण्डुरोग और मन्दाग्नि मिटती है।

पेट के कृमि—इसके पत्तों का रस गुदा में ३-४ बार लगाने से पेट के कृमि नष्ट हो जाते हैं।

कु:—भाँगरे के स्वरस और गुंजा की लुग्दी से सिद्ध किये हुए तेल की मालिश करने से कंडू, कुष्ठ और मस्तक पीड़ा मिटती है।

विसर्परोग—भांगरे की जड़ और हल्दी को लगातार लेप करने से विसर्प रोग मिटता है।

गज चर्म—इसके ताजे पौधे की लुग्दी को तिल के तेल में औटाकर उस तेल को गज चर्म के ऊपर मालिश करने से लाभ होता है।

बनावटें-भृङ्गराज तेल—भाँगरे का रस ८ सेर, त्रिफले का काढ़ा ४ सेर, तिल का तेल ४ सेर, गाय का दूध ४ सेर, कमल की नाल, कमल की जड़, मजीठ, सुरमा, नील, कमल गट्टा, नागरमोथा, पुनर्नवा की जड़, हरड़ बहेड़ा, आंवला, भांगरे की जड़, चिरमी के बीज, नाग केशर, आम की गुठली, अनन्त मूल, मुलैठी, कटसरैया, देवदारु, पद्माक, लाल चन्दन, तमालपत्र, मेंहदी के बीज, बरियारा, शतावरी, बड़ के अंकुर, गोलोचन, नीलाथूथा इन्द्रायण के बीज, केवड़ा, जटामांसी, कमल के फूल, जासूद के फूल, बहेड़े के बीज, रासना की जड़, गेरू, दारु-हलदी, रसौत, असगन्ध, बिदारी कन्द, डोड़ी, लाख, केले का कन्द, अगर, लाद और हाथीदांत की राख। इन सब चीजों को चार २ तोला लेकर पानी के साथ पीसकर लुग्दी बनाकर एक लोहे की कड़ाही में रख दें और उसी कड़ाही में भांगरे का रस, त्रिफले का काढ़ा, गाय का दूध और तिल्ली का तेल भी भर दें और नीचे हलकी आंच लगा दें। जब औटते २ सब चीजें जलकर तेल मात्र शेष रह जाय तब उतार कर उसको छान लें।

इस तेल को प्रतिदिन सिर में लगाने से अकाल में सफेद हुए बाल फिर से काले हो जाते हैं। बालों की जड़ें मजबूत होकर बालों का गिरना बन्द होता है, बालों का रंग भँवरे के समान काला और चमकदार हो जाता है। बाल सघन हो जाते हैं। मस्तिष्क और आंखोंकी गरमी दूर हो जाती है। यहां तक कि सिरकी गंज भी समय आने पर मिट जाती है और नये बाल पैदा होने लगते हैं।

रस मंडूर—शुद्ध गंधक ८ तोला और शुद्ध पारा २ तोला लेकर खरल में डालकर कज्जली कर लें। फिर एक लोहे की कड़ाही में उसको डालकर उसमें १६ तोला हरड़ का चूर्ण, ८ तोला मंडूर भस्म और १२८ तोला भांगरे का स्वरस डालकर लोहे के दस्ते में घोटना चाहिये। घोटते २ जब रस का भाग सूख जाय तब उसे निकाल-कर कांच की बरनी में भर लेना चाहिये।

इस औषधि को १॥ माशे से २ माशे की मात्रा में प्रतिदिन सबेरे शाम १ तोला शहद और ६ माशे घी के साथ मिलाकर चाटने से और पथ्य में सिर्फ दूध और भात लेने से पित्त की शुद्धि होकर जठराग्नि प्रदीप्त हो जाती है और भोजन के पश्चात् होने वाला उदर शूल, अम्लपित्त, खट्टी डकार, छाती की जलन, कामला तथा यकृत और तिल्ली को वृद्धि नष्ट हो जाती है।

भृंगराज रसायन—ताजे भांगरे को पीसकर उसका निकाला हुआ स्वरस प्रतिदिन प्रातः काल एक तोला की मात्रा में पीने से और पथ्य में सिर्फ दूध पर ही रहने से १ महीने में शरीर निरोग हो जाता है। बल और कान्ति बढ़ती है तथा मनुष्य दीर्घायु होता है।

भांगरा सफेद [चिती फूल]

नाम—हिन्दी—चीती फूल, सफेद भांगरा। पंजाब—गोरखपामो, खटाई, सफेद भांगरा, तिदू। लेटिन—Heliotropium Strigosum (हेलियोट्रापियम स्ट्रिगोसम)।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

वर्णन—इस वनस्पति का नाम सफेद भांगरा है। मगर यह भांगरे के वर्ग की वनस्पति नहीं है। यह उससे भिन्न कोई दूसरे वर्ग की है। इसका पौधा बहुशाखी और छोटा होता है। यह वनस्पति विशेष रूप से पश्चिमी हिमालय में तथा साधारण तौर से सारे भारतवर्ष में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इसका पौधा मृदु विरेचक और मूत्रल होता है। इसका रस-आँख की फुन्सी, मसूड़े के छाले और दूसरे व्रणों पर लगाने के काम में लिया जाता है। यह फोड़ों में पीव बढ़ाने के लिये विशेष रूप से काम में लिया जाता है।

इसका पौधा जहरीले कीड़ों के डंक पर लगाने के काम में लिया जाता है। सर्प विष के उपचार में कभी २ इसका प्रयोग होता है।

हक्सबूलर के मतानुसार लासबेला में इसका पौधा कमर की बादी को दूर करने के उपाय में लिया जाता है।

भारंगी

नाम—संस्कृत—अंगारवल्लरी, भारंगी, ब्राह्मणी, पद्मा, भृंगजा, दूर्वा, ब्राह्मणयष्टिका, गर्दभशाक, वान्तारि, वातारि, कासजित, कासघ्नी इत्यादि। हिन्दी—भारङ्गी। बङ्गाल—बामनहाटी, भुइजाम। बम्बई—भारंग, भारंगी। गुजराती—भारुंगी। मराठी—भारंगी। नेपाल—अनदेखी, चूआ। बरमा—बेक्या। तामील अंगारवल्ली, सिरुदेक्, कांडुवारंगी। तेलगू—भारंगी, भ्रमरमारी। उर्दू—भारगी। लेटिन—Clerodandron Serratum (क्लेरोडेंड्रोन सेरेटम)।

वर्णन—यह छोटी जाति की झाड़ी हिमालय में तथा दक्षिण में विजगापटटम में पैदा होती है। इसकी ऊँचाई १ से लेकर २॥ मीटर तककी होती है। जंगल जलनेके उपरांत इस पौधेकी डालियां फटती हैं। इसकी डालियां करीब ४ इञ्च लम्बी होती हैं। इसके पत्ते ४ इञ्च लम्बे, २-३ इञ्च चौड़े तथा लम्बे गोल होते हैं। इसके ऊपर छींटे पडे हुए रहते हैं। इसके पत्तों के पिछले हिस्सेपर बारीक २ रुएँ रहते हैं इसके फूल गुच्छों में आते हैं। ये फूल ४ पंखड़ियों के चमकदार और गहरे नीले रंग के होते हैं। इसके फल पकने पर नारंगी रंग के हो जाते हैं। इसकी जड़ औषधि प्रयोग में आती हैं। औषधि संग्रह के कर्ता ने इसकी एक छोटी बेल होना लिखा है।

अनुभूत चिकित्सा सागर में इसका वर्णन करते हुए लिखा है कि भारंगी के पौधे हिमालय में, खासिया पहाड़ियों में तथा नीलगिरी, पश्चिमी घाट, दक्षिणी भारत और बरमा में होते हैं। इसके नीले फूल लगते हैं। इसके फल की मध्य रेखा चौथाई इंच की होती है। जब फल पक जाता है तब चमकदार काले रंग का हो जाता है। इसके पत्ते चिकने, एक ओर से गोल और दूसरी ओर से लम्बे होते हैं। ये एक २ सींकपर तीन २ और आमने सामने लगते हैं। इनकी किनारियां कटी हुई होती हैं। इस वनस्पति में किसी प्रकार की गंध या स्वाद नहीं होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत से भारंगी रूखी, चरपरी, कड़वी, रुचिकारक, गरम, पाचक, हलकी, अग्नि को प्रदीप्त करने वाली, कसैलो तथा रक्त गुल्म, सूजन, खांसी, श्वास, पीनस, ज्वर और वात को नष्ट करने वाली होती है।

राजनिघण्टु के मत से भारंगी, चरपरी, कड़वी, गरम तथा खांसी, श्वास, सूजन, घाव, कृमि, दाह और ज्वर को दूर करती है।

भारंगी की जड़ ज्वर और कफ प्रधानरोगों में ही ली जाती है। सरदी, गले की सूजन, और कफयुक्त दमे में इसको सोंठ या बच के साथ देते हैं। अशक्त बच्चों के फुफ्फुस सम्बन्धी रोगों में इसको थोड़ी मात्रा में पिलाते हैं और इसका लेप छाती पर करते हैं। भारंगी की जड़ में थोड़ा सा उत्तेजक धर्म भी रहता है। ज्वर नाशक धर्म इसमें विशेष जोरदार नहीं होता। इसलिये इसको ज्वर के अन्दर अतीस के समान ज्वरनाशक औषधियोंके साथ मिला कर देना चाहिये। इसका कफनाशक धर्म भी बहुत साधारण होता है। इसलिये कफ को नष्ट करने के लिये इसको काकड़ा सिंगी के साथ देना चाहिये। आमवात के अन्दर भी इस औषधि का उपयोग होता है।

रत्नागिरी के रहने वाले लोग इस वनस्पति को मलेरिया ज्वर में बहुत प्रभावशाली मानते हैं। वे इसकी जड़ को ज्वर और जुकाम सम्बन्धी विकृतियों को दूर करने के उपयोग में लेते हैं।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

इसके पत्तों का तेल, मक्खन के साथ उबालकर एक लेप तैयार किया जाता है। जो मस्तकशूल और नेत्र रोगों में उपयोग में लिया जाता है। इसके बीजों को कुचलकर उनको मट्ठे में उबालकर पेट के संचित मल को मुलायम करके निकाल देने के लिये काम में लेते हैं। जलोदर के अन्दर भी यह उपयोग में लिया जाता है।

कोमान के मतानुसार यह वनस्पति संधिवात, अम्ल पित्त, अग्निमांद्य और जुकाम की वजह से पैदा हुई फुफ्फुस की विकृति को मिटाने के लिये उपयोग में ली जाती है। इसकी जड़ का काढ़ा हमने जुकाम और खांसी के कुछ बीमारों पर काम में लिया मगर उससे बहुत ही थोड़ा, नहीं के बराबर लाभ हुआ।

सुश्रुत के मतानुसार इस वनस्पति के पत्ते सांप और बिच्छू के विष को दूर करने के काम में आते हैं।

इस ग्रन्थ में भारंगी की २-३ जातियों का वर्णन किया जा रहा है। मगर यह खयाल किया जाता है कि आयुर्वेद में वर्णित असली भारंगी यही है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह वनस्पति गरम और खुश्क होती है। यह सूजन को उतारती है। भूख बढ़ाती है। कच्चे दोषों को पकाकर निकाल देती है। सूजन, खांसी, कफ के उपद्रव और कफ से होने वाले ज्वर को आराम करती है। सांस की तंगी को दूर करती है। योनि के दर्द और पेट के दर्द से होने वाले ज्वर को भी यह दूर करती है।

दर्पनाशक—इसका दर्पनाशक इमली का सत या इमली का निर्यास है।

मात्रा—इसकी जड़ के चूर्ण की मात्रा १॥ माशे से ३ माशे तक होती है।

उपयोग—ज्वर और जुकाम—भारंगी की जड़ का क्वाथ बनाकर पिलाने से ज्वर या जुकाम मिटता है।

नेत्र रोग—इसके पत्तों को तेल में औटाकर लगाने से आंख के पलकों की सूजन मिट जाती है और गीढ़ों का आना बन्द हो जाता है।

मतली— भारंगी, सोंठ और धनिये को पानी में औटाकर पिलाने से खाली मतली मिटती है।

जलोदर—भारंगी को मट्ठे में औटाकर पिलाने से जलोदर में लाभ होता है।

दमा और खाँसी—भारंगी और सोंठ को समान भाग लेकर अदरक के साथ चटाने से दमा और खांसी में लाभ होता है।

गल गंड—इसकी जड़ को चावल की धोवन के साथ पीसकर लेप करने से गलगंड मिटता है।

भारंगी २ (चिंगारी)

नाम—हिन्दी—भारंगी, बारंगी। बङ्गाल—बामनहट्टी, वमनोटी। बम्बई—भारंगी। दक्षिण—सेरूमेंतूर। देहरादून—चिंगारी। नेपाल—अङ्गियाह। पंजाब—दवाए मुबारक। तामील—कवलाइ। तेलगू—चिरुटेका। लेटिन—Clerodendron Siphonanthus (क्लेरोडेंड्रोन सिफोनेंथस)।

वर्णन—यह एक वृक्ष होता है जो विशेषकर पूने के आसपास होता है। इसकी ऊंचाई ४ हाथ से लेकर ७ हाथ तक होती है। यह वृक्ष सरू के वृक्ष के समान बढ़ता है। इसके पत्ते ६ इञ्च से बारह इञ्च तक लम्बे होते हैं। यह नीचे की तरफ से चंदनियां रंग के होते हैं। इसके फूल कुछ ललाई लिये हुए सफेद रंग के होते हैं। इसके फल पकने पर गहरे बैंगनी रंग के हो जाते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—इस वनस्पति के गुण धर्म साधारणतया असली भारंगी के समान ही होते हैं। इसकी जड़ दमा, खांसी और कंठमाला में बहुत उपयोगी मानी जाती है। इसकी लकड़ी हलकी, कड़वी और कुछ संकोचक होती है। इसका गोंद उपदंश की वजह से होने वाले संधिवात में लाभदायक होता है।

इसके पत्तों और डालियों का रस घी में मिलाकर छत्तेदार फुन्सियों पर लगाने से बहुत लाभ होता है।

उपयोग अनेक रोग—बंगाली लोगों का यह विश्वास है कि इसकी लकड़ी को गले में बांधने से बचा या मनुष्य अनेक प्रकार के रोगों से बचा रहता है।

राजयक्ष्मा—इसकी जड़ की लुग्दी और सोंठ के चूर्ण को गरम जल में मिलाकर पिलाने से राजयक्ष्मा में लाभ होता है।

मांसक्षय—इसकी जड़ की लुग्दी और क्वाथ से सिद्ध किये हुए तेल की मालिश मांसक्षय वाले बच्चे को करने से उसको लाभ होता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

भारंगी (३)

नाम—संस्कृत—भूमि जंबुक। हिन्दी—भारंगी, भूजाम। मराठी—गांठ भारंगी। गुजराती—घीती, घोतेली। कच्छी—निंढीकुढेर। तामील—भूमिसंत्रा। तेलगू—कुरानेली। संथाल—कादामेट। बंगाल—भुइजाम। लेटिन—Premna Herbacea (प्रेम्ना हरवेसिया)।

वर्णन—यह वनस्पति भी कोकण तथा दूसरे कई स्थानों पर भारंगी के नाम से ही प्रसिद्ध है, मगर यह भारंगी के वर्ग की वनस्पति नहीं है बल्कि यह अरनी के वर्ग की एक झाड़ीनुमा वनस्पति है जो बरसात के दिनों में पहाड़ी प्रान्तों में पैदा होती है। इसके पत्ते प्रायः बालिश्त भर लम्बे, आधे बालिश्त चौड़े और कंगूरेदार होते हैं और एक २ डंठल पर तीन २ लगते हैं। इसके फूल किरमची और नीले रंग के होते हैं। इसकी जड़ फीके उदी रंग की और करीब १ इञ्च मोटी होती है। इसका स्वाद कुछ कड़वा होता है।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत-सुश्रुत के मतानुसार इसका पौधा दूसरी औषधियों के साथ साँप और बिच्छू के विष को दूर करने के लिये दिया जाता है।

इसके तीन या पाँच पत्तों को पीसकर शहद में मिलाकर चटाने से खांसी और जुकाम दूर होता है तथा पत्ते और फूलों को पीसकर सूजन पर चुपड़ने से लाभ होता है।

डाक्टर देसाई का कथन है कि पुराने ग्रन्थों में भारंगमूल को कड़वी, तिक्त और उष्ण लिखा है, मगर ये तीनों धर्म इस भारंगी में नहीं होते। इसलिये मालूम होता है कि आर्य शास्त्रों में वर्णित असली भारंगी यह नहीं है बल्कि क्लेरोडेंड्रोन सेरेटम ही असली भारंगी है जिसका वर्णन ऊपर किया जा चुका है।

इस भारंगी की जड को गरम पानी में उबाल कर सिर पर लेप करने से सिर दर्द दूर होता है। जड़ को शहद में मिलाकर कान में डालने से कान का व्रण मिटता है। बीजों को मट्ठे में उबाल कर उदर रोगों में देने से दस्त साफ होता है और रोग में शांति मिलती है।

भारंगी (४)

नाम—हिन्दी—बारिंगी, चारंगी, भारंगी, कशसिंग। बंगाल—भूरंगी। नेपाल—श्याम बारंगी। पंजाब—बेरा, बेरिंग, बिरंगो, हाला, कशवार, माथू, पेशी, पुथोरिन, तीथर, ट्रीटा, तुताई। लेटिन—Picrasma Quassioides (पिक्रास्मा क्वासिआइडस)।

वर्णन—यह छोटी जाति का वृक्ष या मोटी जाति की झाड़ी हिमालय में जम्मू से नेपाल तक तथा गढवाल और भूटान में पैदा होती है। इसके पत्ते संयुक्त होते हैं। फूल पत्तों के खांचों में आते हैं। ये फूल हरे रंग के होते हैं। इसके फल छोटे २ लाल रंग के मसिल होते हैं, पकने पर काले पड़ जाते हैं और खाने के काम में आते हैं। औषधि में इसकी छाल और पत्ते काम में आते हैं। इसकी छाल बंगाल में भारंगी के नाम से बिकती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इस वनस्पति के गुण और धर्म अँग्रेजी औषधि क्वाशिया के समान होते हैं। यह क्वाशिया के बदले में उपयोग में ली जाती है। इसकी छाल, लकड़ी और जड़ ज्वर नाशक औषधि की तरह उपयोग में ली जाती है। इसके पत्ते पीसकर खुजली के ऊपर लगाये जाते हैं। जापान के फारमाकोपिया में यह औषधि सम्मत मानी गई है।

भाट

नाम—हिन्दी—भाट, भाटवन, रामकुरथी। बंगाल—गरीकुलाई। कुमाऊँ—भूत। नेपाल—भटनास, भटवास। पंजाब—भूत। संथाल—होरेक। लेटिन—Glycine Soja, G. Hispida (ग्लिसिन सोजा, ग्लिसिन हिस्पीडा)।

वर्णन—यह वनस्पति पंजाब के पूर्वी हिस्से से बंगाल तक पैदा होती है। हिमालय में यह ६ हजार फीट की ऊँचाई तक पैदा होती है। मनीपुर, बरमा और खासिया पहाड़ियों में भी यह पैदा होती है। यह एक जमीन पर फैलने वाली लता होती है। इसके पत्ते डंठल के दोनों ओर लगते हैं। यह बहुत छोटे होते हैं। इसके बीजों में से तेल निकाला जाता है जो स्वीडन के फरमाकोपिया में सम्मत माना गया है।

001702

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

गुण, दोष और प्रभाव—इसकी छाल का काढ़ा संकोचक होता है।

भांवर

नाम—पंजाब—भांवर। सीमा प्रदेश—भांवर, हरनखुरी। बिजनोर—हारा। आसाम—कलमाण। उरिया—पेनीनोइ। तेलगू—पूरीतितिगो। लेटिन—Ipomoea Hispida (इपोमिया हिस्पिडा)।

वर्णन—यह वनस्पति प्रायः सारे भारतवर्ष में और सीलोन में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इस पौधे को तेल में उबाल कर उस तेल को संधिवात, गलित कुष्ठ, व्रण, मृगी और मस्तक शूल को दूर करने के उपयोग में लेते हैं।

भिलावा

नाम—संस्कृत—भल्लातक, भेली, भल्लिका, भूतनाशना, अग्निका, अग्निमुखी, अनल, अर्शोहिता, अन्तःक्षत्वा, अरुष्करा, कृमिघ्न इत्यादि। हिन्दी—भिलावा, भिलामा, भेला, भल्लातक। बंगाल—भेला, भेलातुकी, व्हेलामा। बम्बई—बिब्बा, भिलामा, बिलांबी। गुजराती—भिलामू। मराठी—बिब्बा, बिभा, बिबू। पंजाब—भेला, भिलावा। नेपाल—भेलाई। आसाम—भीलागुटी। तामील—इरुमुगी। तेलग—भल्लातकी। उर्दू—भिलावां। इङ्गलिश—Commou Markingnut Tree। लेटिन—Semicarpus Anacardium (सेमीकार्पस एनाकार्डियम)।

वर्णन—भिलावे का वृक्ष मध्यम कद का होता है। इसके वृक्ष की ऊँचाई ३० फुट तक की होती है। इसके पिंड की गोलाई ४ फुट तक होती है। इसके पत्ते ६ से लेकर १८ इञ्च तक लम्बे होते हैं जो डालियों के अन्त में लगते हैं। इनके सिरे गोल होते हैं। इसकी छाल १ इच मोटी, धुएँ के रङ्ग की सफेद और कुछ काली होती है। इसके फल का डंठल मोटा होता है। भिलावे का फल काजू के फल की तरह होता है। जिस प्रकार काजू के नीचे उसका फल होता है उसी प्रकार भिलावे के ऊपर इसका फल होता है। जब यह फल और उसके नीचे जुड़ा हुआ भिलामा कच्चा होता है। तब दोनों हरे रङ्ग के होते हैं, मगर जब यह फल पकता है तब फल का रङ्ग पीला होता है और उसके नीचे जुड़े हुए भिलावे का रंग काला होता जाता है। उसके पश्चात् उसका रस नीचे के भिलावे में उतरता जाता है और फल भिलावे के ऊपर सूखता जाता है और अन्त में वह टोपी के समान अथवा डंठल के समान होकर उस भिलावे के ऊपर चिपका हुआ रहता है। उस डंठल को देखकर कोई भी यह खयाल नहीं कर सकता कि किसी समय यह सुन्दर फल के रूप में रहा होगा। भिलावे के अन्दर उसकी गिरी में से ३२ प्रतिशत तेल निकलता है।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत से भिलावा कसैला, गरम, वीर्यवर्धक, मधुर, हलका तथा वात, कफ, उदर रोग, कुष्ठ, बवासीर, संग्रहणी, गुल्म, ज्वर, श्वेत कुष्ठ, अग्नि मांद्य, प्रमेह, कृमि और व्रण को नाश करता है।

इसका फल स्निग्ध, दांतों को मजबूत करने वाला, संकोचक, कसैला, मधुर तथा कृमि और बवासीर को नष्ट करने वाला होता है।

भिलावे का पक्का फल मधुर, हलका, कसैला, पाचक, स्निग्ध, तीक्ष्ण, गरम, भेदक, बुद्धिवर्धक, अग्नि दीपक होता है तथा कफ, वात, व्रण, उदर रोग, कुष्ठ, बवासीर, संग्रहणी, गुल्म, सूजन, ज्वर और कृमि रोगों को नष्ट करता है।

इसके फल की छाल मधुर, स्निग्ध, हलकी, कसैली, रस में चरपरी, पाचक, तीक्ष्ण, भेदक, गरम, अग्निदीपक, कफ नाशक, बुद्धिवर्धक होती है तथा वात, कुष्ठ, व्रण, उदर रोग, बवासीर, संग्रहणी, गुल्म, सूजन, ज्वर और कृमि रोग को नष्ट करती है।

इसके फल की मगज मधुर, वीर्यवर्धक, अग्निदीपक, शोथनाशक तथा अरुचि, दाह, पित्त और वात को दूर करने वाली होती है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

भिलावे का डंठल स्वादिष्ट, पित्तनाशक, बालों को हितकारी और अग्नि दीपक होता है।

भिलावे की शुद्धि—भिलावों को ७ दिन तक भैंस के गोबर में गाड़ दें। फिर उनको डोलायंत्र में रखकर उस डोलायन्त्र में गोमूत्र भरकर मन्दी २ आँच से पकावें। इस बात का खयाल रखना चाहिये कि उसमें से निकलने वाला धुआँ शरीर पर न लगे नहीं तो शरीर में खुजली चलकर सूजन आ जायगी। अच्छा यह हो कि जो व्यक्ति भिलावे को शुद्ध करे वह पहले सारे शरीर पर नारियल का तेल चुपड़ ले जिससे उसको धुएं का असर कम होगा। एक दिन गोमूत्र में उबालने के पश्चात् उनका डंठल तोड़ कर उनको गाय के दूध में पकावें। जब गाय का दूध आधा रह जाय तब इस दूध को भिलावे समेत किसी चिकनी मिट्टी के बरतन में भरकर जमा दें और ८ दिन तक उस दही को सड़ने दें। उसके पश्चात् उसमें से भिलावे को निकाल लें। ऐसा करने से भिलावे शुद्ध हो जाते हैं।

बाकी बचे हुए दही को मथनी से मथकर उसका घी निकाल लें और उस घी में समान भाग गेहूँ का आटा डालकर उसको अच्छी तरह सेक लें। फिर उसमें समान भाग काले तिलों का चूर्ण और आवश्यकतानुसार बूरा डालकर लड्डू बना लें। ये लड्डू बहुत पौष्टिक वातनाशक और अग्निवर्धक होते हैं।

भिलावा आयुर्वेद की बहुत प्रसिद्ध, प्रभावशाली और हाजिरजवाब चीजों में से एक है। इससे अनेकों प्रकार के रोग दूर होते हैं। मगर इसके प्रयोग में बहुत सावधानी रखने की जरूरत है। क्योंकि क्रिया की तरह इसकी प्रतिक्रिया भी बहुत जोरदार होती है। कई लोगों को भिलावा खिलाने से वह उनके शरीर में से फूट निकलता है और कई लोग तो इतनी नाजुक प्रकृति के होते हैं कि उनको भिलावा खिलाना तो दूर रहा सिर्फ उसका स्पर्श करने से अथवा सिर्फ उसका धुआं लगने से ही सारे शरीर में फुन्सियां हो जाती हैं। इसलिये इस वस्तु का उपयोग करते समय रोगी के बल और प्रकृति का खूब अध्ययन कर लेना चाहिये अन्यथा अर्थ की जगह अनर्थ होने की सम्भावना रहती है।

भिलावे को शरीर पर लगाने से त्वचा काली पड़ कर उसमें जलन हो जाती है और छोटी २ फुन्सियां हो जाती हैं। इन फुन्सियों का पीब जहां २ लगता है वहां २ नई फुन्सियां पैदा हो जाती हैं। ये फुन्सियां बहुत मुश्किल से आराम होती हैं। कई लोगों को भिलावा लगने से पेशाब में जलन होने लगती है, ज्वर आने लगता है और फोड़ा फूटकर घाव हो जाता है।

लेकिन बाह्योपचार में यह औषधि जितनी भयंकर है उतनी भीतरी उपचार में नहीं है। अगर विधिपूर्वक उचित मात्रा में इसको दिया जाय तो लाभ के सिवाय किसी प्रकार की हानि होने की सम्भावना नहीं रहती है।

भिलावे के अन्दर तीक्ष्ण, गरम, लघुपाकी, कटु, दीपन, पाचन, स्वेदन, मृदुविरेचक, यकृत के लिये उत्तेजक, मूत्रल, कुष्ठनाशक, मज्जातन्तु और रक्ताभिसरण के लिये उत्तेजक, कफ निस्सारक, आम नाशक, कासहर, बवासीर नाशक और रक्त के अन्दर श्वेत कणों को बढ़ाने के धर्म पाये जाते हैं। संक्षेप में यह परम रसायन और धातु परिवर्तक वस्तु है।

भिलावा रक्त के अन्दर बहुत शीघ्रता से मिल जाता है, मगर शरीर से बाहर समय पाकर निकलता है। इसकी प्रधान क्रिया पाचन नलिका पर और उत्तर गुदा पर होती है। यकृत के ऊपर इसकी क्रिया बहुत जोरदार और उत्तेजक होती है जिसकी वजह से पित्त का संचालन बहुत व्यवस्थित होता है।

इससे यकृत में होने वाला रक्त का संचालन बहुत शीघ्रता से और व्यवस्थित रूप से होता है। जिसकी वजह से उत्तर गुदा के ऊपर रक्त का दबाव कम हो जाता है। रक्त का दबाव कम होने से बवासीर के मस्से मुरझाने लगते हैं और गुदा को शक्ति मिलने से वहां पर मल संचय नहीं होने पाता। इन सब कारणों से बवासीर धीरे २ अच्छे हो जाते हैं। यकृत के ऊपर अनुकूल क्रिया होने से भूख बहुत लगने लगती है और दस्त पीले रंग का तथा साफ होता है।

त्वचा के ऊपर भिलावे की क्रिया बहुत जोरदार होती है। त्वचा के रास्ते से बाहर निकलते समय त्वचा में बहुत पसीना होता है, गर्मी पैदा होती है, खुजली छूटती है और त्वचा लाल हो जाती है। त्वचा की विनिमय क्रिया को यह सुधार देता है।

मूत्रपिंड के ऊपर भी भिलावे की क्रिया बहुत तीव्र और उत्तेजक होती है। शुरू में यह पेशाब की तादाद को बढ़ाता है परन्तु मूत्रपिंड में शीघ्र ही थकावट आ जाने की वजह से पेशाब की उत्पत्ति कम होने लगती है। यह क्रिया इतनी तीव्र होती है कि कभी २ पेशाब के साथ खून भी जाने लग जाता है। मूत्र पिण्ड की तरह कामेन्द्रिय के लिये भी भिलावा बहुत उत्तेजक है। इसको खाने के पश्चात् लिंगेन्द्रिय में सुरसरी चलकर उसमें उत्तेजना पैदा

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

होती है। इसके अतिरिक्त मज्जा तन्तुओं के द्वारा भी भिलावा कामेन्द्रिय और अंडकोषों में उत्तेजना पैदा करता है। इस प्रकार यह प्रत्यक्ष और सीधे तौर से कामोत्तेजक और वाजीकरण होता है।

मज्जा तंतुओं के लिये भी भिलावे उत्तेजक है। मज्जातंतुओं के द्वारा शरीर की सब पेशियों को इससे शक्ति मिलती है और उनकी संकोच विकास क्रिया व्यवस्थित हो जाती है।

भिलावा से नाडी की गति तेज हो जाती है और हृदय की धड़कन साफ सुनाई देने लगती है। रक्त के अन्दर श्वेत कणों को बढ़ाने की वजह से यह सूजन को कम करता है। श्वेत कणों को बढ़ाने से और रस ग्रन्थियों की उत्तेजना देने की वजह से सारे शरीर के रक्त को शुद्ध करने में यह बहुत सहायक होता है। मतलब यह कि भिलावा शरीर के प्रत्येक अंग को उत्तेजना देता है और थोड़ी २ मात्रा में इसको लेते रहने से सारे शरीर की विनिमय क्रिया सुधर जाती है।

भिलावा कफ प्रधान और वात प्रधान रोगों में बिशेष रूप से उपयोग में लिया जाता है। अत्यंत उष्ण वीर्य होने की वजह से इसको गर्मी में सेवन नहीं करना चाहिये। छोटे बच्चों को, गर्भवती स्त्रियों को और वृद्ध मनुष्यों को इसका सेवन नहीं करना चाहिये। इसका सेवन करते समय रोगी को घी, दूध-दही, मट्ठा, शक्कर और भात खाने को देना चाहिये। नमक और पानी बन्द कर देना चाहिये। भूख लगने पर दूध पिलाना चाहिये। मांस खाने के लिये बिलकुल नहीं देना चाहिये। मांसाहारी मनुष्यों के लिये यह बहुत हानिकारक होता है। इस औषधि को शुरू करने के पूर्व लंघन और जुलाब दे देना चाहिये। औषधि शुरू करने के पहिले रोगी के पेशाब की जांच कर लेनी चाहिये और औषधि शुरू करने के पश्चात् भी प्रतिदिन पेशाब की तादाद और उसकी स्थिति को रोज जांचते रहना चाहिये। पेशाब की तादाद कम होने पर अथवा पेशाब का रंग धुँधला होने पर औषधि को तुरन्त बन्द कर देना चाहिये। पेशाब लाल और थोड़ा होने लगे तो नारियल का रस या इमली के पत्तों का रस उसकी शान्ति के लिये देना चाहिये। भिलावे की मात्रा अधिक होने पर शुरू में शरीर के अन्दर खुजली चलती है। फिर पसीना होता है। जलन होती है और उसके पश्चात् पेशाब लाल होने लगता है। ऐसे चिह्न दिखलाई देने पर भिलावे को बन्द कर देना चाहिये जिससे ये लक्षण बढ़ने न पावें। आवश्यकता समझने पर इसके दर्पनाशक पदार्थ भी देने चाहिये। कुछ विशेष प्रकृति के लोगों पर भिलावे के असर बहुत अधिक होते हैं इसलिये उनको बहुत थोड़ी मात्रा में इसको प्रारम्भ करना चाहिये और उसके परिणाम देखकर फिर उसकी मात्रा कम या ज्यादा करना चाहिये।

भिलावा और हैजा—हैजे के रोग में भिलावा बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ है। एक भिलावा लेकर उसका डण्ठल निकाल कर उसको आधा तोला इमली के साथ पीसकर दो तोला प्याज के रस के साथ मिलाकर पिला देना चाहिये। यह दवा सिर्फ एक ही बार पिलानी पड़ती है और पेट में जाने के पश्चात् ५ मिनिट के अन्दर ही अपना असर बतलाकर दस्त और उल्टी को बन्द कर देती है। इमली के साथ भिलावा देने से शरीर पर उसकी प्रतिक्रिया होने का डर नहीं रहता और वह जठराग्नि को प्रदीप्त करके शरीर में गर्मी बढ़ाकर अद्भुत तरीके से हैजे के जंतुओं को नष्ट कर डालता है। प्याज का रस भी हैजे के रोग में बहुत गुणकारी वस्तु है। इसलिये उसका प्रभाव भी बहुत अनुकूल होता है।

जंगली जड़ी बूटा के लेखक लिखते हैं कि हैजे के अनेक केसों पर इस प्रयोग के अनुभव किये जा चुके हैं और दूसरी अनेक औषधियों से असफल हुए, मूर्छित अवस्था में पहुँचे हुए, ठण्डे हाथ पैरों वाले भयंकर केस भी इस औषधि से अच्छे हुये हैं। हैजे के सिवाय ? और अतिसार के रोगियों को भी भिलावे को इमली के साथ देने से आश्चर्य जनक लाभ होता है।

भिलावा और मज्जातंतु के रोग—भिन्न २ प्रकार के वात रोगों में भिलावा बहुत गुणकारी वस्तु है। मज्जातंतुओं की सूजन, पक्षाघात, लकवा, अर्दित, ऊरुस्तम्भ इत्यादि रोगों में इसके सेवन से बड़ा लाभ होता है। मस्तिष्क की थकावट में भी इसको देने से बड़ा लाभ होता है। मज्जातंतु समूह के रोगों में भिलावे को थोड़ी मात्रा में अधिक दिन तक देना चाहिये। मद्रास में ऐसे रोगों में भिलावे को इमली के पत्ते, लहसुन, बायबिडंग, नारियल का रस और मिश्री के साथ देते हैं। नवीन आमवात में भी भिलावे को देने से बहुत लाभ होता है। जीर्ण आमवात में इसके प्रयोग से विशेष लाभ नहीं होता है। नवीन आमवात में तीन माशे भिलावे का अवलेह दिन में ३-४ बार देने से २-३ दिन में ही लाभ दिखलाई देने लगता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

फिर भी कई लोगों को भिलावा अनुकूल न पड़ने से ऐसे रोगों में वे लोग इससे लाभ नहीं उठा सकते हैं। ऐसी स्थिति में जंगली जड़ी बूटी के लेखक ने एक ऐसा प्रयोग लिखा है जो बिलकुल खतरे से रहित है। उनका कहना है कि इस प्रयोग से मनुष्य को भिलावे के सब लाभ प्राप्त हो जाते हैं मगर उसकी प्रतिक्रिया से वह बच जाता है। वह योग इस प्रकार है।

२-३ सेर भिलावों को लेकर उनको कूटकर अधकचरे करके खेत के २-३ क्यारों में खाद की तरह बिछा देना चाहिये और फिर उन क्यारों में मेथी बो देना चाहिये। उस मेथी को प्रतिदिन पानी पिलाना चाहिये। जिसमें ८-१० दिन के अन्दर मेथी की तरकारी तैयार हो जायगी। इस मेथी का शाग बनाकर बिना नमक मिरच के प्रतिदिन खाने से संधिवात, उपदंश की वजह से पैदा हुआ पक्षाघात इत्यादि अनेक प्रकार के वात रोग मिट जाते हैं और भिलावे की प्रतिक्रिया होने का बिलकुल डर नहीं रहता।

भिलावा और दमे का रोग—दमे के रोग में भिलावा एक बहुत उत्तम औषधि है। सरदी में उठने वाला दमा इसके फूलों के उपयोग से चला जाता है। गोवा में दमे के रोग में इसको मट्ठे के साथ मिलाकर देते हैं। ज्वर के साथ होने वाली फेफड़े की सूजन और कफ के साथ रक्त गिरने की बीमारी में इसको मुलेठी के साथ लेने से बहुत लाभ होता है।

डॉक्टर मुडीन शरीफ लिखते हैं कि मैंने भिलावे के काले, गाढ़े और चरपरे तेल का उपयोग किया जो कि उसको दबाकर निकाला गया था अथवा गर्मी देकर प्राप्त किया गया था और मैं यह कह सकता हूँ कि तीव्र संधिवात में यह इतना प्रभावशाली है कि इस बीमारी के लिये यह एक विशिष्ट या चमत्कारिक औषधि कहा जा सकता है। दमे के अन्दर भी इस औषधि के फायदे बहुत बहुमूल्य हैं। इसके अतिरिक्त उपदंश की द्वितीय अवस्था में, खूनी बवासीर में, मज्जातंतु के शूल में, मृगी में, अर्धाङ्ग में, स्पर्श शून्यता में, कुष्ठ में, चर्म रोगों में भी यह अधिक लाभदायक है। बाह्य प्रयोग में भी यह तेल बहुत सस्ती और सुन्दर चर्मदाहक वस्तु है। मगर इसका उपयोग करने में बहुत सावधानी और फिक्र रखने की जरूरत है। भिलावे के सेवन काल में फिर चाहे वह भीतरी हो या बाहरी, चमड़ी पर ललाई और चकत्ते होने की संभावना रहती है और शरीर के किसी भी भाग में खुजली या बेचैनी अनुभव होने लगती है। ऐसे लक्षणों के दिखलाई देते ही समझ लेना चाहिये कि इस औषधि का खराब और प्रतिक्रिया पूर्ण असर होने लगा है और ऐसे लक्षणों के दिखलाई देते ही इस औषधि को फौरन बन्द कर देना चाहिये। प्राचीन और मज्जा तंतुओं से सम्बन्धित संधिवात में भिलावा उतना उपयोगी नहीं होता जितना कि वह इसकी नवीन और तीव्र अवस्था में होता है। इसलिये मैं प्राचीन संधिवात के सम्बन्ध में इस औषधि के पक्ष में कुछ अधिक कहने में असमर्थ हूँ। भिलावा दमे के ऊपर भी एक बहुत प्रभावशाली औषधि है, मगर छोटी मात्रा में इसको देने से, जैसा कि कुछ किताबों में बतलाया गया है इसका लाभ बहुत धीरे २ होता है।

इण्डियन मेडिकल गजट सन् १९०२ के मार्च के अंक में डॉक्टर हेमचन्द्र सेन ने भिलावे और उसके तेल के सम्बन्ध में एक मनोरंजक लेख प्रकाशित किया था। उनके मतानुसार जिन २ रोगों में इस वस्तु की सिफारिश की गई है उन सब रोगों में यह औषधि किसी में कम और किसी में अधिक लाभ अवश्य करती है।

कोमान का कथन है कि मैंने तीव्र और नवीन सन्धिवात के बीमारों पर जनरल हॉस्पिटल में इस औषधि का प्रयोग किया। दो सप्ताह की चिकित्सा के पश्चात् यह बीमारी अच्छी हो गई। प्राचीन संधिवात के केसों पर जब इसका उपयोग किया गया तो इससे कुछ भी लाभ दिखाई नहीं दिया। पेट की बीमारी की पुरानी शिकायतों में और आँतों के व्रण और प्राचीन पाकस्थली के प्रदाह में भी इससे कोई लाभ नहीं देखा गया।

भिलावा और सर्पविष—सुश्रुत के मतानुसार इस पौधे की राख दूसरी औषधियों के साथ मिलाकर सर्प विष के उपचार में काम में ली जाती है। शार्ङ्गधर संहिता में भी भिलावे के संयोग से बनने वाली संजीवनी गुटिका को सर्प विष में लाभदायक बतलाया गया है। इससे मालूम होता है कि सर्प विष के ऊपर भी यह औषधि कुछ थोड़ी बहुत क्रिया करती होगी। इसी से सम्बन्धित एक योग किसी संन्यासी के कथन पर जंगली जड़ी बूटी के लेखक ने प्रकाशित किया है। यद्यपि यह योग हमको अधिक विश्वसनीय नहीं मालूम हुआ फिर भी पाठकों की जानकारी के निमित्त यहां पर उसे प्रकाशित करते हैं।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

पलाश या ढाक के वृक्ष के पास जाकर उसकी जड़ के पास २ हाथ गहरा गड्ढा खोदकर उसकी जड़ में एक बड़ा गड्ढा कर उसमें २० तोला भिलावा भर देना चाहिये और गड्ढा करते समय जो छिलके निकलें उन्हीं छिलकों से उस गड्ढे को भरकर ऊपर से मिट्टी का लेप कर देना चाहिये और उसके बाद गड्ढे को फिर मिट्टी से भर देना चाहिये। उसके पश्चात् ६ महीने तक हर आठवें दिन उस पलाश के वृक्ष को खूब पानी पिलाना चाहिये। ६ महीने के पश्चात् उस वृक्ष पर जो फूल आवें उन फूलों को इकट्ठे करके रख लेना चाहिये।

जिस व्यक्ति को सर्प ने काटा हो उसको इसमें से १ तोला फूल पीसकर उसमें १ अतीस की कली का चूर्ण डालकर जब तक विष नष्ट न हो तब तक हर आधे घण्टे के अन्तर से यह औषधि देते रहना चाहिये। वैसे भी पलाश की जड़ में बिना दस्त, उल्टी और किसी प्रकार के उपद्रव के सर्प विष को नष्ट करने की शक्ति रहती है तो ऐसी स्थिति में सम्भव है कि भिलावे के संयोग से उसके गुणों में कुछ वृद्धि हो जाय। ऐसा कहा जाता है कि पलाश के वृक्ष की जड़ में एक बार भिलावा रख देने से उसका असर तीन वर्ष तक कायम रहता है। इसलिये तीन साल तक उसके फूल लगातार उपयोग में लिये जा सकते हैं।

केस और महश्कर के मतानुसार भिलावा सर्प विष के अन्दर बिलकुल निरुपयोगी है।

शरीर की भीतरी चोट और भिलावा—कभी २ आकस्मिक घटना से मनुष्य जब ऊपर या नीचे से कहीं गिर पड़ता है, तो उसके शरीर के भीतर उस चोट की वजह से बड़ी जर्जरता हो जाती है और किसी २ के अन्दर तो यह असर जन्म भर के लिये रह जाता है। ऐसे टाइम में आम्बी हलदी और गुड़, आंवला और गुड़ इत्यादि कई वस्तुओं के खिलाने का रिवाज है, मगर ऐसी औषधियों से साधारण चोट में ही फायदा होता है। भयंकर चोट में ऐसी औषधियों से लाभ नहीं होता। ऐसी भयंकर चोटों में भिलावा बड़ा अद्भुत कार्य करता है। इसके सम्बन्ध में सन् १९१२ के जून मास के वैद्य कल्पतरु में एक लेख प्रकाशित हुआ था जिसका सारांश नीचे देते हैं।

गिरनार नामक सुप्रसिद्ध जैनियों के तीर्थ स्थान में पत्थर चट्टी नामक एक बहुत प्रसिद्ध स्थान है। इस स्थान पर उन दिनों खगेन्द्र स्वामी नामक महन्त रहते थे। एक दिन ये महन्त पहाड़ की एक टेकरी के ऊपर शौच के लिये गये और वहां से वापस लौटते समय उनका पैर फिसलने से वे करीब १०० हाथ नीचे एक खाई में गिर गये। दैवयोग से उनके बाहरी शरीर में तो कोई चोट नहीं आई मगर उनके भीतर ऐसी पछाड़ लगी कि उनका हिलना-चलना बिलकुल बन्द हो गया और पानी पीने तथा पेशाब करने के लिये भी उनसे उठना-बैठना असम्भव हो गया, यह बात जब जूनागढ़ में मालूम हुई तब वहां के दीवान साहब और चीफ मेडिकल आफिसर डॉक्टर त्रिभुवनदास उनके पास गये और उनसे कहा कि आपको ४–६ महीने दवाखाने में रहना पड़ेगा। आपकी सुविधा की हर प्रकार की व्यवस्था कर दी जायगी और आप वहां चलिये। तब महाराज ने कहा कि अभी तो वहां चलना बहुत कठिन है। थोड़े दिनों के बाद कुछ आराम होने पर चलेंगे। कुछ दिनों तक उन्होंने डॉक्टर की दवा वहीं की पर वह चोट इतनी सख्त थी कि उससे कुछ लाभ नहीं हुआ। तब उन्होंने अपने प्राचीन आचार्यों की पुस्तक में एक योग देखा और उसी योग को प्रारम्भ किया। वह योग इस प्रकार था।

७ भिलावे को लेकर उनके टुकड़े करके १० तोला घी में भून लेना चाहिये। उसके पश्चात् उन भिलावों को घी में से निकाल कर बाहर फेंक देना चाहिये और उस घी में गेहूँ का आटा डालकर उसको सेक कर उसमें गुड़ डालकर हलवा बना लेना चाहिये और उस हलवे को खा लेना चाहिये। इस प्रकार ७ दिन करने से चाहे जैसी भयंकर पछाड़ लगी हो मिट जाती है। भिलावे का हलवा खाने से अगर शरीर में गर्मी मालूम हो और शरीर फूट निकले तो ४ दिन तक प्रतिदिन भैंस का गोबर शरीर पर चुपड़ कर ३ घण्टे तक धूप में बैठे रहने से भिलावे का सब असर मिट जाता है।

महन्तजी ने इस प्रयोग को शुरू किया। पहिले ही दिन उनको रात में आराम से नींद आई। दूसरे दिन इस हलवे को खाने के पश्चात् वे बिना किसी मदद के अपने आप पंखा चलाने लगे। तीसरे दिन उनके शरीर में कुछ गरमी मालूम होने लगी और पहिले जहाँ पेशाब को उठते समय वे चार पाँच मनुष्यों का ठेका लेते थे वहां सिर्फ १ मनुष्य के सहारे से वे उठकर पेशाब करने के लिये नीचे उतरे। चौथे दिन जब उन्होंने वह हलवा खाया तब उनका सारा शरीर लाल हो गया और बारीक फुन्सियाँ शरीर पर फूट निकलीं। लेकिन फिर भी उस दिन वे बिना किसी मनुष्य की सहायता से लकड़ी टेके अपने आप बिस्तर में से उठ कर धीरे २ कमरे में फिरने लगे।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

पाँचवें दिन उन्होने यद हलवा नहीं खाया क्योंकि उनके सारे शरीर में भिलावा फूट गया था। तब उन्होंने भैंस का गोबर शरीर पर मलकर धूप में बैठना शुरू किया। इस प्रकार ४ दिन करने पर भिलावे का खराब असर मिट गया और १० दिन के अन्दर उनके शरीर में बहुत शक्ति आ गई और उठराग्नि भी बहुत प्रदीप्त हो गई। दसवें दिन वे जूनागढ़ के लोगों से मिलने के लिये अपने आप पैदल गिरनार पहाड़ से उतर कर जूनागढ़ गये। रास्ते में उनको डाक्टर साहब देखकर चकित हो गये और उन्होंने आश्चर्य से पूछा कि आप बिस्तर पर से यहां कैसे चले आये। आपकी बीमारी तो ६ महीने भी आराम होने काबिल नहीं थी। तब स्वामीजी ने सब हाल उनसे कहा जिसे सुनकर डॉक्टर साहब आश्चर्य-चकित हो गये।

उपरोक्त वर्णन वैद्य कल्पतरु में प्रकाशित होने के पश्चात् और भी कुछ वैद्यों ने इस प्रयोग को अजमाया और उसका परिणाम संतोषजनक पाया। यह खयाल में रखने की बात है कि रोगी की प्रकृति ऋतु, देश और बल का विचार करके भिलावे की मात्रा में कमी ज्यादा की जा सकती है। सात भिलावे की जगह १-२ या ४ भिलावे भी लिये जा सकते हैं और ७ दिनकी जगह ३ या ४ रोज भी सेवन किया जा सकता है।

यूनानीमत—यूनानी मत से भिलावा बहुत गरम होता है। इसको लगाने से चमड़े में जख्म हो जाता है। सरदी से होने वाली मज्जा तंतुओं की बीमारियों जैसे फालिज, लकवा, मृगी, स्मरणशक्ति की कमजोरी इत्यादि रोगों में इसके सेवन से बहुत लाभ होता है। यह बहुमूत्र को मिटाता है और पट्ठों को शक्ति देता है। एक तजुरबेकार का कहना है अगर दांतमें बहुत जोर का दर्द हो तो १ रत्ती भिलावे की लगे हुए पान में रखकर चबावें और उसके पीक को थूकते जावें, इससे दर्द फौरन जाता रहेगा।

भिलावे के सेवन से सर्द प्रकृति वालों की काम-शक्ति बढ़ती है। इसका लेप करने से दाद मिट जाता है। इसकी धूनी से बवासीर के मस्से सूख जाते हैं और इसका तेल धवल रोग के दागों पर फायदा पहुँचाता है।

यूनानी हकीम भिलावे के सहयोग से कई प्रकार की माजूमें तैयार करते हैं। बुकरात हकीम ने भी भिलावे से दो प्रकार की माजूमें तैयार करने की विधि निकाली है। ये दोनों प्रकार की माजमें सर्दी से होने वाली दिमाग की बीमारियों में लाभ पहुँचाती हैं, हाजमें की शक्ति को बढ़ाती हैं और कामशक्ति को उत्तेजित करती हैं।

(१) हरड़ बहेड़ा, आँवला ये तीन २ तोला, बाल छड़, कुन्दर, बच, काली मिरच, सोंठ और भिलावे का शहद (भिलावे के अन्दर रहने वाला काला रस) डेढ़ डेढ़ तोला। इन सब चीजों को कूट कर इनमें थोड़ा सा रोगन बादाम मिला लें, फिर इसमें भिलावे का शहद मिलाकर सब चीजों में जितना वजन हो उससे तिगुने शहद में माजूम बना लें और उसको जौ के ढेर में गाड़ दें। ६ महीने के बाद में उपयोग में लेवें। इसकी मात्रा ४॥ माशे की है।

(२) नुकरूयाक बीर, अकरकरा, कलोंजी, कूट, काली मिरच, पीपर और बच हर एक तीन २ तोला। पाषाण भेद, हींग, जरावंद, मर्द हर्ज, हुब्बुलगार, जुनबेदस्तर, राई और चित्रक हर एक डेढ़ २ तोला, भिलावे का शहद १। तोला, इन सब चीजों को कूट छानकर अखरोट और तेल में तर कर लें और फिर तिगुने शहद में माजूम बना लें। ६ माह के पश्चात् इसको ४॥ माशे की मात्रा में खाने से मनुष्य के अनेक प्रकार के रोग मिट जाते हैं।

भिलावे की मगज लिंगेन्द्रिय को बहुत शक्ति देती है और कामशक्ति को बढ़ाती है। सर्दी से होने वाली दिमागी बीमारियों में लाभ पहुँचाती हैं।

भिलावे का एक दाना इमली के साथ कूट कर खाने से एक ही दिन में पेट के कृमि मर जाते हैं। सुजाक में भी इससे एक ही दिन में फायदा होता है। मगर इसमें नमक बिलकुल छोड़ देना चाहिये। इसका छिलका अत्यधिक कामशक्ति-वर्धक है। बालों को काले रखने के लिये भी यह बहुत मुफीद है। हकीम शरीफ खां लिखते हैं कि भिलावे की मगज को काम-शक्तिवर्धक माजूनों में मिलाकर सेवन किया। इससे कामेंद्रिय और मेदे को बहुत शक्ति मिली तथा वीर्य की बहुत रुकावट हुई। एक बार सर्दी की वजह से नजला हो गया। कितना ही इलाज किया मगर कुछ फायदा नहीं हुआ। कुचले और अफीम से भी लाभ नहीं हुआ। उसके पश्चात् भिलावे को मय मगजके शहदके साथ खिलाया जिससे नजला बिलकुल मिट गया।

नारू पर भिलावा अच्छा काम करता है। एक छोटा सा भिलावा लेकर बिना उसकी टोपी उतारे हुये उसको गुड़ में लपेट कर नारू के रोगी को निगला दें। तीन दिन तक इस प्रकार निगलाने से नारू बिलकुल मिट जाता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

भिलावे के उपद्रव और उनकी शांति—भिलावे को अधिक मात्रा में लेने से गर्मी खुजली, भीतरी सूजन और बेचैनी पैदा हो जाती है तथा हलक और जबान में छाले पैदा हो जाते हैं। इसके उपद्रवों को दूर करने के लिये गाय और बकरी का ताजा मक्खन और तिलों का तेल खिलाना चाहिये और बदन पर मालिश करना चाहिये। जेदवार को गाय के दही में मिलाकर चटाना चाहिये। नाक में रोगन बनफ्शा और रोगन बादाम टपकाना चाहिये। सिर पर ठण्डी चीजों का मालिश करना चाहिये। भिलावे की वजह से घाव पड़ जाय तो उस पर मोम का तेल लगाना चाहिये। अगर सूजन हो तो मरवे के पत्तों का लेप करना चाहिए। इमली के पत्तों का रस पिलाने से भिलावे का जहर मिट जाता है। इमली के दरख्त की अंतर छाल की दही में पीसकर भिलावे की वजह से होने वाले फोड़े-फुन्सियों पर लगाने से बहुत जल्दी आराम हो जाता है। इसकी छाल, पत्ते और फल भिलावे के लिये उत्तम दर्प-नाशक वस्तुएँ हैं।

उपयोग-गंडमाला—गंडमाला, कुष्ठ और उपदंश सम्बन्धी रोगों में भिलावे को बहुत थोड़ी मात्रा में देने से लाभ होता है।

बवासीर—एक माशा गाय के घी में थोड़ा सा भिलावे का मगज डालकर उसको औटाकर गुदा के भीतरी भाग में लगा देना चाहिये और एक घण्टे तक कंडे की आंच से इस प्रकार हलका २ सेंक करना चाहिये जिससे अण्डकोषों को गरमी न पहुँचे। इस प्रकार करने से बवासीर से गिरने वाला खून दूसरे दिन बन्द हो जाता है और उसका चटका मिटकर आराम से नींद आती है।

कृमिरोग—भिलावे को छोटी मात्रा में दही के साथ अथवा इमली के साथ खाने से कृमि नष्ट हो जाते हैं।

दाँत क दर्द—डाढ़ की पीड़ा मिटाने के लिये भिलाबे की राख से मंजन करना चाहिये। भिलाबे के तेल को त्वचा पर लगाने से १२ घण्टे में फफोला पैदा हो जाता है।

बनावटें—भल्लातक क्षीर—उत्तम भिलावे जिनको किसी प्रकार की चोट न लगी हो, किसी प्रकार का कीड़ा न लगा हो, जो रोग रहित हों, रस, प्रमाण और वीर्य से भरपूर हों और पके हुये जामुन के फल सदृश वर्ण वाले हों उन भिलाबों को जेठ और आषाढ़ के महीनों में संग्रह करके जौ के ढेर में गाड़ दें और ४ मास तक वहीं पड़े रहने दें। पश्चात् अगहन और पौष मास में उनका सेवन करें। सेवन से पूर्व शीतल, स्निग्ध तथा मधुर आहार-विहार और औषधियों से शरीर को संस्कृत कर लेना चाहिये। उष्ण प्रकृति वाले लोगों को ग्रीष्म ऋतु में और जिन दिनों में पित्त का उभाड़ हो उन दिनों इनका सेवन नहीं करना चाहिये।

सबसे पहिले १० भिलावों को कुचल कर आठ गुने जल में डालकर हलकी आँच से पकावें। जब पानी का आठवां भाग शेष रह जाय तब उसको उतार कर छान लें और उसमें दूध मिला दें। इस दूध को पीने से पहिले सारे मुंह को भीतर से घी से तर कर देना चाहिये और थोड़ा सा घी भी पी लेना चाहिये जिससे गले तक सब भाग घी से तर हो जाय। उसके पश्चात् उस दुग्ध मिश्रित रस को पी लें। १० भिलावों से प्रारम्भ करके प्रतिदिन एक २ भिलाबा बढ़ाते रहना चाहिये। जब ३० भिलावे तक पहुँच जाय तब फिर एक २ भिलावा घटाते हुए १० तक ले जाना चाहिये। इस प्रकार १ हजार भिलावों का प्रयोग करना चाहिये। १ हजार से अधिक भिलावों का सेवन निषिद्ध है। जब प्रातःकाल सेवन किया हुआ यह रसायन पच जाय तब घृत युक्त दूध के साथ साठी चावलों का भोजन पथ्य में ग्रहण करें।

महर्षि चरक लिखते हैं इस योग का सेवन करने वाले मनुष्य का शरीर पर्वत के समान दृढ़ और गठीला होता है। उसकी इन्द्रियां दृढ़ और अतिबल सम्पन्न होती हैं। उसका रूप अत्यन्त सुन्दर और तेजस्वी हो जाता है और उसका वर्ण निर्मल और स्वर मेघ-गरजन के समान होता है। उसकी काम-शक्ति बहुत प्रबल रहती है और नवयुवती स्त्रियों को वह बहुत प्रिय रहता है। उसकी सन्तानें भी बहुत दृढ़ होती हैं। यह परम रसायन है।

अष्टांग संग्रह के मतानुसार जितने दिनों तक भिलावों का प्रयोग किया जाय उससे तिगुने काल तक दूध, घी और सांठी चावलों के भात को पथ्य में ग्रहण करना चाहिये।

यह चरक संहिता का प्रसिद्ध योग है। मगर आज कल के क्षीण वीर्य पुरुष इतनी बड़ी मात्रा में भिलावों को सहन नहीं कर सकते। इसलिये उनको एक भिलावे से यह प्रयोग प्रारम्भ करना चाहिये और ज्यों २ वह सहन होता जाय त्यों २ उसकी मात्रा धीरे २ बढ़ानी चाहिये।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

भल्लातक चौद्र—भिलावों के छोटे २ टुकड़े करके उनको एक ऐसे मिट्टी के घड़े में भरे जिसके पेंदे में छेद हो। उसके पश्चात् भूमि में गढ्ढा करके उस गड्ढे में एक घी से तृप्त किया हुआ घड़ा जिसमें कोई छिद्र न हो रख दें। उस घड़े पर यह भिलावे का घड़ा इस प्रकार रखें कि इस घड़े के पेंदे का छेद उस घड़े के मुँह के बिलकुल बीच में रहे। फिर दोनों की सन्धियों को कपड़ मिट्टी से बन्द कर दें। फिर नीचे के घड़े के गड्ढे में मिट्टी भरकर उस घड़े को बिलकुल स्थिर कर लें। केवल नीचे का घड़ा ही गड्ढे में होना चाहिये। दूसरा भिलावों से भरा हुआ घड़ा भूमि के ऊपर रहना चाहिये। भिलावों से भरे हुये घड़े के मुँह पर मिट्टी की ढँकनी ढँककर उसकी दर्जों को भी कपड़े से बन्द कर देना चाहिये और उस सारे घड़े पर काली मिट्टी का लेप कर देना चाहिये। जब यह यंत्र तैयार हो जाय तब ऊपर वाले घड़े के चारों तरफ उपले (कण्डे) रखकर आग लगा देनी चाहिये। इस अग्नि से भिलावे का तेल द्रवित होकर नीचे के घड़े में चला जायगा।

इस तेल को उचित मात्रा में आठवाँ भाग शहद और शहद से दूना घी मिलाकर सेवन करने से मनुष्य १०० वर्ष तक बुढ़ापे से दूर रहता है। आधुनिक समय में इस तेल की मात्रा २-३ बूँद से ज्यादा नहीं होनी चाहिये।

नारसिंह चूर्ण—सोंठ, मिर्च, पीपर, हरड़, बहेड़ा, आँवला, तिल और भिलाबा। इन सब चीजों को समान भाग लेकर चूर्ण बना लेना चाहिये। इस चूर्ण को १॥ माशे की मात्रा में आधा तोला घी, १ तोला शहद और १ तोला मिश्री के साथ सेवन करना चाहिये और पथ्य में सिर्फ दूध पर ही रहना चाहिये। अन्न, जल और दूसरी सब वस्तुओं का त्याग कर देना चाहिये। इस योग का कुछ दिनों तक सेवन करने से जलोदर की भीषण व्याधि और दूसरे सब प्रकार के उदर रोग मिट जाते हैं।

बवासीर नाशक वटी—हरड़, काले तिल, शुद्ध भिलावा, नीम के बीजों की मगज, बकायन नीम के बीजों की मगज, कांकच के बीज। ये सब चीजें एक २ तोला, रसोत तथा पुराना गुड़ तीन २ तोला। इन सब चीजों को लोहे की खरल में डालकर लोहे के दस्ते से ही २४ घन्टे तक खूब कूटना चाहिये। फिर उसकी तीन २ माशे की गोलियाँ बना लेना चाहिये। इन गोलियों में से सबेरे शाम एक २ गोली पानी अथवा दूध के साथ लेने से बादी बवासीर मिट जाता है।

भिलावे के फल का पाक—मगसर-पौष के महीने में जब नवीन भिलावे आते हैं तब भिलाबों के ऊपर एक प्रकार का फल लगा हुआ रहता है जो पीले रंग का होता है और सूखने पर भिलावे की टोपी के आकार में परिणत हो जाता है। यह फल कुछ चपटा, चिकना, चमकदार, पीले रंग का और आकार में सूरती बोर सरीखा होता है। इसमें बीज नहीं होता। यद्यपि बहुत से लोग इस फल के सम्बन्ध में परिचित नहीं हैं तथापि यह एक बहुत कीमती वस्तु है। इसमें पहिला गुण तो यह है कि इसमें भिलावे के बराबर गरमी और उग्रता नहीं होती। भिलावे को व्यवहार करते समय जो भय रहता है वह भय इसमें नहीं रहता। इसका उपयोग बालक और नाजुक प्रकृति की स्त्रियाँ भी कर सकती हैं। दूसरा गुण यह है कि इसमें मिठास रहती है यह मनुष्य की शक्ति को बढ़ाता है और अनेक प्रकार के वायु रोग और प्रदर रोग में बहुत फायदा पहुंचाता है। इन फलों का पाक बनाया जाता है। यह पाक वायु के रोग, काम-शक्ति की कमजोरी तथा दूसरे रोगों में भी फायदा करता है। इस पाक को बनाने की विधि इस प्रकार है।

भिलावे के पके हुए फलों को लेकर उनमें से भिलाबों को अलग कर देना चाहिये। फिर उन फलों के दो २ चार २ टुकड़े करके छाया में सुखा लेना चाहिये। फिर उनको धूप में सुखाकर पीसकर चलनी में चाल लेना चाहिये। फिर चने का आटा या बेसन १ सेर लेकर उसमें पाव भर घी का मोअन डालकर घी में सेक लेना चाहिये। जब तीन चौथाई सिक जाय तब उसमें भिलावे के फल का चूर्ण पाव भर मिला देना चाहिये। जब वह पूरा सिक जाय तब उसमें भंग का चूर्ण तीन माशे, काली मिर्च का चूर्ण आधा तोला, इलायची का चूर्ण आधा तोला, बादाम की मगज का चूर्ण पाव भर मिला देना चाहिये। इसके पश्चात् उसको नीचे उतार कर तीन तारी शक्कर की चाशनी मिला देनी चाहिये और पांच २ तोले से लेकर दस २ तोले के लड्डू बना लेने चाहिये। इन लड्डुओं में से प्रति दिन एक २ लड्डू प्रातःकाल खाना चाहिये। इस पाक को खाते समय किसी विशेष प्रकार से परहेज की आवश्यकता नहीं होती।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

भ्रमर छल्ली (भोलन)

नाम—संस्कृत—भ्रमरछल्लिका, भ्रमरा, भृङ्गमूलिका, भृङ्गाह्वा, छालि, उग्रगंधा। हिन्दी—भ्रमर छल्लिं, बंदारू, बौरंगा मेलन, भामिनि, भौलन, भुर कुल, धौली, कुकुर कट्ट, फलदु इत्यादि। बम्बई—काला कद्दू, काला करवा। गध्यप्रान्त—बोहर, पोतुर। मराठी—भदर छाल, भोरसाल, भ्रमर सालि, भुरसाल, दोन्द्र। पंजाब—बरथू, माना बिना, थाब, भुर कुर। गुजराती—भ्रमर सालया, भ्रमर छाल, डोड्रों। देहरादून—भौलन। दक्षिण—जंगली अनार। तामील—विलारी। तेलगू—बंदारू। लेटिन—Hymenodictyon Excelsum (हेमिनोडिक्टीअन एक्सेलसम)।

वर्णन—यह एक बड़ी जाति का वृक्ष होता है। इसकी ऊँचाई ३० फुट से ५० फुट तक होती है और इसके पिंड की गोलाई ६ से लेकर ८ फुट तक होती है। अवध और संयुक्त देश में इसकी लम्बाई और गोलाई बहुत अधिक होती है। इसकी छाल भूरे रंग की होती है। इसके पत्ते ६ से लेकर १२ इञ्च तक लम्बे, डण्ठल की तरफ से गोल और दूसरी तरफ से कुछ लम्बे होते हैं। इसके फूल गुच्छों में लगते हैं। ये कुछ हरापन लिये हुये सफेद रंग के और सुगन्ध युक्त होते हैं। इसके बीज १० मिलीमीटर लंबे और ३॥ मिलीमीटर चौड़े होते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत से इसकी छाल गरम, कड़वी और तीक्ष्ण होती है। यह रुचि और भूख को बढ़ाती है। गले के रोगों को दूर करती है और हर प्रकार की गठानों को अच्छा करती है।

इसकी अन्तर छाल कड़वी और संकोचक होती है। इसके सब गुण धर्म शिनकोना की छाल के समान होते हैं। शिनकोना की छाल के बदले ज्वर को दूर करने के लिये इसका उपयोग किया जा सकता है। इसका स्तम्भक धर्म शिनकोना की छाल की अपेक्षा अधिक जोरदार होता है।

इंडोचायना में इसकी लकड़ी का चूर्ण दाद और विसर्पिका पर लगाने के काम में लिया जाता है। इसकी छाल को औटाकर पिलाने से तिजारी और दूसरे पार्यायिक ज्वर मिटते हैं। गले के रोगों के लिये यह लाभदायक है।

भिण्डी

नाम—संस्कृत-अश्रत्रक, भेंडा, भिण्डा, भिंडतिका, चतुष्पुंड्रा, चतुष्पदा, दारिवका, गंधमूला, करपर्णा, चैत्र सम्भवा, पिच्छिला, सुपक्वो, टिंडिसा, वृत्तबीजा, इत्यादि। हिन्दी—भिंडी, रामतुरइ, रामतुरी। गुजराती—भिंड, भिंडा। बंगाल—रामतोरइ, ढेरस, धेनरस। बम्बई—भेंडा, भेंडी। दक्षिण—भेंडी। मराठी—भेंडा। पंजाब—भिंडी, रामतुराई, भिंडातोरी। तामील—वेंड़ाइ, वेंडी। तेलगू—वेंडा। उर्दू—भेंडी। फारसी—बामिया। अंग्रेजी—Lady's Finger (लेडीज फिंगर)। लेटिन—Hibiscus Esculentus (हिबिस्कस एस्क्यूलेंटस)।

वर्णन—भिंडी का शाग सारे भारतवर्ष में सब ओर प्रसिद्ध है। इसलिये इसके विशेष विवेचन की आवश्यकता नहीं।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत—आयुर्वेदिक मत से भिंडी चिकनी, लुआबदार, स्वादिष्ट रुचिकारक, पौष्टिक, संकोचक, कामोद्दीपक, कफ और वात को पैदा करने वाली, कठिनाई से हजम होने वाली और खांसी, मंदाग्नि, वात और पीनस रोग में हानिकारक होती है। ताजी और कोमल भिंडी उत्तम स्नेहन और मूत्रल होती है।

भिंडी का काढ़ा मिश्री के साथ देने से मूत्रकृच्छ्र, मूत्रावरोध, पथरी और सुजाक में लाभ होता है। पुराने आमातिसार में इसकी साग लाभदायक होती है। इसके कच्चे बीज कोष का काढ़ा स्नेहन, शान्तिदायक और मूत्रल पदार्थ की तरह जुकाम-सम्बन्धी विकृति, पेशाब की जलन और सुजाक में दिया जाता है।

यूनानी मत—यूनानी मत से भिंडी लुआबदार, मीठी, ठण्डी, अग्निवर्द्धक, कामोद्दीपक, खून बढ़ानेवाली, पित्त विकार को नष्ट करने वाली, सुजाक और अनैच्छिक वीर्यस्राव को बन्द करने वाली तथा पथरी और अतिसार में लाभ पहुंचानेवाली होती है। यह कब्जियत को पैदा करती है।

उपयोग—मूत्रकृच्छ्र—भिंडी और उसके बीजों का चेप निकाल कर मिश्री मिलाकर पीने से मूत्रकृच्छ्र की दाह मिटती है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

मूत्र और वीर्य की दाह—मूत्र और वीर्य-सम्बन्धी अंगों की दाह मिटाने के लिये भिंडी और उसके बीजों का शरबत बहुत उपयोगी है।

प्रमेह—भिंडी की सूखी जड़ के चूर्ण में मिश्री मिलाकर खाने से प्रमेह मिटता है। कच्ची भिंडी के चूर्ण में मिश्री मिलाकर दूध के साथ फक्की लेने से भी प्रमेह मिटता है।

पुरुषार्थ-वृद्धि—भिंडी की जड़ का पाक बनाकर खाने से पुरुषार्थ-वृद्धि होती है।

भिल्लर

नाम—हिन्दी—भिल्लर, इरुम, पनियाला, पानकेन। बम्बई—बोक। नेपाल—कैंजल। गढ़वाल—केन कोटसेमला। आसाम—युरियाना। इङ्गलिश—Vinagar Wood (व्हिनेगर वुड)। तामील—मदागिरवेम्बु, टोंडी। तेलगू—नालूपूमुष्टी। लेटिन—Bischofia Javanica (बिसचोफिया जावनिका)।

वर्णन—यह एक बड़ी जाति का हमेशा हरा रहने वाला वृक्ष होता है। इसकी छाल गहरी भूरी और मुलायम होती है। इसके पत्ते एक के बाद एक लगते हैं। इसके फूल बहुत छोटे होते हैं। इसके फल भूरे तथा काले रङ्ग के और मुलायम होते हैं। हर एक फल में ३-४ चिकने और चमकदार बीज होते हैं। यह वनस्पति हिमालय के जङ्गलों में तथा छोटा नागपुर, आसाम, बरमा और चिटगांव में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—आसाम में इसके पत्तों का रस पूर्ण व्रणों को मिटाने वाला होता है।

भींत गलोड़ी

नाम—गुजरात—भींतगलोड़ी, कानोटी। कच्छी—भितवल, भीतचट्टी। अंग्रेजी—Toadflax। लेटिन—Linaria Ramosissima (लिनेरिया रेमोसिसिमा)।

वर्णन—इसके पौधे लताओं की तरह दीवालों पर तथा नदी किनारे उगते हैं। इसकी जड़ दीवाल के अन्दर रहती है और उससे बहुत सी पतली२ शाखाएँ निकल कर दीवाल के अन्दर फैल जाती हैं। इसके पत्ते छिरेटे के पत्ते की तरह होते हैं। इसके फूल पीले और फल छोटे २ होते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—बाँट के मतानुसार यह वनस्वति मधुप्रमेह के उपर काम में ली जाती है और इसके पत्तों को पीस कर फोड़े फुंसियों पर बाँधते हैं।

मुरे के मतानुसार मधुप्रमेह के लिये इस वनस्पति की बहुत प्रशंसा है।

भुइगली

नाम—संस्कृत—वासुका। मराठी—भुँइगली। गुजराती—भोंयगड़ी। तामील—चेप्पुनिरंजी। तेलगू—चेरागेड्डमु। लेटिन—Indigofera Enneaphylla (इंडिगोफेरा इनेफिला)।

वर्णन—इसके पौधे बरसात में बहुत पैदा होते हैं। इस पौधे की उँचाई आधे से लेकर १॥ फीट तक होती है। इसके पत्ते सरपंखे के पत्तों की तरह होते हैं। इसके फूल लाल रङ्ग के, सुन्दर, पतंग के आकार के और फलियाँ छोटी होती हैं। हर एक फली में दो २ बीज रहते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—इसके बीज बहुत पौष्टिक माने जाते हैं। अकाल के समय गरीब लोग इन बीजों को खाते हैं। इसके पौधे का रस मूत्रल, रक्त शोधक और चिर गुणकारी पौष्टिक वस्तु की तरह काम में लिया जाता है।

इसके पौधे का रस रक्तातिसार नाशक, धातु परिवर्त्तक और मूत्रल वस्तु की तरह उपयोग में लिया जाता है। मैथुन शक्ति की कमजोरी में यह धातु-परिवर्तक औषधि की तरह काम में लिया जाता है। कुष्ठ रोग में भी इसका उपयोग होता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

भुंई आंवला

नाम—संस्कृत—भूम्यामली, शिवा, ताली, सूक्ष्मफला, भूम्यामलकी इत्यादि। हिन्दी—भुँइआँवला, भद्र आँवला, पाताल आँवला, जराम्ला। बंगाल—भुइ आँवला। बम्बई—भुँई आँवला। गुजराती—भोंय आवड़ी। मराठी—भुँइ आँवला। तामील—कीलकायनेल्ली। तेलगू—नेलनेल्ली। उर्दू—भुइं आँवला। लेटिन— Phyllanthus Niruri (फिलेंथस निरूरी)।

वर्णन—यह क्षुद्र वनस्पति बरसात के दिनों में सर्वत्र पैदा होती है। इसके पत्ते बहुत छोटे, आँवला के पत्तों के समान तथा लम्बगोल और सँकड़े होते हैं। पत्ते के पिछले भाग में पीले रङ्ग के छोटे २ फल आते हैं जिनका स्वाद आँवले के समान होता है। बरसात के आखिर में यह वनस्पति सूख जाती है। इसलिये इसको कार्तिक मास में संग्रह करके सुखा कर रख लेना चाहिये।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत से भुँई आँवला कसैला, खट्टा, शीतल, पित्त और प्रमेह को नष्ट करने वाला, मूत्र की रुकावट को मिटाने वाला और दाह को शान्त करने वाला होता है।

भावप्रकाश के मतानुसार भुँइ आंवला, वातकारक, कड़वा, कसेला, मधुर, शीतल तथा प्यास, खाँसी, रक्तपित्त, कफ, पाँडु रोग और क्षय को नष्ट करने वाला होता है।

शोढल के मतानुसार भुँइ आँवला विषनाशक और पुत्रदायक होता है।

गणनिघंटु के मतानुसार भुँइ आँवला शीतल, कड़वा, कसैला, मधुर, हलका, रुचिकारक तथा पांडुरोग, रक्तपित्त, कफ, कोढ़, विष, श्वास, तृषा, दाह, हिचकी, खाँसी, क्षत और क्षय का नाश करता है।

यूनानी मत—यूनानी मत से यह वनस्पति अग्निवर्धक और फोड़े-फुन्सी तथा आमातिसार में बहुत लाभदायक होती है। इसका फल कड़वा होता है और वह क्षयजन्य व्रण, चोट, रगड़, खाज और दाद में उपयोगी है।

डॉक्टर देसाई के मतानुसार भुइ आँवला दीपन, पाचन, मूत्रल, दाहशामक, शोथनाशक और पार्यायिक ज्वरों को रोकने वाली होती है। इसकी कोमल डालियों की फांट बनाकर आमातिसार में देते हैं। कामला रोग में इसकी १ तोला जड़ पीस कर सबेरे-शाम दूध के साथ दी जाती है। इसके पञ्चांग का क्वाथ मलेरिया ज्वर में दिया जाता है। इस क्वाथ को देने से दस्त साफ होता है, पसीना छूटता है, नींद आती है, यकृत और तिल्ली की वृद्धि कम होती है और धीरे २ ज्वर का आना बन्द हो जाता है। भुँइ आँवले से पेशाब की तादाद बढ़ती है और उसकी जलन कम होती है, इस कारण इसको सुजाक में भी देते हैं। भुँइ आँवले का २ तोला स्वरस घी के साथ मिला कर पीले रंग के प्रमेह में सबेरे-शाम दिया जाता है। जल शोथ में इसके पञ्चांग की फांट बनाकर देते हैं। अत्यार्तव में इसकी जड़ों को पीस कर उनका निर्यास बना कर देते हैं। स्तनशोथ में इसके पञ्चांग का लेप किया जाता है।

संक्षेप में मूत्र पिंड के रोगों पर तथा मूत्रपिंड से लेकर मूत्राशय के सब भागों तक इस वनस्पति का बहुत असर होता है। सूजन पर भी यह गुणकारक है। नवीन सुजाक के ऊपर इस वनस्पति का रस चम्मच की मात्रा में जीरे और शक्कर के साथ देने से पेशाब की जलन शांत होती है। कामला और पित्त विकार पर भी इसका उपयोग होता है।

गोल्ड कास्ट में इसके पत्तों को पीस कर सुजाक की बीमारी के उपचार में देते हैं। इस वनस्पति के दूसरे अंग कब्जियत को दूर करने के लिये उपयोग में लिये जाते हैं। इसके पत्ते को पानी में उबालकर यह पानी पेट की पीडा को दूर करने के लिये पिलाया जाता है। इस वृक्ष का प्रधान उपयोग आँतो के दर्द से होने वाले आमातिसार में किया जाता है।

लारियूनियन में यह वृक्ष जलोदर, आमातिसार, रक्तातिसार, सुजाक और मूत्रकृच्छ्र इत्यादि रोगों में काम में लिया जाता है।

इसके पत्ते अग्निवर्धक होते हैं। इस वनस्पति का दूधिया रस कष्टसाध्य और वेदनायुक्त अर्बुद पर लगाने के काम में लिया जाता है। इसके पत्ते का पुल्टिस यदि नमक मिलाकर लगाया जाय तो गीली खुजली को दुरुस्त करता है और बिना नमक मिलाये यह रगड़ पर लगाया जाता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

कोकण में चावल के पानी के साथ इसकी जड़ को पीसकर अत्यधिक रजःस्राव को रोकने के लिये देते हैं।

ए० जे० अमादेव ने फरमास्यूट जरनल में सन् १८८८ के अप्रैल मास के अंक में लिखा था कि इसकी जड़ और पत्तों का काढ़ा बहुत कड़वा होता है और पोर्टोरीको के निवासी इसे पार्यायिक ज्वरों के उपचार में काम में लेते हैं। मैंने भी इसका कई स्थानों में उपयोग किया है और मैं कह सकता हूँ कि पार्यायिक ज्वरों में सामयिक आक्रमण के समय इस औषधि की उत्तमता कई बार सिद्ध हो चुकी है। मैं स्वयं इस सारे पौधे से टिंचर तैयार करता था और उसी को प्रातःकाल २ ड्राम की मात्रा में देता था, कभी २ इसको दुबारा भी दे दिया करता था। इसको दुबारा देने से आँतों के ऊपर इसका कुछ हलका विरेचक असर अवश्य हुआ। मगर इसका लाभ बहुत प्रशंसा के काबिल रहा। यह दीर्घकाल स्थायी पार्यायिक ज्वरों को जिनमें यकृत और तिल्ली की बाधा भी होती है, बहुत लाभ पहुंचाता है। इसकी जड़ और पत्तों का शीत निर्यास भी एक उत्तम कटु पौष्टिक पदार्थ है। यदि इसको ठंडी हालत में बार २ लिया जाय तो यह मूत्रल औषधि का काम भी करता है। इसकी ताजा जड़ पीलिया की एक उत्तम दवा मानी जाती है।

राबर्ट्स के मतानुसार इसकी ताजी जड़, पत्ते और डंठलों का काढ़ा सर्प-विष के उपचार में अंतःप्रयोग में काम में लिया जाता है मगर केस और महस्कर के मतानुसार यह सर्प-विष के उपचार में निरुपयोगी है।

कर्नल चोपरा के मतानुसार भुंई आँवला जीर्ण आमातिसार, जलोदर, अत्यधिक रजःस्राव और घावों के ऊपर काम में लिया जाता है। यह स्वाद में कड़वा होता है और इसमें फायलेंथिन नामक द्रव्य पाया जाता है।

उपयोग—इसका दूधिया रस घाव पर लगाने से वह जल्दी भर जाता है।

खुजली—इसके पत्तों के पुल्टिस में नमक मिलाकर लगाने से खुजली मिटती है।

रगड़—इसके पत्तों को पीसकर रगड़ पर लगाने से पीड़ा मिट जाती है।

कामला—इसकी सवा तोला ताजी जड़ को दूध के साथ पीस छान कर दिन में दो बार पिलाने से कामला रोग मिटता है।

पुरानी संग्रहणी—इसकी कोमल कोंपलों को मेथी के बीजों के साथ देने से पुरानी संग्रहणी मिटती है।

जलोदर—इसके पंचांग का क्वाथ बनाकर पिलाने से मूत्रवृद्धि होकर जलोदर मिटता है।

मासिक धर्म की अधिकता—इसकी जड़ को चावलों के माड़ के साथ देने से मासिक धर्म में अधिक रुधिर का निकलना बन्द हो जाता है।

पार्यायिक ज्वर—इसके कोमल पत्ते और काली मिरचों को पीसकर उनकी जायफल के समान गोली बनाकर देने से मलेरिया ज्वर और फिर २ कर आने वाला ज्वर छूट जाता है।

मुखपाक—इसके पत्तों का हिम बनाकर उससे कुल्ले करने से मुख पाकमिटता है।

रक्त प्रदर—इसकी जड़ के चूर्ण को चावलों के पानी के साथ २-३ दिन तक देने से रक्त प्रदर मिटता है।

मूत्र सम्बन्धी रोग—मिश्री के साथ इसके पंचांग का क्वाथ पिलाने से मूत्रकृच्छ्र और सब प्रकार के मूत्र रोग मिटते हैं।

मात्रा—इसके पत्तों की साधारण मात्रा ३॥ माशे तक है।

भुंई आँवला लाल

नाम—हिन्दी—लालभुँइआँवला, हजारमनी। गुजराती—खरसट, भुइ आँवली। मराठी—लालभुंडज आवलो। पोरबन्दर—कंढारी आँवली। लेटिन – Phyllanthus Urinaria (फिलेंथस यूरिनेरिया)।

वर्णन—इसके क्षुप भुइ आँवले से मिलते हुए किन्तु कुछ ललाई लिये हुए होते हैं। इसके फूल बिना डंठल के और फल खड़बड़े होते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—इसके गुण धर्म भुई आँवले के समान ही होते हैं। इसके सूखे पौधे का काढ़ा चाय के चम्मच की मात्रा में कामला रोग को दूर करने के लिये दिया जाता है।

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

इसका पौधा जलोदर के रोग में मूत्रल औषधि की तरह बहुत उपयोग में लिया जाता है। सुजाक और मूत्र-सम्बन्धी दूसरी बीमारियों में भी इसका बहुत उपयोग होता है।

छोटा नागपुर में इसकी जड़ छोटे बच्चों को नींद लाने के लिये दी जाती है। लारि यूनियन में यह पौधा मूत्रल, पसीना लाने वाला, शोधक और ऋतुस्राव-नियामक माना जाता है। इसका निर्यास रक्तातिसार और मूत्राशय प्रदाह को दूर करने के लिये दिया जाता है।

कम्बोडिया में इसका पौधा कटु, पौष्टिक, संकोचक और ज्वर-निवारक औषधि की तरह उपयोग में लिया जाता है।

भुंइ आंवला बड़ा

नाम—गुजराती—मोटी भोंय आवली। मराठी—मोटी भुइआवली। काठियावाड़—मोटी भोइ आवरी। लेटिन—Phyllanthus Simplex (फिलेंथस सिम्प्लेक्स)।

वर्णन—इसके पौधे भुंइ आँवली के पौधे से कुछ बड़े होते हैं। इसकी डालियाँ कुछ पतली सी और दबी हुई होती हैं। इसके फूल और फल भुइं आवला के समान ही होते हैं।

गुण, दोष और प्रभाव—इसके ताजा पत्ते, फूल और फल, जीरा और मिश्री इन तीनों को समान भाग लेकर पीसकर एक चाय के चम्मच की मात्रा में दिन में २ बार सुजाक को मिटाने के लिये दिया जाता है। इसके ताजा पत्तों को कुचल कर उनको पानी में मिलाकर बच्चों की खुजली को धोने के काम में लिया जाता है। छोटे नागपुर में इसकी जड़ को पीस कर उसका लेप स्तनों पर होने वाले फोड़े पर किया जाता है।

भुंइ चंपा

नाम—संस्कृत—भूचंपक, भूमिचंपा। हिन्दी—भुइचंपा। बंगाल—भुइचंपा। गुजराती—भुइचाँपा। मराठी—भुइचंपा। काठियावाड़—भूचंपक। कोकड़—भूचंपो। तेलगू—कोंडाकारवा। लेटिन—Kaempferia Rotunda (केंफेरिवा रोटुंडा)।

वर्णन—यह एक सुगंधित फूलों का क्षुप होता है। बाग-बगीचों में कई स्थानों पर यह लगाया जाता है। इसके पत्ते बड़े, हरे और कुछ बैगनी रंग के होते हैं। इसकी जड़ के बीच में गोल २ गठानें होती हैं। उन गठानों में से बहुत सी मांसल और मोटी जड़ें फूटकर उनके समान कंद बन जाते हैं। इनका स्वाद कड़वा होता है। औषधि प्रयोग में इसका कंद काम आता है।

गुण, दोष और प्रभाव—आयुर्वेदिक मत से यह वनस्पति शोथनाशक और व्रणरोपक होती है। इसके कंद का पुल्टिस बनाकर फोड़ों को पकाने के लिये उन पर बाँधा जाता है।

इसके सारे पौधे को पीस कर उसका लेप बनाकर ताजे जख्मों पर बाँधने से चमत्कारिक रूप से वे जखम भर जाते हैं। भीतरी प्रयोग करने से यह हर प्रकार के रक्त के जमाव को बिखेर देती है और शरीर के अन्दर एकत्रित क्लेद रस को भी दूर कर देती है।

इसकी जड़ सर्वाङ्गीण शोथ में लाभदायक होती है। रीवा कान्ता जिले के गजेटियर में बतलाया गया था कि इसकी जड़ें अग्निवर्धक होती हैं और सूजन पर लेप करने के काम में ली जाती हैं। सारे भारतवर्ष में यह विश्वास किया जाता है कि इसका कंद सूजन को दूर करने में बहुत उपयोगी है।

डाक्टर देसाई के मतानुसार सूजन तथा रक्तस्राव पर इसके कंद या गठानों का लेप किया जाता है। गलगंड पर इसका लेप करने से फायदा होता है। इसके पञ्चांग से सिद्ध किया हुआ तेल जखम भरने के काम में लिया जाता है। इसके कंद को थोड़ी मात्रा में पेट में देने से यह रक्त के जमाव को बिखेर देता है। भुँइचंपा, बच्छनाग

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

और कुचले के बीजों से तैयार किया हुआ लेप गलगंड, गंडमाला और हर प्रकार की नवीन सूजन पर लगाया जाता है। मुगलाइ एरंड के बीजों का तेल और भुइचंपे के कन्द से सिद्ध किया हुआ तिल का तेल हर प्रकार के जखम, फोड़े और भगंदर में काम में लिया जाता है।

भुइकंद [पहाड़ी कंद]

नाम—हिन्दी भुइकंद, पहाड़ी कंद। बम्बई—भुइकन्द, लहान रानकंद, नानो जंगली कन्द, पहाड़ी कंद। बंगाल—सुफेदी खस। लेटिन—Scilla Indica (स्किला इंडिका)।

वर्णन—यह वनस्पति कोली कन्दे की ही जाति की होती है। इसका पौधा भी कोली कन्दे की तरह होता है। इसका कन्द कोली कन्दे से कुछ छोटा होता है। यह वनस्पति विहार, मध्यभारत, छोटा नागपुर और पश्चिमी भारत में पैदा होती है।

गुण, दोष और प्रभाव—इस वनस्पति के कन्द में प्रायः वे सब तत्व मौजूद रहते हैं जो कोली कन्दे के अन्दर पाये जाते हैं। चोपरा और दे ने सन् १९२६ में इस वनस्पति का परीक्षण करके यह सिद्ध किया कि ब्रिटिश फरमाकोपिया में दर्ज अर्जीनिया स्किला (कोली कंदा) और अमेरिकन फरमाकोपिया में दर्ज अर्जीनिया मार्टिमा (कोली कन्दा) से यह वनस्पति किसी कदर कम नहीं है।

कर्नल चोपरा लिखते हैं कि—अर्जीनिया स्किला जो कि ब्रिटिश फरमाकोपिया में दर्ज है और अर्जीनिया मार्टिमा जो कि अमेरिकन फरमाकोपिया में दर्ज है, यह कोली कन्दे की दोनों जातियाँ भूमध्यसागर के तटवर्ती प्रान्तों में पैदा होती हैं और इनका बहुत बड़ी मात्रा में औषधियों के सम्बन्ध में उपयोग होता है। इसकी गठानें और उनसे तैयार की हुई औषधियां भूमध्यसागर के तटवर्ती प्रदेशों से भारतवर्ष में आती हैं और बहुत ऊँची कीमत में बिकती हैं। भारतवर्ष में भी इसकी दो जातियाँ बहुतायत से पैदा होती हैं जिनमें इग्लैंड और अमेरिका में पैदा होने वाली इन दोनों जातियों के समान ही तत्व पाये जाते हैं। इनमें से पहिली जाति स्किला इंडिका है जिसको हिन्दी में भूमिकन्द या पहाड़ी कन्द कहते हैं। यह जाति समुद्र के किनारे पर तथा दक्षिण पेनिन्शुला में कोकण से नागपुर तक और पंजाब में पैदा होती है। इसका कन्द कुछ सफेदी लिये हुए भूरे रंग का परतदार और जायफल के आकार का होता है। यह बहुत मुलायम होता है। इसका आकार गोल और कभी २ साइड से दबा हुआ रहता है।

इसकी दूसरी जाति अर्जीनिया इण्डिका रेती की मिट्टी में सारे भारतवर्ष के अन्तर और विशेष कर समुद्र के किनारे पैदा होती है। पञ्जाब के साल्टरेंज में तथा और सूखे पहाड़ों पर भी यह वनस्पति पाई जाती है। इसका आकार नीबू के बराबर और झिल्लीदार होता है। ये दोनों जातियाँ मिले हुए रूप से भारतीय बाजारों में बिकती हैं। इसका पूरा कन्द बिना कटी हुई हालत में प्रत्येक साधारण औषधि विक्रेता की दूकान पर मिल जाता है। मगर इसको बड़े पैमाने पर फाँकों के रूप में तैयार करके चिटगाँव, बम्बई और जौनपुर में बेचा जाता है। इन दोनों जातियों का समान असर होता है। अन्तर इतना ही होता है कि कोलीकन्दे के ऊपर झिल्ली रहती है और भूमिकन्द में प्याज के समान ऊपर से नीचे तक परत रहते हैं। इन दोनों जातियों के कन्द बाहर से मँगाई हुई जातियों के कन्द से कुछ छोटे होते हैं। मगर उनके समान ही ये कड़वे और वमनोत्पादक रहते हैं। इनको बाजार के लिये तैयार करते समय इस बात का खास ध्यान रखने की जरूरत है कि इनकी फाँकों को अच्छी तरह से सुखा लिया जाय, नहीं तो बाहर निकालने के समय में ये खराब हो जाती हैं और अपनी सब शक्तियों को खो बैठती हैं। इस वनस्पति के कफ निस्सारक, हृदयोत्तेजक और मूत्रल तत्वों के सम्बन्ध में बहुत दिनों से रसायनशास्त्रियों का ध्यान

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

आकर्षित हो रहा है। यद्यपि यह एक उपयोगी और प्रभावशाली औषधि है किन्तु पाकस्थली की आँतों के समूह पर इसका दाहजनक असर होने की वजह से हृदयोत्तेजन के लिये इसको अधिक मात्रा में देना सम्भव नहीं हो सकता। कुछ वर्षों से इस बात का प्रयत्न किया जा रहा है कि इसके हृदयोत्तेजक तत्वों को इसके दाहजनक तत्वों से किसी प्रकार अलग किया जा सकता है या नहीं। इस प्रयत्न में जाँच करते हुए उसमें दो तत्व अलग २ किये गये।

(१) एक स्पष्ट, शुद्ध, बिल्लौर के समान पारदर्शी ग्लुकोसाइड, जिसका नाम स्किलेरिन A (Scillaren A) रक्खा गया।

(२) एक बिना किसी विशेष आकृति का दो ग्लुकोसाइडस का संयुक्त उपादान प्राप्त हुआ जिसका नाम स्किलेरिन B रक्खा गया। इसका पिछला तत्व बहुत आसानी से पानी में घुल जाता है जब कि पहला नहीं घुलता। इन दोनों प्रकार के तत्वों का परीक्षण करने पर मालूम हुआ कि स्कैलेरिन क्रियाएं स्ट्रापेंथित के सदृश होती हैं और यह कहा जाता था कि इसके पिछले द्रव्य में यह कमी है कि वह मुँह के द्वारा नहीं खाया जा सकता। दे ने सन् १९२७ में बतलाया कि स्किलेरिन हार्ट के ऊपर डिजिटेलिस के समान ही क्रिया करता है और अन्न प्रणाली के ऊपर इसका दाहक असर बहुत कम और धीरे २ होता है और पाचन क्रिया प्रणाली के द्वारा उसका शोषण हो जाता है। स्टेहल (Stehle) रोफ्र और ड्रेअर ने सन् १९३१ में बतलाया कि स्किलेरिन बी पशुओं के अन्दर रक्त वाहिनियों पर संकोचक असर डालकर उनके ब्लडप्रेशर (रक्त के दबाव) को बढ़ाता है। यह हृदय कोष का विस्तार करके उसके ठोकों को बढ़ाता है जिससे हृदय को शक्ति मिलती है।

कई वर्षों से गवर्नमेंट मेडिकल स्टोर बम्बई के डिपो में इस वनस्पति की विदेशी जातियों के स्थान पर भारतीय जातियों का गेले निकल्स बनाने के लिये उपयोग किया गया और उनका परिणाम रोगियों के लिये बहुत ही संतोषजनक रहा। इसकी भारतीय जाति सन १९१४ में ब्रिटिश फरमाकोपिया में सम्मिलित की गई थी। देशी कोलीकन्दा अर्जीनियामार्टिमा के मुकाबले में बहुत सस्ता पड़ता है। अगर इसकी खेती और उसको संग्रह करने की पद्धति उन्नत तरीके से और बड़े परिमाण पर की जाय तो सिर्फ भारत में ही नहीं बल्कि यूरोपियन बाजारों में भी यह यूरोपियन जातियों की बहुत सफलता के साथ स्पर्धा कर सकता है। कलकत्ते के अन्दर दोनों देशी जातियों (कोलीकंद और भुइकंद) के मिश्रण से टिंक्चर्स तैयार किये जाते हैं और इस औषधि का व्यापार बड़ा विकसित हो गया है। इन वनस्पतियों के तुलनात्मक अध्ययन से और इनमें पाये जाने वाले रासायनिक तत्वों की तुलना करने से यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि बाहर से आने वाली इस वनस्पति की जातियों से भारत में पैदा होने वाली जातियाँ किसी भी प्रकार कम नहीं हैं।

(सातवाँ भाग समाप्त)

000005

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

महत्त्वपूर्ण चिकित्सोपयोगी ग्रन्थ—

अभिनन्दनग्रन्थ (श्री सत्यनारायण शास्त्री जी का) १५—००
अभिनव विकृति विज्ञान—आचार्य त्रिवेदी २२—००
अभिनव शरीर क्रिया विज्ञान—श्री प्रियव्रत शर्मा १०—००
अष्टाङ्गसंग्रहः—'अर्थप्रकाशिका' हिन्दीटीका सूत्रस्थान ८—००
अष्टाङ्गहृदयम्—सविमर्श विद्योतिनी हिन्दी व्याख्या १५—००
अष्टाङ्गहृदय—मूलमात्र ४—००
आयुर्वेद प्रदीप—डा० गंगासहाय पाण्डेय १२—००
आयुर्वेदप्रकाशः—संस्कृत-हिन्दी-व्याख्या १२—५०
आयुर्वेदविज्ञानम्—विद्योतिनी हिन्दी टीका २—००
आसवारिष्टविज्ञान—आचार्य पक्षधर झा ३—००
एलोपैथिक पाकेट प्रेस्क्राइबर—शिवनाथ खन्ना ५—००
एलोपथिक मिक्श्चर्स—डा० राजकुमार द्विवेदी २—५०
औपसर्गिक रोग—(परिवर्धित संस्करण) डा० घाणेकर
प्रथम भाग १०—०० द्वितीय भाग १२—००
काकचण्डीश्वर कल्पतन्त्रम्—हिन्दी टीका २—००
कामकुञ्जलता—ढुण्ढिराज शास्त्री २०—००
हिन्दी कामसूत्रम्—(जयमंगला टीका सहित) १६—००
कायचिकित्सा—डा० गङ्गासहाय पाण्डेय २५—००
कायचिकित्सा—श्रीरामरक्ष पाठक १-२ भाग २५—००
काश्यपसंहिता—विद्योतिनी हिन्दी टीका १६—००
कौमारभृत्य—आचार्य रघुवीरप्रसाद त्रिवेदी ८—००
क्लिनिकल पैथोलोजी—डा० शिवनाथ खन्ना १२—००
सचित्र क्रियात्मक ओषधि परिचय विज्ञान—
विश्वनाथ द्विवेदी १२—००
गदनिग्रह—हिन्दी टीका सहित १-३ भाग ६५—००
गर्भरक्षा तथा शिशु परिपालन—डा० वर्मा ४—५०
चक्रदत्त—'भावार्थसन्दीपनी' हिन्दी टीका १०—००
चरकसंहिता—'सविमर्शविद्योतिनी' हिन्दी व्याख्या ३६—००
चरक तथा काश्यप संहिता का निर्माणकाल—
रघुवीरशरण शर्मा २—००
चौखम्बा-चिकित्सा-विज्ञानकोश २०—००
द्रव्यगुणविज्ञान—श्री प्रियव्रत शर्मा १-३ भाग २३—००
त्रिदोषविज्ञानम्—उपेन्द्रनाथ दास हिन्दी टीका ४—००
नव्य-चिकित्सा-विज्ञान—डा० मुकुन्दस्वरूप वर्मा
प्रथम भाग ८—००, द्वितीय भाग ८—००
निघण्टुआदर्श—वैद्य बापालाल हिन्दी प्रथम भाग ३५—००
पञ्चभूतविज्ञानम्—उपेन्द्रनाथ दास हिन्दी टीका ४—००
पञ्चविध कषाय कल्पना विज्ञान—डा० अग्निहोत्री १—५०
परिभाषा-प्रबन्ध—पं० जगन्नाथप्रसाद शुक्ल २—५०
पेटेण्ट प्रेस्क्राइबर—डा० रमानाथ द्विवेदी १०—००
प्रसूति विज्ञान—डा० रमानाथ द्विवेदी १२—००
प्रारम्भिक उद्भिद् शास्त्र—प्रो० बलवन्त सिंह ४—५०
प्रारम्भिक भौतिकी—श्री निहालकरण सेठी ५—५०
प्रारम्भिक रसायन—प्रो० फूलदेवसहाय वर्मा ४—५०
बीसवीं शताब्दी की ओषधियाँ—डा० वर्मा ८—००
भारतीय रसपद्धति—कविराज अत्रिदेव गुप्त १—५०
भावप्रकाशः—'विद्योतिनी' हिन्दी टीका २९—००
भावप्रकाश-ज्वराधिकारः—विद्योतिनी हिन्दी टीका ५—००
भावप्रकाशनिघण्टुः—डा० गङ्गासहाय पाण्डेय १२—००
भिषक् कर्मसिद्धि—डा० रमानाथ द्विवेदी २०—००
भेलसंहिता—सटिप्पण शोधपूर्ण संस्करण १०—००
भैषज्यरत्नावली—विद्योतिनी हिन्दी व्याख्या १६—००
भैषज्यकल्पनाविज्ञान—डा० अग्निहोत्री ५—००
मर्म-विज्ञान—(सचित्र) श्री रामरक्ष पाठक ३—५०
माधवनिदान—सर्वाङ्गसुन्दरी हिन्दी टीका ४—..
माधवनिदानम्—'मधुकोष' संस्कृत टीका तथा 'विद्योतिनी'
हिन्दी व्याख्या, विमर्श सहित १४—००
माधवनिदानम्—मधुकोष मनोरमा सं० हिं० व्याख्या य...
यकृत के रोग और उनकी चिकित्सा
योग-चिकित्सा—अत्रिदेव गुप्त ...
योगरत्नाकर—मूलमात्र ६—००
योगरत्नाकर—विद्योतिनी हिन्दी टीका २०—००
रसकौमुदी—हिन्दी टीका सहित १—५०
रसचिकित्सा—कविराज प्रभाकर चट्टोपाध्याय ६—००
रसरत्नसमुच्चयः—सुरलोज्वला हिन्दी टीका १२—००
रसरत्नसमुच्चय—मूलमात्र ३—००, ३—७५
रसादि परिज्ञान—पं० जगन्नाथप्रसाद शुक्ल २—५०
रसार्णवं नाम रसतन्त्रम्—भागीरथी टिप्पणी सहित ३—००
रसेन्द्रसारसंग्रहः—रसचन्द्रिका हिन्दी टीका ७—००
रसेन्द्रसारसंग्रहः—'गूढार्थसंदीपिका' संस्कृत व्याख्या ५—००
राजमार्तण्ड—हिन्दी टीका सहित २—५०
रोगनामावली कोष—वैद्य दलजीत सिंह ३—५०
रोग परिचय—डा० शिवनाथ खन्ना १५—००
रोगि-परीक्षा विधि—श्री प्रियव्रत शर्मा ६—००
रोगी परीक्षा—डा० शिवनाथ खन्ना ७—००
रोगी-रोगविमर्श—डा० रमानाथ द्विवेदी २—००
लोहसर्वस्व—हिन्दी टीका सहित २—००
वनौषधि चन्द्रोदय—(विशाल निघण्टु ग्रन्थ)
१-१० भाग। प्रत्येक भाग ५—००, संपूर्ण ४०—००
वाग्भटविवेचन—प्रियव्रत शर्मा २०—००
विषविज्ञान और अगदतन्त्र—रमानाथ द्विवेदी २—००
वैद्यक परिभाषाप्रदीप—प्रदीपिका हिन्दी टीका १—५०
वैद्यकीय सुभाषितावली—डा० प्राणजीवन मेहता २—००
वैद्यकीयसुभाषितसाहित्यम्—डा० घाणेकर २५—००
व्यवहारायुर्वेद-विषविज्ञान-अगदतन्त्र—डा० द्विवेदी ५—००
शल्यप्रदीपिका। मुकुन्दस्वरूप वर्मा १५—००
शार्ङ्गधरसंहिता—सुबोधिनी हिन्दी टीका ५—००
शालाक्यतन्त्र—डा० रमानाथ द्विवेदी १०—००
सचित्र-इन्जेक्शन—डा० शिवनाथ खन्ना ११—००
सामान्य रोगों की रोकथाम—डा० प्रियकुमार चौबे ३—५०
सिद्धभेषज संग्रह—डा० गङ्गासहाय पाण्डेय ७—००
सिद्धान्तनिदान। गणनाथ सेन। १-२ भाग १४—००
सुश्रुतसंहिता—आयुर्वेदतत्त्वसंदीपिका हिन्दी टीका २४—००
सुश्रुत-शारीर स्थान—'प्रभा'-'दर्पण' हिन्दी व्याख्या ४—००
सूचीवेध विज्ञान—डा० राजकुमार द्विवेदी २—५०
सौश्रुती—डा० रमानाथ द्विवेदी १०—००
स्त्रीरोग-विज्ञान—डा० रमानाथ द्विवेदी ३—५०
स्वास्थ्यविज्ञान—डा० घाणेकर ९—००
स्वास्थ्यसंहिता—हिन्दी टीका, नानकचन्द वैद्य २—५०
स्वास्थ्यशिक्षापाठावली—डा० घाणेकर ३—५०
हिन्दी प्रत्यक्षशारीर—गणनाथ सेन १-२ भाग २५—००

प्राप्तिस्थान—चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, पो० बा० ८, वाराणसी-१

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

LIMITED, NEW DELHI

DEBI

of .... 20.......

Vr. No.	PARTICULARS	G. L. Folio	S. L. Folio	CASH Rs.	CASH P.	TOTAL Rs.	F

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection

In Public Domain. Digitization by eGangotri and Sarayu Trust

Bharatiya Vidya Bhavan, New Delhi Collection